

इकाई-1— रेकी चिकित्सा का इतिहास एवं अवधारणा

- 1.1 — प्रस्तावना
- 1.2 — उद्देश्य
- 1.3 — रेकी चिकित्सा का इतिहास
- 1.4 — रेकी चिकित्सा की अवधारणा
- 1.5 — सारांश
- 1.6 — शब्दावली
- 1.7 — अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 1.8 — सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
- 1.9 — सहायक उपयोगी पाठ्यसामग्री
- 1.10 — निबंधात्मक प्रश्न

1.1 – प्रस्तावना—

प्रिय पाठकों इससे पूर्व की ईकाइयों में आपने अनेक प्रकार की पूरक चिकित्साओं का अध्ययन किया है। अतः आप उनकी प्रयोग विधि एवं उपयोगिता से भली भाँति परिचित हो गये होंगे। प्रस्तुत ईकाई में पूरक चिकित्सा के इसी क्रम को आगे बढ़ाते हुये हम रेकी चिकित्सा के अध्ययन पर प्रकाश डालेंगे, जिससे रेकी का इतिहास एवं अवधारणा प्रमुख रूप से हमारे अध्ययन की विषय वस्तु होगी।

जिज्ञासु पाठकगणों, जैसा कि हम सभी इस तथ्य से सुपरिचित हैं कि भारत को सम्पूर्ण विश्व के आध्यात्मिक गुरु के रूप में माना जाता है और प्राण विद्या हमारी इस ऋषिभूमि भारत में प्राचीनकाल से ही प्रचलित रही है। आध्यात्मिक ज्ञान के आधार हमारे वेदों, उपनिषदों, पुराणों आदि में इससे सम्बद्ध अनेक कथानक पढ़ने को मिलते हैं। योग की अनेकों ऐसी गोपनीय विधियाँ हैं, जिनके माध्यम से साधक ब्रह्माण्डीय प्राण ऊर्जा से अपना सम्पर्क स्थापित कर सकता है और स्वयं को प्रचण्ड प्राणवान् बना सकता है। प्राण चिकित्सा में व्यक्ति पहले स्वयं विश्वव्यापी प्राण को ग्रहण करता है और उसके बाद इच्छित व्यक्ति में इसे सम्प्रेषित किया जाता है। यह इच्छित व्यक्ति चाहे पास हो या दूर। दोनों की स्थितियों में प्राणशक्ति को आसानी से प्रक्षेपित किया जा सकता है। प्रिय पाठकों वर्तमान समय में प्राण चिकित्सा की यह विद्या 'रेकी' के नाम से प्रचलित है, जिसका अर्थ है—'विश्वव्यापी जीवनीशक्ति'। यह जीवनीशक्ति इस सृष्टि के कण-कण में विद्यमान है, जिसके ठीक ढंग से नियोजन एवं सम्प्रेषण के माध्यम से विभिन्न रोगों को दूर करके स्वास्थ्य को उन्नत बनाया जा सकता है। रेकी का उपयोग जहाँ एक ओर बीमारियों को दूर करने के लिये किया जाता है, वहीं दूसरी ओर सामान्य रूप से स्वस्थजन भी इसके माध्यम से अपने स्वास्थ्य को संवर्द्धन कर सकते हैं। पाठकों, रेकी के बारे में अधिक जानने से पहले इसके इतिहास के बारे में थोड़ा परिचय प्रस्तुत किया जा रहा है, जिससे आप रेकी की अवधारणा को और अधिक स्पष्ट कर सकेंगे।

1.2 – उद्देश्य—

प्रिय पाठकगणों, प्रस्तुत ईकाई का अध्ययन करने के बाद आप—

- (i) रेकी के इतिहास को स्पष्ट कर सकेंगे।

(ii) रेकी के अर्थ का वर्णन कर सकेंगे।

(iii) वर्तमान समय में रेकी की उपयोगिता का विश्लेषण कर सकेंगे।

1.3 – रेकी चिकित्सा का इतिहास—

प्रिय पाठको, आपकी जानकारी के लिये बता दें कि रेकी चिकित्सा को पुनर्जीवित करने का श्रेय जापान के डॉ. मेकाओ उशुई को हैं, जिन्होंने 19वीं शताब्दी के मध्य में इस चिकित्सा को नवजीवन प्रदान किया। डॉ. उशुई ने कैसे रेकी का पुनरुत्थान किया इससे संबंधित एक घटना है, जिसका विवरण निम्नानुसार है—

डॉ. उशुई जापान के ईसाई कॉलेज में डीन के पद पर कार्यरत थे। एक दिन एक विद्यार्थी ने उनसे प्रश्न किया कि जिस प्रकार ईसामसीह किसी रोगी को स्पर्श मात्र से रोगमुक्त कर देते थे, वर्तमान समय में ऐसा क्यों नहीं होता है? उनके द्वारा उपयोग में ली गई उपचार की तकनीकों को प्रयोग आज हम कर पाने में असमर्थ क्यों हैं? क्या आप (डॉ. उशुई) वैसा करने में सक्षम हैं? डॉ. उशुई के अन्तर्मन को यहा छू गई। वे उस समय विद्यार्थी के उस प्रश्न का कोई जवाब नहीं दे सके। इसलिए जापान के नियम के अनुसार उन्होंने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया और यह संकल्प किया कि जब तक वे उस विद्यार्थी द्वारा पूछे गये प्रश्न का सटीक उत्तर प्राप्त नहीं कर लेंगे तब तक ईसाई मत के गहन अध्ययन में लगे रहेंगे।

डॉ. उशुई अपनी इस अनुसंधन यात्रा में अमेरिका के शिकागों शहर में पहुँचे और वहाँ पर उन्होंने आत्मविद्या या अध्यात्मविद्या में डॉक्ट्रेट की उपाधि ग्रहण की। डॉ. उशुई ने अनेक ईसाई एवं चीनी धर्मग्रन्थों का अध्ययन किया किन्तु फिर भी उन्हें अपने प्रश्न का संतोषजनक उत्तर नहीं मिला, किन्तु इससे डॉ. उशुई निराश नहीं हुये, वरन इसके बाद वे उत्तर भारत आयें और उन्होंने संस्कृत ग्रंथों का अध्ययन किया। इन संस्कृत ग्रन्थों में उन्हें कुछ संकेत प्राप्त हुये।

इसके बाद वे पुनः जापान आ गये और उन्होंने बौद्ध ग्रन्थ के सूत्रों में संस्कृत के प्रतीकों एवं सूत्रों की खोज करना प्रारंभ किया। इन सूत्रों में उन्हें अपने प्रश्नों के समाधान नजर आ रहे थे। इस दौरान डॉ. उशुई जापान के क्योटो के मठ में रह रहे थे। बौद्ध भिक्षु से वार्तालाप करने के बाद वे अपने शहर से 16 मील की दूरी पर स्थित कुरियामा नामक पहाड़ी पर चले गये और यहाँ 21 दिनों तक इन्होंने एकान्त में कठोर तपस्या की इस साधना का उद्देश्य ब्रह्माण्डीय उर्जा के साथ सम्पर्क स्थापित करना था। डॉ. उशुई ने सूत्रों एवं प्रतीकों के रहस्य का पता करने के लिये संस्कृत के प्रतीकों एवं सूत्रों को लिख भी रखा था। 21 दिनों का उपवास रखकर डॉ. उशुई अपनी कठोर तपसाधना में लीन हो गये और वे सतत् उन संस्कृत के मंत्रों का जप भी करते रहे। डॉ. उशुई ने पर्वत की चोटी पर पहुँचने के बाद अपने पास छोटे-छोटे 21 पत्थर के टुकड़ों को रखा। प्रिय पाठको, आपके मन में जिज्ञासा उत्पन्न हो रही होगी कि इन पत्थर के टुकड़ों को रखने के पीछे क्या उद्देश्य था। इसका प्रयोजन यह था कि जैसे-जैसे साधना का एक दिन पूरा हो जाता था वैसे-वैसे डॉ. उशुई एक-एक पत्थर फेंक देते थे। साधना के 20 दिन बीत गये और 21 वे दिन की सुबह तक भी डॉ. उशुई को अपनी साधना का अपेक्षित परिणाम नहीं मिला किन्तु अभी सुरज पूरी तरह नहीं निकला था और रात्रि का अंधेरा था। इसी समय डॉ. उशुई को एक तीव्र प्रकाश पुंज अत्यन्त तीव्रगति से अपनी ओर आता हुआ दिखायी दिया और उन्होंने भागने का प्रयास किया किन्तु किसी कारण वश वे रुक गये। पाठकों,

आपको बता दें कि जैसे-जैसे यह प्रकाश पुंज डॉ. उशुई की ओर बढ़ रहा था, वैसे-वैसे उसका आकार और अधिक बढ़ता ही जा रहा था और अन्ततः वह प्रकाश समूह डॉ. उशुई के माथे के मध्य में (भूमध्य या आज्ञाचक्र का स्थान) टकराया। यह प्रकाश पुंज त्रिनेत्र चक्र था। प्रकाश पुंज के टकराने से डॉ. उशुई को ऐसा लगा की अब तो मौत की घड़ी आ गई है और इसके बाद अचानक एक तेज विस्फोट के साथ उन्हें आकाश में नीले, गुलाबी इत्यादि अनेक रंगों वाले असंख्य चमकीले दिखायी दिये और अत्यन्त बड़े आकार में उन्हें श्वेत प्रकाश दिखायी दिया और देखते ही देखते उनकी दृष्टि के समक्ष एक चमकीला स्वर्णिम प्रतीक आकार लेने लगा, जो संस्कृत ग्रन्थ, में दिया गया था और अपनी साधना के समय जिसका वे नियमित जप करते थे। उस प्रतीक को देखकर डॉ. उशुई ने अत्यन्त धीमे श्वर में कहा—“हाँ मुझे याद है” इसके बाद वे बेहोश हो गये। यही से उन्हें ब्रह्माण्डीय प्राण उर्जा के उपयोग की विधि का ज्ञान प्राप्त हुआ, जिसे ‘रेगी’ का नाम दिया गया।

तो जिज्ञासु पाठकों, अब आप जान गये होंगे कि रेकी विद्या का जन्म किस प्रकार हुआ। पाठकों, जब डॉ. उशुई होश में आये तो सूर्योदय हो चुका था। आप को यह जानकर आश्चर्य हो सकता है कि 21 दिनों के उपवास के बाद भी डॉ. उशुई अपने भीतर किसी प्रकार की कमजोरी महसूस नहीं कर रहे थे, वरन् उन्हें स्वयं के भीतर पहले से कहीं अधिक उर्जा एवं स्फूर्ति का अहसास हो रहा था।

साधना पूरी करने के बाद डॉ. उशुई जब पहाड़ी से नीचे उतर रहे थे तो उनके पैर के अंगूठे में चोट लग गई और रक्त बहने लगा। इसलिये उन्होंने अपने हथेली से अंगूठे को ढक दिया और जैसे ही उन्होंने हथेली रखी खून बहना एकदम से रुक गया और दर्द भी दूर हो गया। यह देखकर डॉ. उशुई को अत्यन्त आश्चर्य और खुशी हुयी। वे यह अनुभव कर चुके थे कि यह उसी विश्वव्यापी प्राण उर्जा का प्रभाव है। यह रेकी का पहला उपचारात्मक प्रयोग था।

लम्बे समय तक उपवास के कारण डॉ. उशुई को कड़ी भुख लगी थी। इसलिये वे भोजन हेतु एक धर्मशाला में गये। धर्मशाला के मालिक ने डॉ. उशुई की वेशभूषा को देखकर यह अनुमान लगा लिया कि इन्होंने लम्बे समय तक उपवास किया है। अतः उन्होंने उपवास के बाद हल्का नाश्ता लेने की सलाह दी किन्तु डॉ. उशुई ने भरपेट भोजन किया और इससे उन्हें किसी प्रकार की परेशानी नहीं हुयी। पाठकों, यह बस प्रचण्ड जीवनीशक्ति का ही कमाल था। इस प्रकार ये रेकी का दूसरा चमत्कारिक प्रभाव था।

प्रिय विद्यार्थियों, रेकी का तीसरा प्रयोग धर्मशाला के मालिक की पौत्री पर किया गया। उसके दांतों में लम्बे समय से दर्द एवं सूजन थी। जैसे ही डॉ. उशुई ने उसके गाल को स्पर्श किया वैसे ही दर्द के साथ सूजन भी दूर हो गयी। यह रेकी की तीसरी उपचार प्रक्रिया थी।

पाठकों, इसके बाद जब डॉ. उशुई अपने मठ में वापस आये तो उनका मित्र जो बौद्ध भिक्षुक था, वह गठिया रोग से पीड़ित था डॉ. उशुई ने उसके पास बैठकर अपने दोनों हाथ अपने मित्र के शरीर पर रख दिये। ऐसा करने पर उनके मित्रा को अत्यन्त आराम महसूस हुआ और कुछ ही समय में वह स्वस्थ हो गया। इस प्रकार डॉ. उशुई निरन्तर इस रेकी विद्या का प्रयोग करके असंख्य लोगों को ठीक करते गये।

इसके उपरान्त डॉ. उशुई क्योटो शहर के स्लम क्षेत्र के भिक्षुगृह में गये और उन्होंने भिखारियों की सेवा करने का निर्णय लिया। उस भिक्षुगृह में सात दिन तक रहकर उन्होंने उनके रोगों का उपचार किया। उपचार के दौरान डॉ. उशुई ने देखा कि वही

जाने-पहचाने लोग बार-बार उनके पास क्यों आते हैं? कारण पूछने पर उन्हें भिखारियों ने जवाब दिया कि गृहस्थ आश्रम में रहकर जीवन व्यतीत करने से कहीं अधिक अच्छा भीख माँगना है।

यह बात सुनकर डॉ. उशुई को अत्यन्त दुःख हुआ और उन्हें लगा कि रेकी के कुछ नियम एवं सिद्धान्त बनाना भी अनिवार्य है। अतः उन्होंने रेकी के नियमों एवं प्रयोगों को विधिवत्-विकसित किया।

प्रिय विद्यार्थियों, इसके बाद जब डॉ. उशुई भिक्षुगृह से क्योटो वापस आ गये और एक दिन एक बहुत बड़ी मशाल जलाकर गली के अन्दर खड़े हो गये। पाठकों, आप जानना चाह रहे होंगे कि डॉ. उशुई ने ऐसा क्यों किया होगा। आपके समान ही यह जिज्ञासा राहगीरों को भी हुयी और उन्होंने डॉ. उशुई से जब इसका कारण पूछा तो उन्होंने कहा कि “मुझे ऐसे लोगों की खोज है, जो वास्तव में सत्य का प्रकाश प्राप्त करना चाहते हैं।” उनके कहने का आशय था कि जो वास्तव में उस विश्वव्यापी प्राण उर्जा से अपना सम्पर्क स्थापित करना चाहते हैं, ऐसे लोग मुझे चाहिये। इस प्रकार डॉ. उशुई ने रेकी के प्रचार के लिये अपना सर्वस्व समर्पित कर दिया और इसे विश्वव्यापी बनाया और अपने शिष्यों को इसका विधिवत् प्रशिक्षण भी प्रदान किया।

कुछ समय पश्चात् डॉ. उशुई ने देह का त्याग कर दिया। उनकी पार्थिव देह को क्योटो के मंदिर में दफन किया गया। पाठकों, आपके जानकारी के लिये बता दें कि उनकी कब्र पर जो पत्थर लगे हुये हैं, उन पर डॉ. उशुई की सम्पूर्ण जीवन गाथा को खोदा गया है। डॉ. उशुई कितने अधिक सम्मानित एवं प्रसिद्ध हो चुके थे, इस बात का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि स्वयं जापान के सम्राट ने उनकी कब्र पर जाकर अपने श्रद्धासुमन अर्पित किये थे।

प्रिय पाठको, डॉ. उशुई के शरीर छोड़ने के बाद डॉ. हयाशी जो उनके नजदीकी सहयोगी थे, वे उत्तराधिकारी बने। इस प्रकार ये दूसरे रेकी ग्रैंड मास्टर कहलाये। डॉ. हयाशी सन् 1940 तक टोकियो में सुचारु रूप से रेकी क्लिनिक का संचालन करते रहें, जहाँ पर सामान्य रोगियों के साथ-साथ गंभीर रोगों का इलाज भी किया जाता है। जब कोई व्यक्ति गंभीर रोग से ग्रसित होता था तो दिन-रात रेकी द्वारा उसका इलाज होता था किन्तु धीरे-धीरे द्वितीय विश्वयुद्ध के प्रभाव के कारण एवं 10 मई 1941 में डॉ. हयाशी की मृत्यु के कारण इस क्षेत्र में आगे विकास की प्रक्रिया थम सी गई।

पाठकों, डॉ. हयाशी की मृत्यु के उपरान्त श्रीमती हवायों उनकी उत्तराधिकारिणी बनी जिनका जन्म सन् 1900 में हवाई द्वीप पर हुआ था। इनके माता-पिता जापान के थे, लेकिन फिर भी उन्हें अमेरिका की नागरिकता प्राप्त थी। श्रीमती टकाटा विधवा थी एवं दो बच्चों की माँ भी, साथ ही वह अनेक गंभीर रोगों से पीड़ित थी। बीमारी के दौरान श्रीमती टकाटा को आन्तरिक प्रेरणा मिली कि उन्हें जापान में अपना उपचार करवाना चाहिये।

इसी अन्तः प्रेरणा से प्रेरित होकर वे जापान पहुँची। उपचार के दौरान जब वह ऑपरेशन के लिये टेबल पर लेटी हुयी थी तो उन्होंने महसूस किया कि एकमात्र ऑपरेशन ही रोगों का इलाज नहीं है। इसलिये उनका ऑपरेशन करवाना उतना आवश्यक नहीं है। इसलिये उन्होंने ऑपरेशन के अतिरिक्त अन्य चिकित्सा पद्धतियों के बारे में डॉक्टर से विचार-विमर्श किया। डॉक्टरों ने उन्हें डॉ. हयाशी के रेकी क्लिनिक के बारे में बताया और उपचार के लिये वहाँ जाने का सुझाव दिया। श्रीमती टकाटा रेकी क्लिनिक पहुँची, जहाँ पर

दो रेकी चिकित्सक प्रतिदिन उनका रेकी द्वारा इलाज करते थे। नियमित रेकी चिकित्सा के द्वारा वे कुछ महीने में ही पूरी तरह स्वस्थ हो गई।

पाठकों, श्रीमती टकाटा जापान में डॉ. हयाशी की लगभग 1 वर्ष तक शिष्या रही। इसके बाद वह पुनः अपने बच्चों के साथ हवाई द्वीप वापस आ गई। सन् 1938 में डॉ. हयाशी हवाई द्वीप आये और उन्होंने श्रीमती टकाटा को रेकी मास्टर रूप में घोषित कर दिया। श्रीमती टकाटा ने हवाई में रहकर अनेक लोगों का रेकी विधि के माध्यम से इलाज किया। जब श्रीमती टकाटा अपनी उम्र के सातवें दशक में थी, तब उन्होंने रेकी मास्टर बनाना प्रारंभ कर दिया था। 11 दिसम्बर सन् 1980 में श्रीमती टकाटा की भी मृत्यु हो गई। श्रीमती टकाटा के पीछे कनाडा तथा अमेरिका में कुल मिलाकर 22 रेकी ग्रैंड मास्टर थे। प्रिय विद्यार्थियों, आज पूरे विश्व में लगभग 4 हजार रेकी मास्टर हैं, जो रेकी के माध्यम से लोगों का उपचार करके इस विद्या के प्रचार-प्रसार में अपना योगदान दे रहे हैं।

इस प्रकार पाठकों, उपर्युक्त विवेचन के आधार पर आप समझ गये होंगे कि, किस प्रकार रेकी विद्या का जन्म एवं विकास हुआ।

अभ्यासार्थ प्रश्न—

(खण्ड—क)

सत्य/असत्य

1. रेकी विद्या को पुनर्जीवित करने का श्रेय डॉ. हयाशी को है। (सत्य/ असत्य)
2. डॉ. उशुई ने 21 दिनों तक कठिन तपस्या की थी। (सत्य/ असत्य)
3. डॉ. हयाशी की मृत्यु सन् 1980 में हुयी थी। (सत्य/ असत्य)
4. डॉ. उशुई तपस्या के लिये कुरीचामा पर्वत पर गये थे। (सत्य/ असत्य)
5. डॉ. उशुई के बाद श्रीमती टकाटा उनकी उत्तराधिकारिणी बनी। (सत्य / असत्य)

अभ्यासार्थ प्रश्न—

(खण्ड—ख)

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

- (1) डॉ. उशुई का संबंध है—

(A) अमेरिका से (B) लन्दन से

(C) जापान से (D) चीन से

- (2) डॉ. उशुई ने दिनों तक तपस्या की—

(A) 20 दिनों तक (B) 31 दिनों तक

(C) 15 दिनों तक (D) इनमें से कोई नहीं

- (3) श्रीमती हवाचो टकाटा का जन्म हुआ था—

(A) जापान में (B) हवाई द्वीप में

(C) भारत में (D) इनमें से कोई नहीं

1.4 रेकी चिकित्सा की अवधारणा—

प्रिय विद्यार्थियों, रेकी के इतिहास को जानने के बाद आपके मन में स्वाभाविक रूप से रेकी के अर्थ के विषय में विस्तार से जानने की इच्छा उत्पन्न हो रही होगी। तो आइये, जाने कि क्या है यह रेकी विद्या, जिसकी उपयोगिता को आज समूचा विश्व स्वीकार कर रहा है।

पाठकों 'रेकी' शब्द मूलतः जापानी है, जो 'रे' (REI) तथा 'की' (KI) इन दो शब्दों से मिलकर बना है। जापानी भाषा के अनुसार रे का अर्थ है—सार्वभौमिक या विश्वव्यापी अथवा ब्रह्माण्डव्यापी अर्थात्— जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में या सभी जगह विद्यमान हो

तथा 'की' से तात्पर्य है—उर्जा या शक्ति। इस प्रकार रेकी का अर्थ है— विश्वव्यापी ऊर्जा या सार्वभौमिक शक्ति। भिन्न-भिन्न देशों में इस जीवनीशक्ति को भिन्न-भिन्न नामों से पुकारते हैं। भारतीय इसे 'प्राण' के रूप में जानते हैं तो चीनी भाषा में इसी को 'ची' नाम से पुकारते हैं, मुस्लिम देशों में इसी उर्जा को बर्क एवं रूसी विद्वान इसे बायोप्लाज्मिक उर्जा का नाम देते हैं। कहने का आशय यह है कि उर्जा या शक्ति मौलिक रूप से एक ही है, जिसके नाम अलग-अलग हैं।

प्रिय पाठकों, क्या आप जानते हैं कि रेकी इस सृष्टि के कण-कण में अर्थात् चेतन के साथ-साथ जड़ पदार्थों में भी विद्यमान है। इसी कारण इसे सार्वभौमिक कहा गया है। यह विश्वव्यापी उर्जा अनादि तथा अनन्त है। यह कभी भी नष्ट न होने वाली अपरिमित उर्जा है। विभिन्न प्रयोगों के आधार पर यह सिद्ध हो चुका है कि उर्जा कभी भी नष्ट नहीं होती है, वरन् उसका रूपान्तरण होता है अर्थात् वह एक रूप से दूसरे रूप में बदल जाती है। जैसा कि आप जानते भी होंगे नोबल पुरस्कार से सम्मानित डॉ. अल्बर्ट आइन्सटाइन ने एक समीकरण दिया, जिसके अनुसार निरन्तर उर्जा का पदार्थ में और पदार्थ का उर्जा में रूपान्तरण होता रहता है।

पाठको, प्राचीन काल से ही उपचार की विभिन्न तकनीकें इस ब्रह्माण्डव्यापी जीवनशक्ति के स्थानान्तरण या प्रक्षेपण पर आधारित रही हैं। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के जीवन एवं पोषण के कारण इस जीवनीशक्ति का सदियों तक उपचार में प्रयोग किया जाता रहा और आज भी जारी है। प्रिय विद्यार्थियों, महात्मा बुद्ध, सन्त ईसा, स्वामी विवेकानन्द एवं अन्य आध्यात्मिक गुरुओं एवं महात्माओं से हम भली-भाँति परिचित हैं, जिनके दिव्य स्पर्श मात्र से प्राणी स्वयं में नवजीवन का संचार अनुभव करते थे। यह सब इसी प्राण ऊर्जा के प्रभाव को परिलक्षित करते हैं। जो व्यक्ति जितना अधिक प्राणवान् या जीवनीशक्ति से भरपूर होता है, वह उतना ही अधिक शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और आध्यात्मिक स्तर पर स्वस्थ होता है। साहस, तेजस्विता, आत्मबल, स्फूर्ति, एकाग्रता, आत्मीयता इत्यादि गुण सहज ही उसमें विकसित होते हैं।

पाठकों क्या आपने कभी सोचा है कि रात्रि में ठीक प्रकार से नींद आने के बाद जब हम सुबह उठते हैं तो क्यों स्वयं को तरोताजा महसूस करते हैं। देखिये, इसका कारण यह है कि दिन-भर कार्य करने के कारण हमारा शरीर एवं चेतन मन रात्रि में विश्राम करता है अर्थात्— सो जाता है किन्तु हमारा अचेतन मन निद्रा की अवस्था में भी कार्य करता है और ब्रह्माण्ड से इतनी उर्जा ग्रहण कर लेता है जिससे शरीर की टूट-फूट की मरम्मत हो सके और आवश्यक कार्यों के लिये वह ऊर्जा शरीर में संचित हो सके। कहने का आशय यह है कि उर्जा ही हमारे जीवन का आधार है। इसी से हमारी समस्त गतिविधियाँ संचालित होती हैं। हम स्वयं भी इस ऊर्जा से ही बने हैं। हमारा स्थूल या भौतिक शरीर और कुछ भी नहीं वरन् घनीभूत उर्जा ही है।

इस स्थूल शरीर के अतिरिक्त हमारा एक 'उर्जा शरीर' भी होता है, जिसे रूस के विद्वानों ने 'बायोप्लाज्मिक बॉडी' कहा है। हम सामान्य आँखों से इस उर्जा शरीर को नहीं देख सकते। ध्यान की उच्च अवस्था में इसे देखा जा सकता है। वर्तमान समय में किर्लीचन फोटोग्राफी के माध्यम से भी इस ऊर्जा शरीर को देखना संभव है।

रेकी हमारे उर्जा शरीर से जिसे आभामण्डल (ऑरा) भी कहा जाता है, भौतिक शरीर में प्रवेश करती है। उर्जा शरीर में विद्यमान चक्र एवं नाड़ियाँ इस प्राण उर्जा को ग्रहण करते हैं तथा वहाँ से यह भौतिक शरीर के विभिन्न अंगों तक पहुँचती हैं।

योग-दर्शन के अनुसार हमारे शरीर में 72,000 नाड़ियाँ पायी जाती हैं, जिनमें प्राण का प्रवाह होता रहता है। एक्यूपंकचर एवं एक्यूपेशर में इन्हीं नाड़ियों को मेरीडियन्स का नाम दिया गया है। इन नाड़ियों में जब तक प्राण का सुचारु प्रवाह होता रहता है तब तक व्यक्ति स्वस्थ रहता है और जैसे ही प्राण प्रवाह में अवरोध आता है, वैसे ही प्राण ऊर्जा के असंतुलन के कारण व्यक्ति रोगग्रस्त हो जाता है क्योंकि प्राण ऊर्जा कहीं कम और कहीं ज्यादा हो जाती है। अवरोध से पहले नाड़ी में प्राण ऊर्जा का घनत्व अधिक हो जाता है और अवरोध के बाद कम। इस प्रकार रोग या बीमारी ऊर्जा शरीर में पहले आती है और बाद में स्थूल या भौतिक शरीर में। अतः यदि ऊर्जा शरीर में प्राण के अवरोध का किसी तरीके से पता लगा लिया जाये तो स्थूल शरीर को रोगग्रस्त होने से बचाया जा सकता है। रेकी के द्वारा इसी प्राण ऊर्जा का संतुलन किया जाता है। शरीर के जिस भाग में जितनी ऊर्जा की आवश्यकता होती है, उतनी ऊर्जा वहाँ तक स्थानांतरित की जाती है। पाठकों, आपकी जानकारी के लिये बता दें कि रेकी की अपनी चेतना एवं बुद्धि होती है। इसका आशय यह है कि उसे यह ज्ञात होता है कि आपके किस चक्र नाड़ी एवं उनसे प्रभावित अंगों में ऊर्जा कम है। अतः वह स्वतः उसी ओर प्रवाहित होना शुरू कर देती है और जब अपेक्षित ऊर्जा पहुँच जाती है, तो स्वतः उसका प्रवाह रुक भी जाता है। रेकी मास्टर रेकी का केवल माध्यम होता है और वह स्वयं की ऊर्जा नहीं वरन् ब्रह्माण्डीय ऊर्जा को प्रक्षेपित करने का चैनल बनता है। अतः रेकी को घटाना या बढ़ाना रेकी चिकित्सक के बस की बात नहीं है वरन् रेकी स्वयं चेतनायुक्त होने के कारण ऊर्जा का संतुलन कर व्यक्ति को स्वस्थ बनाती है।

प्रिय पाठकों, रेकी के सन्दर्भ में आपको यह तथ्य भी भली-भाँति जान लेना चाहिये कि यह न तो कोई सम्मोहन विद्या है, न ही कोई तांत्रिक शक्ति, न ही किसी सम्प्रदाय से इसका कोई संबंध है, वरन् यह तो एक पवित्र जीवनशैली है, जिसके अपने नियम एवं सिद्धान्त हैं, जिनको अपनाकर हम न केवल रोगों से मुक्त होते हैं, वरन् अपना मानसिक, भावनात्मक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक विकास भी कर सकते हैं।

“प्रेम के समान ‘रेकी’ भी एक अहसास है। प्रेम ही ऐसी शक्ति है जो हमें इस पूरी सृष्टि के साथ एकात्मभाव से मिलाती है। प्रेम में ही आत्मा का मूल वास होता है। व्यापक अर्थों में ‘रेकी’ चिकित्सा पद्धति है। इससे शरीर के विकारों का ही इलाज नहीं किया जाता बल्कि आध्यात्मिक विकास भी होता है। ‘रेकी’ चिकित्सा पद्धति का धर्म, भूत-प्रेत, रहस्य विद्या, तंत्र-मंत्र से कोई वास्ता नहीं है। न ही यह सम्मोहन विद्या है और न ही कोई अन्य मनोवैज्ञानिक तकनीक। (मोहन मक्कड़, रेकीविद्या, 2004)

“रेकी मन एवं इच्छा शक्ति से निर्देशित शक्ति है, जिसे प्यार भरे दिल, सहानुभूति भरे इरादों और पूरे मनोयोग से प्रेषित किया जाये तो हमेशा अपने उद्देश्य में सफलता मिलती है। रेकी सिर्फ एक चिकित्सा पद्धति ही नहीं है, पूरा जीवन दर्शन है, इसके अपने सिद्धान्त हैं, जिनका पालन कर आप अपने जीवन में अपने इच्छित उद्देश्य प्राप्त कर सकते हैं, चाहे फिर वह आरोग्य, सफलता, आपसी संबंधों की मधुरता, व्यापार वृद्धि ही क्यों न हों”

(डॉ. देवेन्द्र जैन, रेकी से चिकित्सा कैसे करे?, 2005)

“रेकी दो जापानी शब्दों, रे और की से मिलकर बना है। रे का मतलब है यूनिवर्सल या सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त और की का अर्थ है-शक्ति या ऊर्जा। रेकी एक स्वयं चेतनायुक्त शक्ति है, जो जड़ एवं चेतन दोनों में मौजूद है।”

(डॉ. देवेन्द्र जैन, रेकी से चिकित्सा कैसे करे?, 2005)

“रेकी शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है ‘रे’ (REI) तथा ‘की’ (KI)। रे शब्द का अर्थ—‘सार्वभौम’, ‘ब्रह्माण्ड’, तथा की शब्द का अर्थ— ऊर्जा है।”

(मोहन मक्कड़, रेकी विद्या, 2004)

“ रेकी मूलतः जापानी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है—सार्वभौमिक जैव उर्जा अथवा सर्वव्यापी जीवनशक्ति। यह जैवशक्ति सृष्टि के सभी जीवधारियों में सक्रिय होती है और विद्यमान रहती है।”

(डॉ. आर. एस. ‘विवेक’, वैकल्पिक चिकित्सा, 2004)

“रेकी एक जापानी शब्द है, जिसका अर्थ है— जीवन उर्जा। यह वैकल्पिक चिकित्सा की एक प्राकृतिक प्रक्रिया है।”

(डॉ. राजकुमार प्रुथी, वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियाँ, 2005)

“ रेकी हमें स्वास्थ्य से परे पूर्णता की ओर, पवित्रता की ओर ले जाती है। यह वास्तव में पवित्रतावादी उपचार विधि है। रेकी उपचार हमारे असीम उपचारों को विलीन कर देता है और हमें स्व के सभी पक्षों के स्वीकार की दिशा में अग्रसर करता है। यह रूपान्तरण की वह अवस्था है, जिसमें हम अपने स्व तथा स्व परिवेश के साथ सामंजस्य एवं संतुलन साध लेते हैं।”

(डॉ. आर. एस. ‘विवेक’, वैकल्पिक चिकित्सा, 2004)

पाठकों, आप सोच रहे होंगे कि हम किस तरह इस रेकी विद्या से लाभान्वित हो सकते हैं? इसके निम्न दो तरीकों में से आप किसी को भी अपना सकते हैं—

(1) स्वयं रेकी चिकित्सक के पास उपचार के लिये जाना।

(2) रेकी विद्या का विधिवत् अध्ययन करके

आइये इन दोनों उपायों पर विस्तार से प्रकार डालते हैं—

(1) स्वयं रेकी चिकित्सक के पास उपचार के लिए जाना —

प्रिय विद्यार्थियों, रेकी विद्या से लाभान्वित होने का प्रथम उपाय यह है कि जो व्यक्ति रेकी मास्टर अर्थात् रेकी के विशेषज्ञ हों, जिन्होंने विधिवत् इस विद्या का प्रशिक्षण प्राप्त किया है, आप उनके पास उपचार के लिये जा सकते हैं। रेकी लेने के उपरान्त व्यक्ति काफी राहत महसूस करता है।

(2) रेकी विद्या का विधिवत् अध्ययन करके—

दूसरा उपाय यह है कि जो व्यक्ति इस विद्या में विशेष रुचि रखते हैं वे रेकी से संबंधित विभिन्न पाठ्यक्रमों में सम्मिलित होकर इसका विधिवत् प्रशिक्षण प्राप्त कर सकते हैं। जब तक इस विद्या का विधिवत् प्रशिक्षण प्राप्त नहीं किया जाता, तब तक व्यक्ति रेकी मास्टर नहीं बन सकता।

प्रिय विद्यार्थियों उपर्युक्त विवरण के आधार पर आप समझ गये होंगे कि हम किस तरह इस रेकी विद्या का अपने जीवन में उपयोग कर सकते हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न—

(खण्ड—ग)

- (1) रेकी मूलतः चीनी शब्द है। (सत्य/असत्य)
- (2) रेकी में रे का अर्थ प्राण या उर्जा है। (सत्य/असत्य)
- (3) किर्लियन फोटोग्राफी से आभामण्डल को देखना संभव है। (सत्य/असत्य)
- (4) चीन में की को ची कहा जाता है। (सत्य/असत्य)
- (5) ऊर्जा केवल चेतन में ही पायी जाती है। (सत्य/असत्य)

(6) ऊर्जा का पदार्थ में और पदार्थ का ऊर्जा में रूपान्तरण होता है। (सत्य/असत्य)

(अभ्यासार्थ प्रश्न— खण्ड—घ)

(1) भारत में ऊर्जा को जाना जाता है—

(A) की के रूप में (B) ची के रूप में

(C) प्राण के रूप में (D) उपर्युक्त सभी

(2) ऊर्जा 'का' पदार्थ में और पदार्थ का ऊर्जा में रूपान्तरण होता है, इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया—

(A) जेम्स वॉट द्वारा (B) अल्बर्ट आइन्सटाइन द्वारा

(C) डॉ. मेकाओ उशुई द्वारा (D) डॉ. हयाशी द्वारा

(3) रेकी शब्द में 'रे' का अर्थ है—

(A) सार्वभौमिक (B) विश्वव्यापी

(C) उर्जा (D) A एवं B दोनों

(4) योग दर्शन के अनुसार हमारे शरीर में नाड़ियों की संख्या है—

(A) 75,000 (B) 72,000

(C) 70,000 (D) 73,000

(5) ब्रह्माण्डीय उर्जा को ग्रहण करने के माध्यम हैं—

(A) चक्र (B) नाड़ियाँ

(C) A एवं B दोनों (D) स्थूल शरीर या भौतिक शरीर

(6) प्राणी के आभामण्डल को कहा जाता है—

(A) भौतिक शरीर (B) उर्जा शरीर

(C) बायोप्लाज्मिक बॉडी (D) B एवं C दोनों

1.5 सारांश

रेकी (जापानी शब्द) रेकी विश्वव्यापी / ब्रह्माण्डव्यापी / सार्वभौमिक

ऊर्जा / शक्ति / प्राण / ची / जीवनीशक्ति

अर्थात्— ब्रह्माण्डीय या विश्वव्यापी उर्जा अथवा शक्ति।

प्रिय पाठको, उपरोक्त विवरण से आप समझ गये होंगे कि इस सृष्टि के कण-कण में जो ऊर्जा विद्यमान है, उसे ही विद्वानों द्वारा रेकी का नाम दिया गया है। यह ऊर्जा ब्रह्माण्ड के प्रत्येक जड़ पदार्थ एवं चेतन में मौजूद है। हाँ इस उर्जा के स्तर प्रत्येक पदार्थ एवं प्राणी में भिन्न-भिन्न होते हैं, जिसके कारण कोई व्यक्ति अधिक स्फूर्तिवान, उत्साहयुक्त साहसी दिखाई देता है तो कोई निर्जीव के समान कान्तिहीन। हम सभी प्राणियों तथा जड़ पदार्थों के अस्तित्व का कारण यही रेकी या जीवन ऊर्जा है। इसी से हमारी समस्त शारीरिक, मानसिक इत्यादि गतिविधियों का संचालन होता है। जब तक यह ऊर्जा हमसे संयुक्त है, केवल तब तक हम भौतिक शरीर को धारण करते हैं। इस प्राण या ऊर्जा के कारण ही हम प्राण कहलाते हैं और जैसे ही यह उर्जा हमसे पृथक होती है वैसे ही हम मृत्यु की गोद में समा जाते हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि रेकी ही हमारे जीवन का आधार है। इस रेकी या ऊर्जा में असंतुलन के कारण व्यक्ति रोगग्रस्त हो जाता है। अतः रेकी विद्या प्राण का संतुलन करके समग्र स्वास्थ्य प्रदान करती है तथा साथ ही व्यक्ति के आध्यात्मिक विकास में भी सहायक बनती है। क्योंकि यह हमें एक सुव्यवस्थित अनुशासित

जीवनशैली की ओर अग्रसर करती है। इस महान विद्या के पुनरुद्धार का श्रेय जापान के डॉ. मेकाओ उशुई को है, जिन्होंने स्वयं कठिन तप साधना द्वारा इसे पुनर्जीवित किया। रेकी में उपचार के उपकरण के रूप में हाथों का प्रयोग किया जाता है।

1.6 पारिभाषिक शब्दावली—

रेकी — विश्वव्यापी ऊर्जा या शक्ति

सार्वभौमिक — जो सभी स्थानों पर एवं प्रत्येक चेतन एवं जड़ पदार्थ में विद्यमान हो।

प्रक्षेपित करना — किसी वस्तु, विचार, भाप या ऊर्जा को दूसरी वस्तु या प्राणी में आरोपित करना।

नाड़ियाँ — ऊर्जा के माध्यम, जिनमें प्राण या ऊर्जा प्रवाहित होती है।

चक्र— ऊर्जा शरीर में नाड़ियों के गुच्छों के रूप में पाये जाने वाले विशिष्ट केन्द्र जो ब्रह्माण्डीय ऊर्जा को ग्रहण करते हैं।

ची— चीन में प्राण ऊर्जा के लिये प्रयुक्त होने वाला शब्द।

किर्लियन फोटोग्राफी — वह फोटोग्राफी जिससे किसी प्राणी के आभामण्डल को देखा जा सकता है। अमेरिका में इसका आविस्कार हुआ।

1.7 (अभ्यास प्रश्नों के उत्तर)

(खण्ड—क)

(सत्य/असत्य)

(1) असत्य

(2) सत्य

(3) असत्य

(4) सत्य

(5) असत्य

(खण्ड—ख)

(वस्तुनिष्ठ प्रश्न)

(1) C

(2) D

(3) B

(खण्ड—ग)

(सत्य/असत्य)

(1) असत्य

(2) असत्य

(3) सत्य

(4) सत्य

(5) असत्य

(6) सत्य

(खण्ड—घ)

(वस्तुनिष्ठ प्रश्न)

(1) C

- (2) B
- (3) D
- (4) B
- (5) C
- (6) D

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची—

- (1) विवेक, आर. एस. (2004), वैकल्पिक चिकित्सा / डायमंड पॉकेट बुक्स, नई दिल्ली।
- (2) पृथी, राजकुमार (2005), वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियाँ / प्रभात पेपरबैक्स, 4/19 आसफ अली रोड, नयी दिल्ली।

1.9 सहायक उपयोगी पाठ्यसामग्री —

- (1) शर्मा, राजीव (2000), वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियाँ और रोगोपचार / वी. जैन पब्लिशर्स लिमिटेड, 1921/10, चूना मण्डी, पहाड़गंज, नई दिल्ली।

1.10 निबंधात्मक प्रश्न

प्रश्न-1 रेकी की अवधारण को स्पष्ट करते हुये इसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालिये।

इकाई-2— रेकी चिकित्सा के नियम एवं विधि

- 2.1 प्रस्तावना
- 2.2 उद्देश्य
- 2.3 रेकी चिकित्सा के नियम से क्या आशय है?
- 2.4 रेकी चिकित्सा के पाँच नियम
- 2.5 सारांश
- 2.6 शब्दावली
- 2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
- 2.9 सहायक उपयोगी पाठ्यसामग्री
- 2.10 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना—

प्रिय विद्यार्थियों, इससे पूर्व की ईकाई में आप रेकी चिकित्सा के इतिहास एवं अवधारणा का अध्ययन कर चुके हैं। प्रस्तुत ईकाई में हम रेकी के नियमों का अध्ययन करेंगे।

प्रिय पाठकों, आप जानते हैं कि चिकित्सा की चाहे कोई भी पद्धति हो, उसके कुछ न कुछ नियम जरूर होते हैं, क्योंकि नियमों पर आधारित होने तथा उनके समुचित पालन से ही वह पद्धति प्रभावी रूप से कार्य करती है। अतः आधुनिक युग में रेकी चिकित्सा के जनक डॉ. मेकाओं उशुई ने भी रेकी चिकित्सा के लिये पाँच सिद्धान्तों का निर्धारण किया, जिनका पालन करना प्रत्येक रेकी चिकित्सक के लिये अनिवार्य है। इन पंचसिद्धान्तों को ही रेकी के पाँच नियम कहा जाता है।

तो आइये, विस्तारपूर्वक चर्चा करते हैं रेकी के इन नियमों के बारे में।

2.2 उद्देश्य—

प्रिय पाठको, प्रस्तुत ईकाई का अध्ययन करने के बाद आप—

- (1) रेकी के नियमों को स्पष्ट कर सकेंगे।
- (2) रेकी चिकित्सा के नियम पालन की उपयोगिता का वर्णन कर सकेंगे।

2.3 रेकी चिकित्सा के नियम के क्या आशय है?—

प्रिय विद्यार्थियों, अब तक आप यह जान ही गये होंगे कि किसी भी प्रकार की समस्या, चाहे वह शारीरिक स्तर की हो, मानसिक या भावनात्मक स्तर की, अथवा सामाजिक या आध्यात्मिक स्तर की, प्रत्येक का मूल कारण नकारात्मक दृष्टिकोण ही होता है। नकारात्मकता के आश्रय में ही प्रत्येक समस्या जन्म लेती है और फलती-फूलती है।

प्रिय पाठको, आपके मन में जिज्ञासा उत्पन्न हो रही होगी कि आखिर ऐसा होता किस प्रकार से है। देखिये, आप जानते हैं कि प्रत्येक कार्य को करने के लिये उर्जा की आवश्यकता होती है, चाहे वह शरीर से किया जाने वाला कार्य हों अथवा मन से। इसलिये जब व्यक्ति लगातार नकारात्मक सोचता है तो उसके शरीर में विद्यमान उर्जा खर्च होती जाती है और नकारात्मकता के कारण उसका विश्वव्यापी प्राणशक्ति (रेकी) से सम्पर्क टूट जाता है। इस सम्पर्क के टूटने से प्राणउर्जा के प्रवेश के सभी मार्ग बन्द हो जाते हैं और

व्यक्ति विभिन्न प्रकार के रोगों और समस्याओं से ग्रस्त हो जाता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि नकारात्मक प्रवृत्ति सभी समस्याओं का मूल है।

विद्यार्थियों, एक रेकी चिकित्सक के लिये यह अनिवार्य है कि उसमें प्राण उर्जा का प्रवाह नियमित बना रहे, क्योंकि प्राणशक्ति के समुचित प्रवाह के बिना रेकी देना संभव नहीं है। अतः रेकी चिकित्सक में प्राण प्रवाह सतत् बना रहे, इसके लिये डॉ. मेकाओं उशुई ने रेकी चिकित्सक के लिये पाँच अनुशासन सुनिश्चित किये जिनका पालन करना अनिवार्य है, क्योंकि ये अनुशासन या सिद्धान्त रेकी चिकित्सक में सकारात्मक दृष्टि कोण का विकास करके उसे नकारात्मकता एवं संकीर्ण भावनाओं से दूर रखते हैं। इन पाँच सिद्धान्तों को ही रेकी के नियम के नाम से जाना जाता है।

2.4 रेकी चिकित्सा के पांच नियम—

प्रिय विद्यार्थियों, जब आप रेकी के नियमों का अध्ययन करेंगे तो आप पायेंगे कि इन नियमों का निर्धारण करते समय डॉ. मेकाओ उशुई इस मान्यता पर बल दिया है कि हम भविष्य की चिन्ता को त्याग कर अपनी जिन्दगी को सिर्फ एक दिन की ही मानें, जो दिन आज हमारे पास है। इससे हम व्यर्थ की चिन्ताओं और दुःखद भविष्य की कल्पनाओं से मुक्त होकर वर्तमान में जीना सीख सकते हैं और अपने वर्तमान के क्षणों का अधिकतम उपयोग करने के लिये प्रेरित होते हैं। हमारा आज ही हमारे आने वाले कल का निर्धारण करता है अर्थात् हमारा वर्तमान ही हमारा भविष्य बनता है। आज हमारे द्वारा जो भी कर्म किये जा रहे हैं, भविष्य में हमें उन्हीं कर्मों का फल मिलता है। अतः यदि हम अपने एक दिन को, 24 घंटों को प्रतिपल सद्चिन्तन एवं सत्कर्म में व्यतीत करते हैं, तो सुनिश्चित रूप से हमारा भविष्य भी अत्यन्त उज्ज्वल होगा।

अतः रेकी के इन नियमों का पालन करने से व्यक्ति नकारात्मकता से दूर रहकर सार्वभौमिक प्राण उर्जा के अपने जीवन में आने के सभी मार्ग खोल देता है और सुखद भविष्य की ओर अग्रसर होता है।

पाठकों, रेकी के ये पांच नियम निम्न हैं—

- (i) केवल आज मैं क्रोध नहीं करूँगा/करूँगी।
- (ii) केवल आज मैं चिन्ता नहीं करूँगा/करूँगी।
- (iii) केवल आज मैं उस परम सत्ता का आभार व्यक्त करूँगा/करूँगी।
- (iv) केवल आज मैं अपना काम ईमानदारी से करूँगा/करूँगी।
- (v) केवल आज मैं सब प्राणियों से प्रेम एवं उनका सम्मान करूँगा/करूँगी।

(i) केवल आज मैं क्रोध नहीं करूँगा/करूँगी— प्रिय पाठकों, रेकी का प्रथम नियम जो डॉ. उशुई ने दिया वह यह है कि प्रत्येक रेकी चिकित्सक को प्रतिदिन यह संकल्प लेना चाहिये कि केवल आज मैं क्रोध नहीं करूँगा। विद्यार्थियों, आप सभी जानते हैं कि क्रोध एक ऐसा मनोविकार है, जो व्यक्ति के विवेक को क्षीण या नष्ट कर देता है। क्रोधित होने पर व्यक्ति सही एवं गलत का, हानि—लाभ का, उचित—अनुचित का ठीक—ठीक निर्णय नहीं कर पाता है तथा उससे अनेक ऐसे कार्य हो जाते हैं, जिनके लिये उसे जिन्दगी भर पछताना

पड़ता है। इसलिये कहा गया है कि क्रोध का प्रारंभ मूर्खता से एवं अन्त पश्चाताप पर होता है। गीता में भगवान् कृष्ण, अर्जुन से कहते हैं “कामात् क्रोधो जायते” (गीता) अर्थात् “कामनाओं या इच्छाओं की पूर्ति न होने से क्रोध उत्पन्न होता है।”

पाठकों, दैनिक जीवन में हम सभी प्रायः इस बात को अनुभव करते हैं कि जब हमारी इच्छा के अनुसार कोई कार्य नहीं होता है, हमें मनोवांछित सफलता की प्राप्ति नहीं होती है, तब हम क्रोधित हो जाते हैं और विवेक नष्ट होने के कारण गलत कार्य कर बैठते हैं। यह नहीं समझने का प्रयास करते हैं कि आखिर वह कामना या इच्छा पूरी क्यों नहीं हो पायी? क्या हमने जो इच्छा की थी, उसका उद्देश्य अच्छा था अर्थात् क्या हमने सद्भाव से प्रेरित होकर किसी आदर्श लक्ष्य की प्राप्ति हेतु वह कामना की थी और यदि इच्छा का लक्ष्य अच्छा भी था तो उसकी पूर्ति के लिये समुचित योजना का निर्माण करके यथोचित परिश्रम किया था या नहीं? क्या उस सद्इच्छा की पूर्ति के लिये कभी भगवान से यह प्रार्थना की थी कि आपके हाथों का यंत्रा बनकर हम उस कार्य को, इच्छा को पूरा कर सकें, वरन इन सब बातों की उपेक्षा करके कभी तो स्वयं पर गुस्सा निकालते हैं, और कभी दूसरों पर। दोनों ही स्थितियों में हानि हमारी ही होती है। हमारी ही ऊर्जा का क्षरण होता है, लोगों के साथ हमारे संबंध खराब हो जाते हैं, संबंधों में पहले जैसी आत्मीयता एवं माधुर्य भाव नहीं रहता और नकारात्मकता के कारण दैवीय ऊर्जा से सम्पर्क टूट जाने के कारण हम स्वयं को शारीरिक—मानसिक, आध्यात्मिक रूप से अत्यन्त कमजोर महसूस करते हैं। इसलिये रेकी चिकित्सक के लिये पहला अनिवार्य नियम यह बनाया गया कि वह क्रोध न करने का दृढ़ संकल्प अपने मन में ले और हर कीमत पर अपने इस संकल्प को पूरा करें, क्योंकि संकल्प कहते ही उसे है, जिसका कोई विकल्प नहीं होता अर्थात् जिसे हर कीमत पर, हर परिस्थिति में पूरा करना होता है।

मनोवैज्ञानिकों ने भी इस तथ्य को स्वीकार किया है कि क्रोध की स्थिति में हमारे तंत्रिका तंत्रा एवं अन्तःस्त्रावी तंत्रा में महत्वपूर्ण परिवर्तन होते हैं। अनुकंपी तंत्रिका तंत्रा की क्रियाशीलता में वृद्धि होने से व्यक्ति स्वयं में अत्यधिक उत्तेजना का अनुभव करता है, जिससे उसकी श्वास एवं नाड़ी की गति बढ़ जाती है, रक्तचाप बढ़ने लगता है, जो अनेक शारीरिक रोगों का कारण बनते हैं।

प्रिय पाठको, हम सभी मनुष्य हैं और इस कारण सकारात्मक एवं नकारात्मक, सुखद—दुःखद दोनों ही प्रकार के भाव हमारे मन में उत्पन्न होना स्वाभाविक है, किन्तु फिर भी हमें यथा संभव बुरी आदतों, बुरे विचारों से दूर रहने का सतत—प्रयास करना चाहिये, जिससे कि वे बुराईया हमको प्रभावित ना कर सकें, क्योंकि इन दुर्भावों से किसी का भी हित नहीं हो सकता और एक रेकी चिकित्सक के लिये तो यह और भी अधिक महत्वपूर्ण है। क्योंकि वह रेकी का माध्यम है। अतः प्राणऊर्जा का समुचित प्रवाह उसके भीतर होता रहे, यह अति आवश्यक है। यदि चिकित्सक स्वयं ही नकारात्मकता से ग्रस्त है तो वह एक अच्छा चिकित्सक बिलकुल भी नहीं हो सकता क्योंकि उसके भीतर प्राण ऊर्जा का सुचारु रूप से प्रवाह ही नहीं होगा।

पाठकों, अब प्रश्न यह उठता है कि कैसे इस क्रोधाग्नि को शांत किया जाये अर्थात्—क्रोध आने पर अथवा अनुचित कारण से क्रोध आये ही नहीं, इसके लिये क्या—क्या उपाय किये जा सकते हैं? नीचे कुछ ऐसी तकनीकें बतायी जा रही हैं, जिनको अपनाकर हम अपने क्रोध पर काफी हद तक नियंत्रण पा सकते हैं—
क्रोधित होने पर क्या करना चाहिये?

(A) श्वास-प्रश्वास के प्रति सजगता

(B) उल्टी गिनती गिनना

(C) क्रोध उत्पन्न करने वाली परिस्थिति या व्यक्ति से कुछ क्षण के लिये अलग हो जाना।

(D) क्षमाशीलता

(E) भूलने का गुण विकसित करना

(F) दूसरों के दृष्टिकोण को समझने का प्रयास

(G) अहंकार के भाव को हटाना

(H) जीवन के सिद्धान्तों को समझने का प्रयास

पाठकों, इनका विस्तृत विवरण निम्नानुसार है—

(A) श्वास-प्रश्वास के प्रति सजगता— पाठकों, क्रोध को शांत करने का सबसे अच्छा उपाय है कि जब भी क्रोध आये तो व्यक्ति को लम्बी-धीमी गति से श्वास लेना और छोड़ना प्रारंभ कर देना चाहिये और मन ही मन अपनी आती-जाती श्वास को देखना चाहिये। आपने महसूस किया होगा कि जब भी व्यक्ति क्रोधित होता है तो उसकी साँस की गति भी तेज हो जाती है, क्योंकि साँस का हमारे मनोभावों से गहरा संबंध है। मन के अस्थिर होने पर श्वास-प्रश्वास भी अस्थिर होने लगती है। अतः श्वास-प्रश्वास को दीर्घ बना कर हम मन को भी एकाग्र कर सकते हैं।

आप इसके आश्चर्यजनक परिणामों को स्वयं अनुभव कर सकते हैं। जैसे ही साँस लम्बी-धीमी होती है, वैसे ही व्यक्ति का गुस्सा भी शांत होने लगता है।

“आपको क्रोध हमेशा श्वासों के रथ पर सवार हो आता है—तेजी से आती-जाती श्वासों पर। जब कभी क्रोध आये, आप अपनी श्वासों पर ध्यान केन्द्रित करें। श्वास को मन्द और मन्थर गति से लें, धीमी और गहरी। आप पायेंगे क्रोधाग्नि क्षणिक तौर पर ही भड़की और फिर तिरोहित हो गई।”

(डॉ. देवेन्द्र जैन, रेकी से चिकित्सा कैसे करें?)

(B) उल्टी गिनती गिनना— क्रोध शांत करने का दूसरा तरीका यह है कि क्रोध आने पर मन ही मन 50 से एक तक उल्टी गिनती गिनना प्रारंभ कर देना चाहिये और यह संकल्प लेना चाहिये कि जब तक गिनती पूरी नहीं होगी तबतक मुँह से एक शब्द भी नहीं बोलेंगे।

आप देखेंगे कि किसी प्रकार से आपका ध्यान क्रोध वाली परिस्थिति या व्यक्ति से हटकर स्वयं पर केन्द्रित होने लगता है और मन शांत होने लगता है।

(C) क्रोध उत्पन्न करने वाली परिस्थिति या व्यक्ति से कुछ क्षण के लिये अलग हो जाना— क्रोध से बचने का एक अत्यन्त सरल उपाय यह है कि कुछ क्षण के लिये उस परिस्थिति से दूर चले जाना या उस व्यक्ति से अलग हो जाना जिसके कारण क्रोध उत्पन्न हो रहा है, क्योंकि किसी भी घटना के घटित होने में तीन कारक महत्वपूर्ण होते हैं—व्यक्ति, मनःस्थिति, परिस्थिति यदि इन तीनों में से एक भी कारक उपस्थित नहीं होगा, तो घटना नहीं घटित होगी।

“अगर आपको नाराज करने और क्रोध दिलाने की परिस्थितियाँ फिर भी बराबर बनी रहती है तो उस वातावरण उस स्थान से थोड़े समय के लिये बाहर चले जायें।”

(डॉ. देवेन्द्र जैन, रेकी से चिकित्सा कैसे करें?)

(D) क्षमाशीलता— पाठकों, क्रोध को दूर करने के लिये हमारे भीतर क्षमाशीलता का गुण होना अति आवश्यक है। हमें इस बात को समझने का प्रयास करना चाहिये कि हम सभी मनुष्य हैं और इस कारण हम सभी में कुछ न कुछ कमियाँ भी हैं। कोई भी इंसान अपने आप में सम्पूर्ण नहीं है। इसलिये हम सभी से गलतियाँ होना स्वाभाविक है। यदि आज किसी दूसरे व्यक्ति से कोई गलती हुयी है तो कल हमसे भी हो सकती है। इसलिये गलती होने पर हमें दूसरों को क्षमा कर देना चाहिये। उसे अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न नहीं बनाना चाहिये। जैसे कि सन्त ईसा मसीह ने उन्हें सूली पर चढ़ाने वालों के लिये भी भगवान से उन्हें क्षमा करने की प्रार्थना की थी— “ हे प्रभु! इन्हें माफ कर देना, क्योंकि ये नहीं जानते कि ये क्या कर रहे हैं।”

(E) भूलने का गुण विकसित करना— विद्यार्थियों, क्षमाशीलता के साथ-साथ व्यक्ति को स्वयं में भूलने का गुण भी विकसित करना चाहिये। अब आप सोच रहे होंगे कि किन बातों या व्यक्तियों अथवा परिस्थिति को भूलने की बात यहाँ पर की जा रही है। देखिये, हम सभी जानते हैं कि स्मृति के नाम से भगवान ने एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मानसिक क्षमता हम सभी को प्रदान की है, किन्तु क्या आप जानते हैं कि याद रखना हमारे लिये जितना महत्त्वपूर्ण है, उतना ही अधिक आवश्यक दुःखद घटनाओं को भूलना भी है, क्योंकि जब तक हम इन घटनाओं को याद रखते हैं, तब तक ये हमारे मन को अत्यधिक दुःखी करती हैं। इसलिये क्रोध को शांत करने के लिये भी यह अत्यन्त आवश्यक है कि हम उन व्यक्तियों के उस व्यवहार को, उन घटनाओं को भूलने को प्रयास करें, जो हमारे भीतर क्रोध उत्पन्न करते हैं, क्योंकि भूलने पर ही हम दूसरों को क्षमा कर पायेंगे।

(F) दूसरों के दृष्टिकोण को समझने का प्रयास— पाठकों, वर्तमान समय में लोगों का दृष्टिकोण ऐसा हो गया है कि प्रत्येक व्यक्ति को यह शिकायत होती है कि दूसरे लोग उसे समझने का प्रयास नहीं करते। अतः क्रोध से बचने के लिये हमें दूसरे व्यक्तियों की परिस्थिति एवं मजबूरी को भी समझने का प्रयास करना चाहिये। यह कोई आवश्यक नहीं है कि उस व्यक्ति ने जानबूझ कर आपका काम ना किया है। किसी पर भी क्रोध करने से पहले हमें शांत एवं संयमित होकर पहले यह पूछना चाहिये कि आखिर किस कारण से वह समय पर कार्य को पूरा नहीं कर पाया। हो सकता है कि उसकी कुछ ऐसी विवशता रही हो, जिसके कारण वह काम नहीं कर सका। जैसे हमारी मजबूरियाँ होती हैं और बहुत बार हम भी समय पर किसी कार्य को पूरा नहीं कर पाते हैं। वैसे ही हमें सामने वाले व्यक्ति की स्थिति को समझने का प्रयास करके अपने क्रोध पर नियंत्रण रखना चाहिये। ऐसा करने से जहाँ एक ओर हम अनुचित क्रोध करने से बच जाते हैं, वहीं दूसरी ओर उन लोगों में भी हमारे प्रति सम्मान एवं आत्मीयता का भाव विकसित होता है।

“ दूसरे की समस्या, उसके दृष्टिकोण के प्रति समझ और सहिष्णुता पैदा करने का प्रयास किजिए। इससे आप उनके प्रिय हो जायें और वे आपके लिये अपनी सीमा और समय से आगे जाकर कार्य करना चाहेंगे, उन्हें आपकी नाराजगी की भी परवाह होगी, क्योंकि वो जानते हैं कि आपके दिल में उनके लिये भी प्यार, समझ और सम्मान की भावना है। क्रोध आपको अपनी वो सीमा लांघ जाने को बाध्य कर देता है, जिसकी आपके अपनों को भी उम्मीद नहीं होती।”

(डॉ. देवेन्द्र जैन, रेकी से चिकित्सा कैसे करें?)

(G) अहंकार के भाव को घटाना— प्रायः अहंकारी व्यक्ति अधिक क्रोधित होता है, क्योंकि वह प्रत्येक व्यक्ति, परिस्थिति को अपनी इच्छा से संचालित करना चाहता है और प्रत्येक दृष्टि से स्वयं को बड़ा एवं ऊँचा मानता है और दूसरों को हीन दृष्टि से देखता है। इसलिये जब कोई कार्य उसकी इच्छानुसार पूरा नहीं होता है, तो वह उसे अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाकर दूसरे व्यक्तियों पर गुस्सा निकालने लगता है।

अतः क्रोध को शांत करने के लिये अति आवश्यक है कि व्यक्ति अहंकार से दूर रहे। अहंकार हमारे व्यक्तित्व के विकास में बहुत बड़ा बाधक तत्व है।

पाठकों, उपरोक्त उपायों के अध्ययन से आप समझ गये होंगे कि क्रोध न केवल रेकी चिकित्सक के लिये वरन् एक साधारण इंसान के लिये भी कितना घातक है। अतः हमें विभिन्न उपायों को आवश्यकतानुसार एवं अपनी क्षमतानुसार अपनाकर यथा संभव इस पर नियंत्रण का प्रयास करना चाहिये।

(ii) केवल आज मैं चिन्ता नहीं करूँगा/करूँगी— प्रिय विद्यार्थियों, डॉ. मेकाओ उशुई ने रेकी चिकित्सा का दूसरा नियम प्रतिपादित किया कि प्रत्येक रेकी चिकित्सक को इस बात का संकल्पपूर्वक पालन करना है कि केवल आज मैं चिन्ता का त्याग कर दूँगा किसी भी कारण से अपने मन को चिन्ताग्रस्त नहीं होने दूँगा।

प्रिय पाठको, क्या आप जानते हैं कि यह चिन्ता वास्तव में है क्या? मनोवैज्ञानिकों के अनुसार चिन्ता एक दुःखद संवेगात्मक स्थिति है, जिसमें व्यक्ति अपने भविष्य के बारे में अनेक प्रकार की दुःखद कल्पनाएँ करके आशंकित एवं भयभीत रहता है।

पाठकों, यदि हम शरीर विज्ञान की दृष्टि से देखें तो ज्ञात होता है कि अनुकंपी तंत्रिकातंत्र के लगातार सक्रिय रहने के कारण चिन्ता की स्थिति उत्पन्न होती है।

प्रिय विद्यार्थियों, किसी भी कारण से लगातार चिन्तित रहने की प्रवृत्ति व्यक्ति के लिये अत्यन्त घातक सिद्ध होती है। इसलिये कहा भी गया है— “चिन्ता दधति निर्जीव”, चिन्ता दहति जीवितम्॥ अर्थात्— चिन्ता तो मृत व्यक्ति को जलाती है, किन्तु चिन्ता जीवित व्यक्ति को ही जला देती है।”

कहने का आशय यह है कि जिस प्रकार चिन्ता में जलकर मृत शरीर भस्म हो जाता है, उसी प्रकार चिन्ता भी व्यक्ति को मृतप्राय बना देती है और इसका दुस्प्रभाव चिन्ता से भी अधिक घातक होता है, क्योंकि यह मृत नहीं वरन् जीवित शरीर को पीड़ा प्रदान करती है।

“चिन्ता करने का अर्थ यह है कि हम उस दिव्यशक्ति या सार्वभौमिक सत्ता को भूल जाते हैं। यदि हम वास्तव में अपने भीतर विद्यमान परमसत्ता के दिशा निर्देशन के अनुकूल रहते हैं तथा प्रतिदिन अपनी सर्वोत्तम योग्यता के साथ जीते हैं, तो हम इस तथ्य से अवगत हो जाते हैं कि हमने अपनी सामर्थ्य के अनुसार कार्य किया है। शेष उस सार्वभौमिक जीवनसत्ता पर छोड़ दिया है। चिन्ता ऐसा विचार पैटर्न है, जो ‘सार्वभौमिक जीवनशक्ति’ की चेतना से पृथक् होने का परिणाम है।”

(मोहन मक्कड़, रेकी विद्या)

प्रिय पाठको, वास्तव में यदि देखा जाये तो चिन्ता का मूल कारण व्यक्ति का नकारात्मक दृष्टिकोण ही होता है, जिसके कारण वह उन-उन परिस्थितियों की कल्पना तक कर लेता है जो प्रायः घटित ही नहीं होती है। इसलिये व्यक्ति को व्यर्थ की चिन्ता छोड़कर अपने वर्तमान का अधिकतम सदुपयोग करना चाहिये। यदि वर्तमान का समुचित सार्थक उपयोग किया जाता है, तो भविष्य तो स्वतः ही संवर जाता है क्योंकि हमारा आज ही आने वाला कल है। कहा भी गया है—

“ मृत कल और अभी तक पैदा नहीं हुये कल की फिक्र छोड़कर वर्तमान की फिक्र कीजिए, भविष्य खुद अपनी फिक्र कर लेगा। संवर जायेगा अपने आप।” भविष्य जो आया ही नहीं उसकी चिन्ता में, रहकर वर्तमान को खोना है। जो बीत गया उसमें भी अब कुछ किया नहीं जा सकता। उसकी चिन्ता भी व्यर्थ है। अतः वर्तमान को सुधारना है।”
(कल्याण, आरोग्य अंक)

चिन्ता होने पर क्या करना चाहिये—

प्रिय विद्यार्थियों, वैसे तो प्रत्येक व्यक्ति को, प्रयास करना चाहिये कि वह अपनी चिन्ता करने की आदत से छुटकारा पा सके। जब कभी चिन्ता सताने लगे तो निम्न उपायों के द्वारा चिन्ता को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

- (A) ईश्वर के प्रति श्रद्धा
- (B) स्वयं को भगवान् का अंश मानना
- (C) प्रार्थना
- (D) स्वाध्याय
- (E) वर्तमान में जीना
- (F) अपनी वर्तमान क्षमता का समुचित उपयोग
- (G) स्वयं को व्याप्त रखना
- (H) अतीत का पश्चाताप न करना
- (I) दुःखद भविष्य की कल्पना न करना
- (J) प्राणायाम
- (K) डायरी लेखन
- (L) सत्संगति

उपरोक्त उपायों का विस्तृत विवेचन निम्नानुसार है—

(A) ईश्वर के प्रति श्रद्धा— प्रिय पाठको, चिन्ता को दूर करने का सर्वाधिक प्रभावी एवं आसान उपाय है— ईश्वर के प्रति अगाध श्रद्धा एवं समर्पण का भाव। मन में यह अटूट विश्वास कि इस सृष्टि में प्रत्येक कार्य भगवान की इच्छा से होता है। इसलिये हमारे जीवन में जो कुछ भी घटित होगा, वह भी ईश्वरीय निर्देशानुसार ही होगा और ईश्वर का प्रत्येक विधान मंगलमय होता है। इसलिये चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

यदि हमें अपने कर्मानुसार किसी प्रतिकूल परिस्थिति का भी सामना करना पड़े तो भी चिन्ता नहीं करनी चाहिये क्योंकि हर समस्या अपने साथ समाधान लेकर भी आती है। इस संसार में ऐसी कोई समस्या नहीं है, जिसका समाधान न हो।

इस प्रकार स्पष्ट है कि ईश्वर के प्रति अगाध श्रद्धा का भाव हमें सदैव चिन्तामुक्त रखता है।

(B) स्वयं को भगवान का अंश मानना— जिज्ञासु विद्यार्थियों, जैसा कि आप जान चुके हैं, चिन्ता का मूल कारण नकारात्मक चिन्तन है और इस नकारात्मकता का मूल कारण है स्वयं को शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक दृष्टि से उस परिस्थिति का मुकाबला करने में असमर्थ महसूस करना, जिसका सामना हमें करना है। अतः असमर्थता के इस नकारात्मक भाव से मुक्ति के लिये यह आवश्यक है कि हम स्वयं को हांड-मॉस का ढाँचा ना समझकर आत्मा के रूप में भगवान का अंश माने और यह महसूस करें कि ईश्वरीय

अंश होने के कारण हमारे भीतर भी अपार क्षमतायें छिपी हुयी है। आवश्यकता उनको जगाने की है, उन्हें बाहरी जीवन में अभिव्यक्त करने की है, जिससे हमारे भीतर निर्बलता का भाव न आये, लेकिन इसके साथ ही हमें यह ध्यान रखना चाहिये कि हम अहंकार के भाव से ग्रसित न हो जायें।

(C) **प्रार्थना**— प्रिय विद्यार्थियों, ऐसा माना जाता है कि जब व्यक्ति अत्यधिक दुःखी होता है तो स्वतः ही प्रार्थना के स्वर फूट पड़ते हैं, अर्थात्—पीड़ा ही प्रार्थना बन जाती है। अतः जब कभी हमें किसी कार्य को लेकर चिन्ता सताये और हम स्वयं को असहाय महसूस करें तो हमें तड़पकर भगवान् से प्रार्थना करनी चाहिये क्योंकि प्रार्थना की स्थिति में हम भगवान् के सर्वाधिक करीब होते हैं। प्रार्थना एक प्रकार का भगवान् के साथ सीधा संवाद है। अतः हमें निःसंकोच भाव से प्रार्थना के द्वारा अपने मनोभावों को सहज रूप से अभिव्यक्त करके चिन्तामुक्त हो जाना चाहिये।

पाठको, प्रार्थना के सन्दर्भ में एक बात का सदैव ध्यान रखना चाहिये कि प्रार्थना में एक प्रकार की तड़प होनी चाहिये, यह पवित्र भावों से युक्त होनी चाहिये, तभी इसके सार्थक परिणाम परिलक्षित होते हैं।

(D) **स्वाध्याय**— चिन्ता को दूर करने का एक अत्यन्त प्रभावी उपाय है—नियमित स्वाध्याय। स्वाध्याय का अर्थ है—"Stady of self " अर्थात्— स्वयं का अध्ययन। कुछ विद्वानों के अनुसार स्वाध्याय का अर्थ है—सद्ग्रन्थों का अध्ययन किन्तु यदि हम स्वाध्याय के व्यापक अर्थ पर विचार करें तो पायेंगे कि सत् साहित्य के प्रकाश में निरन्तर आत्मानुसंधान की प्रक्रिया ही स्वाध्याय है। स्वाध्याय के द्वारा व्यक्ति जिन अच्छी बातों का अध्ययन, श्रवण, चिन्तन करता है, उन बातों के आलोक में अपने जीवन का मूल्यांकन करता है तथा उनको अपने आचरण में उतारने का प्रयास करता है। तब कहीं जाकर स्वाध्याय की प्रक्रिया, इसका उद्देश्य पूरा होता है। मात्र ग्रन्थों के अध्ययन को ही स्वाध्याय नहीं कहा जा सकता।

विद्यार्थियों, आप सोच रहे होंगे कि स्वाध्याय से चिन्ता कैसे दूर होती है? वस्तुतः स्वाध्याय हमारे चारों ओर एक सकारात्मक वैचारिक वातावरण उत्पन्न करता है। स्वाध्याय द्वारा हम सतत पवित्र विचारों के सम्पर्क में बने रहते हैं, जो हमारी भावनाओं एवं व्यवहार को प्रभावित करते हैं। अतः विधेयात्मक चिन्तन के कारण हमें विषय को लेकर नकारात्मक कल्पनायें नहीं करते और चिन्तामुक्त रहते हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि स्वाध्याय नकारात्मक चिन्तन से दूर रहने का एक अचूक उपाय है।

(E) **वर्तमान में जीना**— चिन्ता को दूर करने के लिये यह बहुत ही आवश्यक है कि हम वर्तमान में जीना सीखें क्योंकि चिन्तायें हमारी भविष्य को लेकर होती हैं। चिन्ता की स्थिति में हम या तो अपनी अतीत की गलतियों के लिये पश्चाताप करते हैं या भविष्य को लेकर दुःखद कल्पनायें करते हैं। कहने का आशय है कि चिन्ताग्रस्त होने पर हम अपने अतीत के कारण, जो बीत चुका है और जिसे बदला नहीं जा सकता तथा भविष्य के कारण जो अभी आया नहीं, अपने वर्तमान को बर्बाद कर देते हैं, जो हमारे पास है और जिसके सार्थक उपयोग द्वारा हमारा आने वाला कल सुधर कसता है। जब हम स्वयं को पूरी तरह वर्तमान पर केन्द्रित कर देते हैं जो हम स्वतः ही चिन्तामुक्त हो जाते हैं, क्योंकि वर्तमान

कार्य में हमारा मन इतना एकाग्र एवं तल्लीन हो जाता है कि हम भविष्य के बारे में व्यर्थ की कल्पनायें करते ही नहीं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि हम वर्तमान में जी कर स्वयं को भविष्य की चिन्ताओं से मुक्त रख सकते हैं।

(F) **वर्तमान क्षमता का समुचित उपयोग**— पाठको, चिन्तामुक्त रहने का एक अन्य उपाय यह है कि हमें अपने जीवन को एक दिन का मानते हुये उस दिन के कर्तव्यों के लिये अपनी क्षमताओं का 100 प्रतिशत लगाकर, बाकी सब भगवत सत्ता पर छोड़ देना चाहिये। इसका तात्पर्य यह है कि हमें यह चिन्तन करना चाहिये कि हमारे पास केवल आज के दिन का ही समय है। अतः ऐसे कौन से कार्य हैं, जिनको आज ही पूरा करना सर्वाधिक आवश्यक है। ऐसे कार्यों का प्राथमिकता के आधार पर निर्धारण करके उन कार्यों को पूरी ईमानदारी के साथ करना चाहिये तथा अपनी अधिकतम क्षमता का उपयोग करना चाहिये। हमें सिर्फ कर्म करने का अधिकार है। अतः परिणाम के विषय में चिन्ता ना करके उसे भगवान पर छोड़ देना चाहिये। प्रिय विद्यार्थियों आपने महसूस किया होगा कि किसी भी कार्य को करने में जब हम अपनी तरफ से पूरा प्रयास करते हैं, किसी प्रकार की लापरवाही या कमी नहीं रखते तो उस कार्य को करने में हमें बड़ा आत्मसंतोष मिलता है। चाहे उसके परिणाम में हमें सफलता मिले या असफलता। अतः हमें पूरी क्षमता के साथ अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिये। गीता में इसी तथ्य को उजागर करते हुये भगवान् कृष्ण ने कहा है—“कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।।”

अर्थात्—“तुम्हारा अधिकार केवल कर्म करने में ही है, कर्म के परिणाम में नहीं।”

(G) **स्वयं को व्यस्त रखना**— स्वयं को सृजानात्मक कार्यों में व्यस्त रखकर भी हम चिन्तामुक्त रह सकते हैं। कहा भी गया है कि खाली दिमाग शौतान का होता है। जब हमारे पास कोई लक्ष्य नहीं होता है, लक्ष्य के अनुरूप कोई कार्य नहीं रहता तभी हम चिन्ताग्रस्त होते हैं। अतः हमें अपने जीवन लक्ष्य का निर्धारण कर उसके अनुसार योजना बनाकर स्वयं को व्यवस्थित तरीके से कार्य में व्यस्त रखना चाहिये, जिससे हमारी शारीरिक एवं मानसिक उर्जा का सार्थक उपयोग हो सके।

(H) **अतीत का पश्चाताप न करना**— पाठको, चिन्ता का एक बहुत बड़ा कारण यह भी होता है कि अतीत में हमसे जो गलतियाँ हो जाती हैं, हम उनके परिणामों का लेकर आशंकायें अपने मन में पाल लेते हैं और यह सोचने लगते हैं कि उन गलतियों का परिणाम हमें भविष्य में न जाने किस रूप में भुगताना पड़ेगा।

अतः इससे निपटने का उपाय यह है कि अतीत की गलतियों का पश्चाताप न करते हुये हमें भविष्य में उन्हें न दोहराने की दृढ़ संकल्प लेना चाहिये और पवित्र हृदय से भगवान् के समक्ष उन गलतियों के लिये प्रायश्चित्त करना चाहिये।

(I) **दुःखद भविष्य की कल्पना न करना**— पाठको, जैसे बीता हुआ कल हमारे हाथ में नहीं होता है, वैसे ही आने वाले कल पर भी हमारा नियंत्रण नहीं होता है। इसलिये हमें भविष्य के बारे में बुरी कल्पनायें नहीं करनी चाहिये तथा सदैव आशावादी दृष्टिकोण अपनाना चाहिये।

“भविष्य के बारे में चिन्ता करना बेकार है। कहा जाता है कि जीवन से हमेशा शुभ की आशा रखें। जब आपको कुछ मिलता है, जिसके आपने कभी आशा भी नहीं की थी तो यह स्वीकार करें कि वर्तमान समय आपके लिये सर्वोत्तम है। यहाँ तक कि नकारात्मक

दिखायी देने वाली घटना भी व्यक्ति को नया सबक सिखाती है।”

(मोहन मक्कड़, रेकी विद्या)

(J) **प्राणायाम**— पाठकों, चिन्तामुक्त रहने के लिये व्यक्ति को नियमित रूप से प्राणायाम करना चाहिये। इससे व्यक्ति में शारीरिक स्थिरता तथा मानसिक एकाग्रता का विकास होता है तथा सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित होता है। जैसा की स्पष्ट है कि अनुकंपी तंत्रिका तंत्र की लगातार सक्रियता के कारण व्यक्ति चिन्ताग्रस्त रहता है। अतः प्राणायाम का अभ्यास अनुकंपी तंत्रिका तंत्र की सक्रियता का कम करके अनुकंपी एवं परानुकंपी दोनों तंत्रों में संतुलन लाता है, जिससे तनाव एवं चिन्ता के स्तर में कमी आती है।

(K) **डायरी लेखन**— चिन्ता दूर करने का एक प्रभावी उपाय डायरी लेखन भी है। जब भी व्यक्ति चिन्ता ग्रस्त हो तो उसे अपनी उन सभी समस्याओं—परेशानियों को किसी डायरी या कागज पर लिख लेना चाहिये, जिनके कारण उसे चिन्ता हो रही है। इसके साथ ही परिणामों को भी लिख लेना चाहिये कि ज्यादा से ज्यादा क्या हानि हो सकती है और उनका सामना करने के लिये स्वयं को मानसिक रूप से तैयार कर लेना चाहिये। तार्किक ढंग से सोचने पर आप पायेंगे कि आपकी ज्यादातर समस्याएँ वास्तविक नहीं हैं अर्थात्—चिन्ताग्रस्त होने का कारण अधिकतर वे आशंकाएँ हैं, जिन्हें हमारा नकारात्मक काल्पनिक मन बढ़ा-चढ़ाकर बताता है। अतः डायरी लेखन के द्वारा भी हम अपनी चिन्ताओं से काफी हद तक मुक्त हो सकते हैं।

(L) **सत्संगति**— प्रिय विद्यार्थियों, जैसा कि आप जान चुके हैं कि चिन्ता का मूल कारण हमारे मन की आशंकाएँ होती हैं, जिनको बढ़ाने में संगति का भी योगदान होता है। जिस प्रकार के वातावरण में हम रहते हैं, जिस प्रकार के लोगों के साथ हमारा उठना बैठना है, उनका आचरण भी हमें प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है। यदि हम अच्छी सोच वाले, जीवन के प्रति आशावादी दृष्टिकोण रखने वाले व्यक्तियों के साथ रहते हैं तो हमारे भीतर भी उसी प्रकार के भाव-विचार उत्पन्न होते हैं और हम भी उन्हीं के समान आचरण करने के लिये प्रेरित होते हैं। इसके विपरीत नकारात्मक-निराशावादी दृष्टिकोण रखने वाले लोगों के साथ रहने से हमारे भीतर भी वहीं प्रवृत्ति विकसित होने लगती है। इसलिये चिन्तामुक्त रहने के लिये बहुत आवश्यक है कि हम विधेयात्मक दृष्टिकोण रखने वाले लोगों के साथ ही सम्पर्क रखें।

प्रिय पाठको, अब आप समझ गये होंगे कि चिन्तित रहने की आदत हमारे लिये कितनी विनाशकारी साबित हो सकती है। अतः डॉ. मेकाओं उशुई ने प्रत्येक रेकी चिकित्सक के लिये यह नियम बनाया कि वह चिन्ताग्रस्त नहीं होगा, जिससे की रेकी का माध्यम बनकर पीड़ितों की सेवा की जा सके।

(iii) **केवल आप मैं उस परम सत्ता का आभार व्यक्त करूँगा/करूँगी**— प्रिय विद्यार्थियों, कृतज्ञता एक ऐसा सद्गुण है, जिससे हमारे जीवन में अपरिमित समृद्धि आती है। कृतज्ञता का तात्पर्य है— हमें अपने जीवन में जो कुछ भी अच्छा मिला है, चाहे वह मान-सम्मान के रूप में हो, धन या पद के रूप में हो, शारीरिक या मानसिक क्षमता, सामाजिक या आध्यात्मिक क्षमता के रूप में हो, उन सभी के लिये हमें सर्वप्रथम इस जगत् के नियन्त्रण उस परमपिता परमेश्वर के प्रति सच्चै हृदय से आभारव्यक्त करना और कुछ भी नहीं तो देवताओं के लिये भी, दुर्लभ यह मनुष्य जीवन हमें मिला, इसके लिये हमें

ईश्वरीय सत्ता के प्रति पूरे भाव के साथ आभार प्रकट करना। इसके साथ ही अपने माता-पिता, गुरुजनों, अपने मित्रों एवं उन सभी के प्रति आभार जिन्होंने समय-समय पर आप को सहयोग प्रदान किया। यह सहयोग प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष किसी भी रूप में हो सकता है।

अंग्रजी में एक कहावत है—

"Court your Blessings" अर्थात्— “उन आशीर्वादों, सुखों, सुविधाओं, सफलताओं के लिये धन्यवाद दीजिये जो आपको मिली हुयी हैं।”

“जब हम कृतज्ञ होकर जीते हैं, तब जीवन में समृद्धि आती है। जब हम निरन्तर सभी के प्रति कृतज्ञता का भाव रखते हैं, जब हम प्राप्ति के संबंध में नहीं बल्कि ज्ञानप्राप्ति के लिये आभारी होते हैं तथा अडिग विश्वास रखते हैं, तब समृद्धि खींचकर चली आती है।”

(मोहन मक्कड़, रेकी विद्या)

पाठको प्रायः मनुष्य का स्वभाव ही है कि वह हमेशा अपनी कमियों को देखकर अभावों का रोना रोता रहता है और भगवान से उसको अनेकों शिकायतें रहती हैं कि उन्होंने उसे कुछ भी नहीं दिया। दुनिया का सबसे दुःखी एवं अभावग्रस्त इंसान वही है, किन्तु कभी इस ओर नजर नहीं उठती की हमसे भी अधिक दुःखी एवं परेशान लोग दुनिया में कितने हैं। इस सन्दर्भ में महात्मा ईसा मसीह ने कहा था— “जैसा देखोगे, वैसा ही बनोगे।” अर्थात्— यदि व्यक्ति केवल अपनी कमियों एवं अभावों पर ही अपना ध्यान केंद्रित करता है तो वह जिन्दगी भर अभावग्रस्त ही रहता है। होना यह चाहिये कि हमें जो भी भगवान् के द्वारा दिया गया है, उसका सच्चे हृदय से आभार प्रकट करके अपने आगे के विकास के लिये भगवान के हाथों का यंत्र बनकर अपनी क्षमताओं का अधिकतम सार्थक नियोजन करें। कमियों के लिये शिकायतें ना करके उन्हें दूर करने का सार्थक प्रयास हो, तभी हम अपने जीवन में उन्नति के पथ पर अग्रसर हो सकते हैं।

“आप जो कुछ भी हैं, जो कुछ भी आपके पास है, उसके लिये परमपिता परमात्मा को, उस उच्चतम शक्ति को धन्यवाद दीजिए, कृतज्ञता प्रकट कीजिए और जो कुछ नहीं है और जिस चीज की कमी आपको अखर रही है, उसकी प्राप्ति के लिये जी जान से कुद जाइये।”

(डॉ. देवेन्द्र जैन, रेकी से चिकित्सा कैसे करें?)

इस सन्दर्भ में एक बात और जो ध्यान देने योग्य है, वह यह है कि हमें स्वयं तो दूसरों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करनी चाहिये किन्तु दूसरों से यह उम्मीद नहीं रखनी चाहिये कि हमारे द्वारा की गई सहायता के लिये वह भी हमारा आभार व्यक्त करें। कहा भी गया है—“नेकी कर दरिया में डाल” अर्थात्—“अच्छा कार्य करने के बाद हमें तुरंत उसे भूल जाना चाहिये और हमें भी उसके बदले में कुछ अच्छा मिलें, इस भाव को पूरी तरह अपने मन से निकाल देना चाहिये।”

पाठकों हमें किसी का भी सहयोग एवं उपकार अपनी संतुष्टि एवं आनंद के लिये करना चाहिये, न कि बदले में कुछ पाने की आशा के साथ।

“अपने माँ-बाप, अपने गुरुओं, अपने मित्रों एवं उच्चतम शक्ति के प्रति कृतज्ञ रहिये लेकिन किसी से भी यह उम्मीद मत कीजिए कि वह आपके द्वारा किये गये उपकार के लिये हमेशा आपका कृता रहेगा।

(डॉ. देवेन्द्र जैन, रेकी से चिकित्सा कैसे करे?)

(iv) केवल आप में अपना काम ईमानदारी से करूँगा/करूँगी— प्रिय विद्यार्थियों, रेकी का अगला नियम है—‘केवल आज मैं अपना काम ईमानदारी से करूँगा/करूँगी। जीवन में आत्मसंतुष्टि की प्राप्ति एवं तनाव से बचने के लिये व्यक्ति का ईमानदार होना अति आवश्यक है। ईमानदारी हमें स्वयं अपने प्रति तथा इसके साथ ही दूसरों के प्रति भी बरतनी चाहिये। जब हम स्वयं के प्रति ईमानदार होंगे तभी हम दूसरों के प्रति भी ईमानदार हो सकते हैं।

क्रोध— जीवन के सिद्धान्तों को समझने का प्रयास— क्रोध को दूर करने के लिये हमें जिन्दगी के सिद्धान्तों को समझने का प्रयास करना चाहिये। हमें यह समझने की कोशिश करनी चाहिये कि हमारा जीवन कर्मफल के सिद्धान्त के अनुसार संचालित होता है। प्रत्येक प्राणी जन्म-मरण के इस चक्र द्वारा अपने कर्मों का फल ही भोग रहा है तथा सृष्टि में घटित होने वाली प्रत्येक छोटी से छोटी घटना एवं कार्य के पीछे कोई न कोई कारण अवश्य विद्यमान होता है। कोई भी घटना संयोग का परिणाम नहीं होती है। अतः यदि हमारी भी कोई कामना यदि पूरी नहीं हुयी है तो इसके पीछे जरूर कोई न कोई कारण होगा। हमारे द्वारा ही पूर्व में किये गये किन्हीं कर्मों के कारण ऐसा हुआ होगा। इसलिये इस हेतु स्वयं पर अथवा दूसरों पर या परिस्थिति पर दोष आरोपित करना एवं गुस्सा करना व्यर्थ है, वरन् हमें सटीक कारण को खोज कर उसके समाधान का प्रयास करना चाहिये।

प्रिय विद्यार्थियों, वास्तव में यदि हमें जिन्दगी के सिद्धान्त समझ में आने लगें तो हमारी बहुत सारी समस्याएँ आसानी से हल हो जाती है और हम व्यर्थ क्रोध करने से बच जाते हैं।

ईमानदार होने का तात्पर्य यह है कि वर्तमान में हम जिस भी स्थिति में हैं, उस स्थिति में हमारे जो कर्तव्य हैं, उनका पूरी निष्ठा के साथ पालन करना अर्थात् उन कर्तव्यों के निर्वाह में किसी प्रकार की लापरवाही न करना किसी प्रकार की कमी न रखना। स्वयं की पूरी सामर्थ्य को उसमें लगा देना। उदाहरण के लिये यदि कोई व्यक्ति शिक्षक है, तो शिक्षण होने के नाते उसे पूरी ईमानदारी से शिक्षा प्रदान करने का कार्य करना चाहिये, डॉक्टर है तो उसे पूरी निष्ठा एवं सेवा भाव से मरीजों का इलाज करना चाहिये। वकील है तो पूरी ईमानदारी के साथ केस लड़ना चाहिये और यदि कोई व्यक्ति किसी पद पर आसीन नहीं है तब भी पिता, पुत्र, पुत्री, पत्नी, माँ इत्यादि के रूप में उसके जो कर्तव्य हैं, उनका पालन पूरी ईमानदारी के साथ करना चाहिये। पाठकों, आप में से प्रायः प्रत्येक ने यह अनुभव किया होगा कि जब कभी भी हम अपने कर्तव्य का निष्ठा के साथ पालन नहीं करते हैं, अपने कर्तव्य के साथ बेईमानी करते हैं तो हमें आत्मसंतोष नहीं मिलता है। हर पल यह अहसास होता है कि कहीं कोई कमी रह गई है, जिसे पूरा करना चाहिये, कहीं कुछ गलत हो गया है, जो नहीं होना चाहिये था। इसलिये हमें अपने प्रति एवं दूसरों के प्रति सदैव ईमानदार रहते हुये अपने कर्तव्य का निर्वाह करना चाहिये।

“ यदि हम अपने प्रति ईमानदार हैं तो हम दूसरों के प्रति भी ईमानदार होंगे। तब यदि बड़ी आसानी से हम दूसरों के प्रति वैसे ही ईमानदार होंगे जैसे हम अपना कार्य

ईमानदारी से करते हैं तो उस परम तत्व के प्रति सत्यनिष्ठ होंगे। सत्य हमारे मन में दूसरों के प्रति, स्वयं के प्रति प्रेमभाव रखने के लिये प्रेरित करता है। इससे हमारे जीवन में समरसता आती है। इसलिये केवल आज हमें प्रेमपूर्वक ईमानदारी से कार्य करना है, सत्यनिष्ठ जीवन जीना है।” (मोहन मक्कड़, रेकी विद्या)

“ ईमानदारी के रेकी नियम का पालन कीजिए। उच्चतर चेतना युक्त रेकी आपके लिये पूरी तरह मददगार साबित होगी आपके जीवन में हर मोड़ पर। ईमानदार बनकर दूसरों के लिये प्रेरणास्रोत बनिए। लोग आपसे प्रेरणा लें ईमानदारी भरा जीवन जीने के लिये। ये याद रखिए बेईमानी से कमाए गये पैसों से आपके मित्र, संबंधी और घरवाले ऐश तो कर लेंगे, खुशियों और पार्टी में शरीरक तो हो जायेंगे, लेकिन पकड़े जाने पर अपमान और जेल आपको अकेले ही भुगतने होंगे।” (डॉ. देवेन्द्र जैन, रेकी से चिकित्सा कैसे करे?)

पाठकगणों, इस प्रकार आप समझ गये होंगे की जीवन में वास्तविक सफलता, स्थायी समृद्धि एवं विश्वसनीयता के लिये ईमानदारी से कार्य करना कितना आवश्यकत है।

(V) केवल आप मैं सब प्राणियों से प्रेम एवं उनका सम्मान करूँगा/करूँगी— प्रिय पाठकों, हम सभी इस तथ्य से सुपरिचित हैं कि इस सृष्टि में विद्यमान सभी जड़-चेतन पदार्थों का उद्गम स्रोत एक ही है। जिस परमात्मा ने हम मनुष्यों की सृष्टि की है, उसने ही पशु-पक्षी, वनस्पतियों एवं अन्य जड़ पदार्थों को उत्पन्न किया है तथा हम सभी एक ही उर्जा के विभिन्न रूप हैं। इस प्रकार हमारा जीवन परस्पर आश्रित है। हम सभी का जीवन प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से एक-दूसरे से प्रभावित होता है, किन्तु आज मनुष्य इस तथ्य को भूला चुका है और इस पूरी धरती पर एकमात्र अपना ही अधिकार समझता है। इसी कारण अत्यन्त निर्दयतापूर्वक पेड़-पौधों को काटा जा रहा है, माँसाहार के नाम पर निरीह पशु-पक्षियों की हत्या की जा रही है, उनके आश्रय-स्थल उनसे छीने जा रहे हैं। इसके परिणाम स्वरूप प्रकृति में असंतुलन उत्पन्न हो गया है, जिसके विनाशकारी परिणामों से हम सभी भली-भाँति अवगत हैं।

अतः इस विनाश से बचने एवं प्रकृति में संतुलन के लिये सभी जीवों में सहजीवन के भाव को विकसित करने के लिये डॉ. उशुई ने रेकी का अन्तिम नियम प्रतिपादित किया कि प्रत्येक रेकी चिकित्सक यह संकल्प ले कि वह प्रत्येक प्राणी के साथ करुणा का व्यवहार करेगा, उनकी भावनाओं का सम्मान करेगा।

प्रिय पाठको, क्या आप जानते हैं कि पेड़-पौधों में भी हमारी तरह संवेदनशीलता का गुण-विद्यमान होता है। छुई-मुई (लाजवन्ती) के पौधों को प्रायः आप सभी ने देखा होगा। कैसे स्पर्श करने मात्रा से वह सिकुड़-सिमट जाती है। प्राचीनकाल के भी हमें अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं, जिनमें लोग वृक्ष-वनस्पतियों से बातें करते थे और वनस्पतियाँ भी उसी संवेदना के साथ उनका प्रत्युत्तर देती थी। विद्यार्थियों, आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि अनेक वैज्ञानिक प्रयोगों से स्पष्ट हो चुका है कि जिन बीजों को अत्यन्त प्यार के साथ रेकी दी गई उनसे उत्पन्न होने वाले पौधे अत्यधिक स्वस्थ थे और अधिक पैदावार देने वाले थे, अपेक्षाकृत उनके जिनके बीजों को रेकी नहीं दी गई। कहने का तात्पर्य यह है कि भावनायें केवल हम मनुष्यों को ही नहीं वरन् सभी पदार्थों को प्रभावित करती हैं, चाहे वे जड़ हो या चेतन। पवित्र भावना ही वह आधार है, जिसके सहारे मनुष्य भगवान् को भी प्राप्त कर लेता है।

इसलिये हमें सभी प्राणियों के साथ, सृष्टि के प्रत्येक पदार्थ के साथ करुणा का व्यवहार करना चाहिये क्योंकि प्रत्येक पदार्थ के रूप में वह परमात्मा ही अभिव्यक्त हो रहा

है। जब हम हर पदार्थ में उस ईश्वर की छवि को देखने का प्रयास करेंगे तो हमें स्वतः ही प्रत्येक चीज अच्छी लगनी लगेगी। कहा भी जाता है कि प्यार और सम्मान देने पर मिलता है। अतः यदि हम प्रेम एवं सम्मान देंगे तो प्रत्युत्तर में भगवान की करुणा मुक्तहस्त से हम पर बरसेगी।

“ सृष्टि के समस्त मानव, पशु-पक्षी, पेड़-पौधों में उसी चैतन्य की चेतना व्याप्त है तो फिर पराया कौन? सब अपने हैं, सभी से प्रेम करना है, सबको सम्मान देना है।”

(कल्याण- आरोग्य अंक, जनवरी-फरवरी, 2001)

इसी तथ्य को अभिव्यक्त करते हुये रेकी विशेषज्ञ मोहन मक्कड़ का कथन है कि—
“ जब हम दूसरों को स्वीकार करते हैं तो हम स्वयं के भीतर उनकी प्रतिछाया देखते हैं। परिणामस्वरूप स्वयं या दूसरों पर प्रवर्तित सकारात्मक उर्जा इस ग्रह के समस्त प्राणियों का इलाज करने में मदद देती है। प्रत्येक व्यक्ति, पशु, पेड़-पौधे तथा खनिज पदार्थ सम्पूर्णता में शामिल है। दूसरों के प्रति प्रेम और आदरभाव रखने का अर्थ स्वयं तथा धरती माँ के प्रति प्रेम एवं आदरभाव रखना है। इसलिये केवल आज मैं हर प्राणी के प्रति प्रेम और आदरभाव रखूँगा/रखूँगी।”

(मोहन मक्कड़, रेकी विद्या)

“ आधुनिकतम और अतिसंवेदनशील इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों से यह पाया गया है कि पेड़-पौधे न सिर्फ भौतिक रूप से छेड़े जाने अथवा काटे जाने पर ही प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं, बल्कि आपकी भावनाओं तक के प्रति भी ये संवेदनशील होते हैं। नन्हें-नन्हें फूलों और पौधों से प्यार से बातें कीजिए, उनकी खुबसूरती और चटकीले रंगों की प्रशंसा कीजिए, उन्हें चूमिए, उन्हें रेकी दीजिए, मधुर संगीत सुनाइये, आप पायेंगे ये आल्हादित होते हैं, भाव-विभोर होकर और भी ज्यादा पल्लवित और पुष्पित होते हैं।”

(डॉ. देवेन्द्र जैन, रेकी से चिकित्सा कैसे करे?)

प्रिय पाठको, उपरोक्त विवरण से आप जान गये होंगे कि प्रेम एवं सम्मान ऐसे अस्त्र हैं, जिनके समुचित उपयोग से हम सभी को अपना बना सकते हैं।

(खण्ड-क)

अभ्यासार्थ प्रश्न

(सत्य/असत्य)

(1) रेकी के नियमों का पालन करना प्रत्येक रेकी चिकित्सक के लिये अनिवार्य नहीं है।

(सत्य/असत्य)

(2) रेकी नियमों के पालन से सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित होता है।

(सत्य/असत्य)

(3) प्राणायाम क्रोध को शांत करने का एक प्रभावी उपाय है।

(सत्य/असत्य)

(खण्ड-ख)

(रिक्त स्थान पूर्ति)

(A) केवल आज मैं उस परम सत्ता का व्यक्त करूँगा/करूँगी।

(B) केवल आज मैं अपना काम से करूँगा/करूँगी।

(C) केवल आज मैं सब प्राणियों से एवं उनका करूँगा/करूँगी।

(खण्ड-ग)

(वस्तुनिष्ठ प्रश्न)

(अ) चिन्ता दूर करने का उपाय है—

- (A) स्वाध्याय (B) प्राणायाम
(C) ईश्वर पर विश्वास (D) उपरोक्त सभी
- (ब) हमें ईमानदार होना चाहिए—
(A) स्वयं के प्रति (B) दूसरों के प्रति
(C) A एवं B दोनों (D) उपरोक्त में से कोई नहीं
- (स) क्रोध पर नियंत्रण का उपाय है—
(A) क्षमाशील होना (B) प्राणायाम
(C) A एवं B दोनों (D) उपरोक्त में से कोई नहीं
- (द) 'कामात् क्रोधोजायते' यह कहा गया है—
(A) पातंजल योग सूत्र में (B) हठप्रदीपिका में
(C) श्रीमद्भागवद्गीता में (D) उपरोक्त सभी
- (य) 'हे प्रभु! इन्हें माफ कर देना क्योंकि ये नहीं जानते कि ये क्या कर रहे हैं' यह कथन है—
(A) सन्त कबीर का (B) सन्त ईसा का
(C) महात्मा बुद्ध का (D) भगवान् कृष्ण का

2.5 सारांश—

प्रिय विद्यार्थियों, उपरोक्त विवरण से आज जान गये होंगे कि रेकी चिकित्सा को प्रभावी एवं सफल बनाने के लिये एक रेकी चिकित्सक के लिये इसके नियमों का संकल्पपूर्वक पालन न केवल आवश्यक वरन् अनिवार्य है क्योंकि ये नियम नकारात्मक उर्जा को दूर करके सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास करते हैं, जिससे चिकित्सक में रेकी का समुचित प्रवाह बना रहता है। यदि किसी कारणवश चिकित्सक स्वयं ही नकारात्मकता से ग्रसित है तो वह एक अच्छा रेकी चिकित्सक नहीं हो सकता क्योंकि इसके लिये विश्वव्यापी ऊर्जा के निरन्तर सम्पर्क में रहना आवश्यक होता है और यह केवल तभी संभव है, जबकि रेकी चिकित्सक अपने भाव, विचार एवं आचरण की दृष्टि से एक अच्छा इंसान हो अर्थात्—उसका जीवन के प्रति विधेयात्मक दृष्टिकोण है। इसलिए डॉ. मेकाओ उशुई ने प्रत्येक रेकी चिकित्सक के लिये इन पाँच नियमों का पालन करना अनिवार्य बताया (1) क्रोध न करना, (2) चिंतामुक्त होना, (3) ईश्वर के प्रति कृतज्ञता प्रकट करना, (4) अपने कर्तव्यों का ईमानदारी से पालन और (5) प्राणीमात्र के प्रति करुणा तथा सम्मान का भाव। पाठको, रेकी के इन नियमों के प्रतिपादन का उद्देश्य यह है कि व्यक्ति अपने नकारात्मक चिंतन एवं संकीर्ण भावनाओं से दूर रहे क्योंकि नकारात्मकता ही वह कारण है, जिससे न केवल हमारी प्राण उर्जा का ह्रास होता है वरन्, ब्रह्माण्डीय उर्जा के हमारे जीवन में प्रवेश के सभी पथ भी अवरुद्ध हो जाते हैं। रेकी के नियम रेकी चिकित्सक को विधेयात्मक बनाने में सहायता प्रदान करते हैं, जिससे वह निरन्तर प्राणवान्, ऊर्जावान्, बना रहता है।

2.6 परिभाषिक शब्दावली—

विधेयात्मक	— सकारात्मक।
ह्रास	— कमी होना।
कृतज्ञता	— अहसानमंद होना।

अनुकंपी तंत्रिका तंत्र — स्वायत्त तंत्रिका तंत्र का एक भाग, जो शारीरिक क्रियाशीलता के लिये उत्तरदायी है।

परानुकंपी तंत्रिका तंत्र — स्वायत्त तंत्रिका तंत्र का दूसरा भाग जो शारीरिक क्रियाशीलता को कम कर शरीर को विश्राम प्रदान करता है।

श्वास — प्राण वायु का अन्दर जाना।

प्रश्वास — प्राण वायु का बाहर निकलना।

अहंकार — स्वयं को दूसरों से पृथक् एवं उच्चतर समझने की भावना तथा दूसरे लोगों को अपने से हीन या कम समझना।

श्रद्धा — ईश्वर के प्रति सर्वस्व समर्पण एवं अटूट विश्वास का भाव।

आत्मानुसंधान — स्वयं को खोजना, स्वयं को जानना, स्वयं का अन्वेषण (Investigation)

आल्हादित होना — प्रसन्न होना।

अवरुद्ध — बन्द हो जाना।

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर—

(खण्ड—क)

(सत्य/असत्य)

(1) असत्य

(2) सत्य

(3) सत्य

(खण्ड—ख)

(रिक्त स्थान पूर्ति)

(A) आभार

(B) ईमानदारी

(C) प्रेम, सम्मान

(खण्ड—ग)

(अ) D

(ब) C

(स) C

(छ) C

(रू) B

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सुची—

(1) कल्याण— आरोग्य अंक (जनवरी—फरवरी, 2001) गीताप्रेस, गोरखपुर, उत्तरप्रदेश

2.9 निबंधात्मक प्रश्न

प्रश्न— रेकी के नियम से आप क्या समझते हैं? रेकी नियमों का विस्तृत वर्णन कीजिए।

इकाई – 3 रेकी चिकित्सा में सहायक साधनाएं

- 3.1 प्रस्तावना
- 3.2 उद्देश्य
- 3.3 रेकी चिकित्सा में सहायक साधनायें
 - 3.3.1 मानस दर्शन
 - 3.3.2 आसन
 - 3.3.3 प्राणायाम
 - 3.3.4 मुद्रा एवं बंध
 - 3.3.5 मन्त्र जप
 - 3.3.6 मानसिक एकाग्रता के अभ्यास
 - 3.3.7 प्रार्थना
 - 3.3.8 स्वाध्याय
 - 3.3.9 आहार संयम
- 3.4 सारांश
- 3.5 शब्दावली
- 3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
- 3.8 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री
- 3.9 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों इससे पूर्व की इकाईयों में आपने रेकी चिकित्सा के इतिहास, अवधारणा, नियम एवं विधि का अध्ययन किया है। अतः आपके मन में इतना तो स्पष्ट हो गया होगा कि रेकी चिकित्सा मूलतः क्या है और किस प्रकार इससे चिकित्सा की जाती है। प्रस्तुत ईकाई में हमारे अध्ययन का विषय है – “रेकी चिकित्सा में सहायक साधनायें।”

पाठकों, आपके मन में सहज ही जिज्ञासा उत्पन्न हो रही होगी कि चिकित्सा में सहायक साधनाओं से क्या अभिप्राय है? ये साधनायें कौन-कौन सी हैं। किस प्रकार इनका अभ्यास किया जाता है और इन साधनाओं का अभ्यास कौन व्यक्ति कर सकते हैं, इत्यादि। निःसन्देह इस ईकाई के अध्ययन के बाद आपकी इन सभी जिज्ञासाओं का समाधान हो जायेगा।

तो आइये, अध्ययन करते हैं रेकी चिकित्सा में सहायक साधनाओं के विषय में।

3.2 उद्देश्य—

प्रिय पाठकों, प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप –

1. रेकी चिकित्सा में कौन – कौन सी साधनायें सहायक हैं, इसे स्पष्ट कर सकेंगे।
2. रेकी चिकित्सा में मानसदर्शन की उपयोगिता का वर्णन कर सकेंगे।
3. रेकी चिकित्सा में आसन, प्राणायाम, मुद्रा एवं बंधों के अभ्यास के महत्व का विश्लेषण कर सकेंगे।

4. रेकी चिकित्सा में मन्त्र जप की भूमिका का वर्णन कर सकेंगे।
5. रेकी चिकित्सा में मानसिक एकाग्रता के अभ्यासों की महत्ता का विश्लेषण कर सकेंगे।
6. रेकी चिकित्सा प्रार्थना की महत्ता को स्पष्ट कर सकेंगे।
7. रेकी चिकित्सा में स्वाध्याय की उपयोगिता का विवेचन कर सकेंगे।
8. रेकी चिकित्सा में आहार संयम की उपयोगिता का वर्णन कर सकेंगे।

3.3 रेकी चिकित्सा में सहायक साधनायें—

प्रिय विद्यार्थियों, रेकी चिकित्सा में सहायक विभिन्न साधनाओं के विस्तृत अध्ययन से पहले यह जान लेना आवश्यक है कि रेकी में सहायक साधनाओं से क्या अभिप्राय है। इस सन्दर्भ में ध्यान देने योग्य सर्वप्रथम बात यह है कि इन साधनाओं को रेकी चिकित्सक एवं रोगी दोनों को ही करना चाहिये।

पाठकों, अब आपके मन में यह प्रश्न उठ सकता है कि आखिर इन साधनाओं को करने की क्या आवश्यकता है? इनको करने के पीछे क्या उद्देश्य निहित है? इस जिज्ञासा का समाधान यह है कि चिकित्सक एवं रोगी दोनों ही प्राण ऊर्जा के प्रति ग्रहणशीलता को बढ़ाना होता है। रेकी चिकित्सक का ब्रह्माण्डीय प्राण ऊर्जा से सतत सम्पर्क बना रहे और यह समुचित प्राण ऊर्जा को ग्रहण करके रोगी तक प्रक्षेपित कर सके तथा रोगी भी उस ऊर्जा को आवश्यकतानुसार ग्रहण करने में समर्थ हो सके, तभी रेकी चिकित्सा का प्रयोजन पूरा हो सकता है।

इसलिये रेकी विशेषज्ञों ने कतिपय साधनाओं को करने के निर्देश दिये हैं, जिनके नियमित अभ्यास द्वारा विश्वव्यापी जीवनीशक्ति से सतत सम्पर्क बना रहता है। तो आइये, अब हम अध्ययन करते हैं उन साधनाओं के बारे में जो रेकी चिकित्सा में अत्यन्त सहायक हैं। इन साधनाओं का विस्तृत विवेचन निम्नानुसार है —

1. मानस दर्शन
2. आसन
3. प्राणायाम
4. मुद्रा एवं बन्ध
5. मन्त्र जप
6. मानसिक एकाग्रता के अभ्यास
7. रंगों का ध्यान
8. प्रार्थना
9. स्वाध्याय
10. आहार संयम

3.3.1 मानस दर्शन (Visualization) –

प्रिय पाठकों, रेकी चिकित्सा में सहायक साधनाओं में मानस दर्शन या कल्पना शक्ति का अत्यन्त महत्व है। दर्शन का तात्पर्य है— “किसी व्यक्ति, वस्तु, परिस्थिति की वास्तविक उपस्थिति के बिना मानसिक रूप से उसकी कल्पना करना या मन में उसकी छवि बनाना।”

मानस दर्शन कितना रूप से हो रहा है या नहीं, यह व्यक्ति की अपनी कल्पना शक्ति पर निर्भर करता है। जिस व्यक्ति की कल्पना शक्ति जितनी तीव्र होती है, वह उतना

ही अधिक स्पष्ट रूप से मानस दर्शन करने में सक्षम होता है। कल्पना या मानस दर्शन का संबंध भविष्य से होता है अर्थात् ऐसी चीजों, व्यक्तियों या परिस्थितियों की कल्पना की जाती है, जो अभी घटित नहीं हुयी है, किन्तु व्यक्ति भविष्य में उनके उस रूप में घटने की कल्पना करता है, उनका मानसिक प्रतिबिम्ब बनाता है। मानस दर्शन हमेशा चाहिये, दुःखद या नकारात्मक भविष्य की नहीं, क्योंकि हम जैसा सोचते हैं तो हमारे सोचने की तीव्रता के आधार पर वैसा ही वातावरण विनिर्मित होने लगता है। अतः हमारा चिन्तन सदैव विधेयात्मक होना चाहिये, चाहे परिस्थितियाँ कितनी भी प्रतिकूल एवं विषम क्यों न हो।

पाठकों, इस सन्दर्भ में एक बात और स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि कोई भी कल्पना साकार तभी होती है, ज बवह **“कल्पना शक्ति” (Imagination power)** का रूप लेती है। अब आपके मन में यह जानने की उत्कंठा हो रही होगी कि कल्पना एवं कल्पना शक्ति में क्या अन्तर है? जब हम किसी कल्पना के साथ अपनी भावनायें एवं कर्मशक्ति को भी जोड़ देते हैं तो वह **कल्पना, शक्ति** का रूप ले लेती है अर्थात् हमारी भावनाओं, विचार एवं व्यवहार तीनों का संयोग हमारी कल्पना के साथ हो जाता है और परिणामस्वरूप कल्पना शक्ति का रूप लेकर साकार होने लगती है। अतः केवल कल्पना करना या मानस दर्शन करना महत्वपूर्ण नहीं है, वरन् उस कल्पना के अनुरूप यथोचित प्रयास अपेक्षित है, अन्यथा कल्पना केवल कल्पना बनकर रह जाती है, यर्थाथ में परिणत नहीं हो पाती।

अब प्रश्न उठता है कि रेकी चिकित्सा में मानस दर्शन का क्या महत्व है? यह किस प्रकार से रेकी में सहायता प्रदान करती है ?

पाठकों, आपको इतना तो भलीभाँति ज्ञात ही है कि रेकी देते समय चिकित्सक यह कल्पना करता है कि वह ब्रह्माण्ड से प्राण उर्जा को ग्रहण कर रहा है तथा अपने हाथों के माध्यम से उस उर्जा रोगी या पीड़ित व्यक्ति में प्रक्षेपित कर रहा है। इसी प्रकार रोगी को भी यह सलाह दी जाती है कि रेकी लेते सकय वह मन में सकारात्मक भाव बनाये रखे तथा यह कल्पना करे कि प्राण उर्जा उसके भीतर प्रवाहित हो रही है तथा वह पहले की अपेक्षा अधिक **प्राणवान्, उर्जावान्** हो रहा है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि रेकी में कल्पनाशक्ति एवं मानस दर्शन का अत्यधिक महत्व है। अतः चिकित्सक एवं रोगी दोनों को ही अपनी इस शक्ति को विकसित करने का यथा संभव प्रयास करना चाहिये, लेकिन इस सन्दर्भ में एक बात का हमेशा ध्यान रखना चाहिये कि कल्पना का संबंध वास्तविकता से होना चाहिये अर्थात् कल्पनायें ऐसी हो जिनको पुरुषार्थ द्वारा साकार किया जा सके। जिन कल्पनाओं का यर्थाथ स संबंध नहीं होता, ऐसी कल्पनायें करना निरर्थक है।

“रेकी चूँकि मन से निर्देशित होती है। **विजुअलाइजेशन** मन में स्पष्ट रूप से देखना, मानस दर्शन या सजीव कल्पना करना रेकी के प्रवाह को बढ़ाता है। कल्पना मानसिक शक्ति को निर्देशित करती है और मानसिक शक्ति से रेकी के प्रवाह को केन्द्रित करने का एक सशक्त माध्यम है।”

(डॉ० देवेन्द्र जैन: रेकी चिकित्सा कैसे करें? 2005)

मानस दर्शन की विधि –

पाठकों, मानस दर्शन का अभ्यास लेटकर या बैठकर किसी भी प्रकार किया जा सकता है। अब प्रश्न उठता है कि रेकी चिकित्सा की दृष्टि से किस चीज का मानस दर्शन सर्वाधिक उपयुक्त है। वैसे तो प्रत्येक व्यक्ति अपनी रुचि के अनुसार कोई भी ऐसी सुखद कल्पना कर सकता है, जिसमें उसका मन सर्वाधिक एकाग्र हो, जिस कल्पना में वह

तल्लीन हो जाये, तथापि रेकी की दृष्टि से विविध रंगों की कल्पना करना अधिक उपयुक्त माना जाता है, क्योंकि इस चिकित्सा में उर्जा को संतुलित करने के लिये चक्रों को संतुलित किया जाता है और प्रत्येक चक्र का अपना विशिष्ट रंग है। अतः जिस भी चक्र में उर्जा की कमी होती है, तो उस चक्र से संबंधित रंग की कल्पना द्वारा ऊर्जा की कमी को दूर किया जा सकता है।

मानस दर्शन की विधि निम्नानुसार है—

1. सर्वप्रथम सहज रूप से स्थिर होकर बैठ जाये और लेट जाये।
2. इसके बाद पूरे शरीर को बिल्कुल ढीला छोड़ दें और कल्पना करें कि शरीर रूई के ढेर के समान बिल्कुल हल्का होता जा रहा है।
3. गहरी एवं धीमी श्वास — प्रश्वास लें।
4. एड़ी से लेकर सिर तक प्रत्येक अंग को म नही मन देखें और कल्पना करें कि शरीर का प्रत्येक अंग को मन ही मन देखें और कल्पना करें कि शरीर का प्रत्येक अंग शीथिल हो रहा है अर्थात् किसी भी अंग में दर्द या खिंचवा नहीं है।
5. जब शरीर पूरी तरह शीथिल हो जाये तब अपनी रुचि के अनुसार रंगों की कल्पना करें और पूरी तल्लीनता से यह महसूस करें कि उस रंग की उर्जा आपके सम्पूर्ण शरीर एवं मन में समा रही है। आप पहले की अपेक्षा स्वयं को अधिक स्वस्थ एवं उर्जावान् महसूस कर रहे हैं।

“मानस दर्शन की इस सरल विधि से हम अपनी अर्न्तशक्तियों को जागृत कर स्वस्थ होने में बाधा डाल रहे अवरोधों को दूर कर सकते हैं और रेकी को पूरी क्षमता और तीव्रता से प्रवाहित होने में सहायता करते हैं।”

(डॉ० देवेन्द्र जैन: रेकी चिकित्सा कैसे करें? 2005)

3.3.2 आसन—

पाठकों, रेकी चिकित्सा में आसन भी अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आसन हमारे शरीर को दृढ़ता एवं स्थिरता प्रदान करते हैं। आसन को परिभाषित करते हुये महर्षि पतंजलि ने योग सूत्र के साधनपाद में लिखा है —

“स्थिर सुखमासनम्” (पातंजल योग सूत्र/साधनपाद/46)

अर्थात्

“स्थिर होकर सुखपूर्वक बैठना आसन है।”

इसी सन्दर्भ में घेरण्ड संहिता में कहा गया है —

“आसनेन दृढ़ता”

(घेरण्ड संहिता)

अर्थात्

“आसनों से शरीर दृढ़ होता है।”

अतः स्पष्ट है कि विभिन्न प्रकार के आसनों का नियमित अभ्यास शरीर के सम्पूर्ण अंगों में प्राण के प्रवाह को सुचारु रूप से क्रियाशील बनाता है तथा शरीर को स्थिरता प्रदान करता है। जिससे हमारा ब्रह्माण्डीय उर्जा से सत्त सम्पर्क बना रहता है। आसनों का प्रभाव केवल शारीरिक ही नहीं होता वरन् ये हमारे मानसिक एवं आध्यात्मिक विकास में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

“शारीरिक दृष्टि से देखें तो आसनों से शरीर की सबसे महत्त्वपूर्ण अन्तःस्रावी ग्रन्थि प्रणाली नियंत्रित एवं सुव्यवस्थित होती है। परिणामतः सभी ग्रन्थियों से उचित मात्रा में रस का स्राव हाने लगता है। ध्यान देने की बात यह भी है कि माँसपेशियाँ, हड्डियाँ,

स्नायुमण्डल, ग्रन्थि प्रणाली, श्वसन प्रणाली, उत्सर्जन प्रणाली, रक्त संचरण प्रणाली सभी एक – दूसरे से संबधित हैं। वे एक – दूसरे के सहयोगी हैं। आसन के अनेक प्रकार शरीर को लचीला तथा परिवर्तित वातावरण के अनुकूल बनाने के योग्य बनाते हैं। इनके प्रभाव से पाचन क्रिया तीव्र हो जाती है। उचित मात्रा में पाचक रस तैयार होता है। अनुकंपी एवं परानुकंपी तंत्रिका प्रणाली में संतुलन आ जाता है। फलस्वरूप इनके द्वारा बाहरी और आन्तरिक अंगों के कार्य ठीक ढंग से होने लगते हैं। “

(डॉ० प्रणव पण्डया: आध्यात्मिक चिकित्सा एक समग्र उपचार पद्धति, 2004)

इस प्रकार स्पष्ट है कि प्राण प्रवाह को क्रियाशील बनाने के कारण रेकी में आसनों की भी अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका है।

3.3.3 प्राणायाम—

रेकी चिकित्सा में आसनों के साथ – साथ प्राणायाम की भी महती उपयोगिता है और ये आसन से अधिक प्रभावकारी एवं सूक्ष्म विधि है। सामान्य तौर पर प्राणायाम का अर्थ ऑक्सीजन लेने एवं छोड़ने की प्रक्रिया से लिया जाता है, किन्तु यह प्राणायाम का वास्तविक अर्थ नहीं है।

प्राणायाम तो ब्रह्माण्डीय प्राण उर्जा से अपना सम्पर्क कायम कर प्राण को संबद्धित एवं नियंत्रित करने की विधि है। इसके नियमित अभ्यास से नाड़ियों के प्राणिक अवरोध दूर हो जाते हैं और व्यक्ति प्राण उर्जा के प्रति अधिक ग्रहणशील बन जाता है। प्राणायाम की महत्ता को स्पष्ट करते हुये कहा गया है कि –

“पर यर्थाथ में यह विश्वव्यापी प्राण उर्जा से अपना सामंजस्य स्थापित करने की विधि है। आमतौर पर लोग इसे केवल अधिक ऑक्सीजन प्राप्त करने की प्रणाली के रूप में जानते हैं, किन्तु सत्य इससे भिन्न है। श्वसन के माध्यम से इसके द्वारा नाड़ियों, प्राण नलिकाओं एवं प्राण के प्रवाह पर व्यापक असर होता है। परिणामतः नाड़ियों का शुद्धिकरण होता है तथा मौलिक और मानसिक स्थिरता प्राप्त होती है। इसमें की जाने वाली कुभंक प्रक्रिया द्वारा न केवल प्राण का नियंत्रण होता है, बल्कि मानसिक शक्तियों का भी विकास होता है।”

(डॉ० प्रणव पण्डया: आध्यात्मिक चिकित्सा एक समग्र उपचार पद्धति, 2004)

इस प्रकार स्पष्ट है कि रेकी चिकित्सक एवं रोगी प्राणायाम के नियमित दीर्घकालीन अभ्यास द्वारा प्राण उर्जा का संवर्द्धन कर सकते हैं।

3.3.4 मुद्रा एवं बंध—

आसन एवं प्राणायाम के अतिरिक्त मुद्रा एवं बंध भी रेकी के प्रवाह के सुचारु संचालन में अत्यन्त सहायक विधियाँ हैं। मुद्रा एवं बंध हमारे उर्जा शरीर को प्रभावित करते हैं तथा इनका प्रभाव हमारे चक्रों पर भी पड़ता है। इनके अभ्यास से प्राणिक अवरोध दूर होते हैं और चक्र क्रियाशील होते हैं, जिससे उर्जा संतुलित होकर स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है।

“मुद्राओं का अभ्यास साधक को सूक्ष्म शरीर स्थित प्राण शक्ति की तरंगों के प्रति जागरूक बनाता है। अभ्यास करने वाला इन शक्तियों पर चेतन रूप से नियंत्रण प्राप्त करता है। फलतः व्यक्ति अपने शरीर के किसी अंग में उसका प्रवाह ले जाने या अन्य व्यक्ति के शरीर में उसे पहुँचाने की क्षमता प्राप्त करता है।”

(डॉ० प्रणव पण्डया: आध्यात्मिक चिकित्सा एक समग्र उपचार पद्धति, 2004)

3.3.5 मन्त्र जप—

मंत्र का नियमित जप प्राण के प्रवाह में आने वाले अवरोधों को सुनिश्चित रूप से दूर करता है। बशर्ते मंत्रजप पूरी श्रद्धा के साथ किया जाये। शब्द व्युत्पत्ति के आधार पर मंत्र का अर्थ है—

“मननात् त्रायते इति मन्त्रः”

अर्थात्

“जिसका मनन करने पर त्राण मिलता है। अर्थात् रक्षा होती है, उसे मन्त्र कहते हैं। ”

पाठकों, मंत्र का सीधा प्रभाव हमारे विचार तंत्र पर पड़ता है। मंत्र जप हमारे नकारात्मक चिन्तन को दूर करता है और हमें ब्रह्माण्ड की उस उर्जा धारा से जोड़ देता है, जिस ऊर्जा का प्रतिनिधित्व वह मन्त्र करता है, किन्तु मन्त्र जप तभी प्रभावी होता है, जब मंत्रजप की साधना से संबधित नियमों का पूरी श्रद्धा से पालन किया जाये। जैसे —

1. नियमितता
2. दीर्घकाल तक अभ्यास
3. ईष्ट के प्रति श्रद्धा एवं विश्वास
4. वाणी से मंत्र का जप, मन से मन का अर्थ चिन्तन और हृदय से अपने ईष्ट का भाव भरा स्मरण।

इन शर्तों को पूरा करने पर ही मंत्र के अपेक्षित परिणाम प्राप्त होते हैं।

3.3.6 मानसिक एकाग्रता के अभ्यास—

पाठकों, रेकी चिकित्सा में मानसिक एकाग्रता के अभ्यास जैसे — त्राटक आदि भी अत्यन्त सहायक हैं। जैसा कि आप जानते हैं रेकी चिकित्सा के अनुसार रोगों का मूल कारण नकारात्मक उर्जा का प्रवेश एवं उर्जा का असंतुलन है। नकारात्मकता के कारण हमारा ब्रह्माण्डीय उर्जा से सम्पर्क निर्बल या विच्छिन्न हो जाता है। अतः ऐसी सभी साधनायें और अभ्यास जो हमें सकारात्मकता की ओर अग्रसर करते हैं, वे सभी रेकी चिकित्सा में सहायक हैं।

मानसिक एकाग्रता के अभ्यास के कारण हमारा मन नकारात्मक चिन्तन से हटकर अपने लक्ष्य पर एकाग्र होता है, परिणामस्वरूप हमारी मानसिक शक्तियाँ एक जगह केन्द्रित होने लगती हैं और ब्रह्माण्डीय उर्जा से हमारा सम्पर्क पुनः कायम होकर सुदृढ़ होने लगता है।

मानसिक एकाग्रता के लिये त्राटक का अभ्यास अत्यन्त प्रभावी है। त्राटक की गणना हठयोग के षट्कर्मों के अन्तर्गत पाँचवीं शुद्धिक्रिया के रूप में की गई है। त्राटक का अर्थ होता है — **ध्येय वस्तु को एकटक देखना** अर्थात् जब तक आँसू न गिरने लगे तब तक अपलक अपने लक्ष्य पर **शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक दृष्टि से एकाग्र होना**। हम जिस लक्ष्य पर अपने मन को एकाग्र करते हैं, हमारे अन्दर उसी प्रकार के **विचार, भावनायें एवं गुण** आने लगते हैं।

अतः हमारा लक्ष्य सदैव सकारात्मक और ऐसा होना चाहिये, जिसके प्रति हमारे मन में सम्पूर्ण समर्पण का भाव हो।

मानसिक एकाग्रता से **रेकी चिकित्सा** में इसलिये भी सहायता मिलती है क्योंकि हमारा मन जितना अधिक एकाग्र होता है, उतना ही अधिक तीव्र गति से हम जीवनीशक्ति को ग्रहण करने में समर्थ होते हैं।

इस प्रकार मानसिक एकाग्रता के अभ्यास रेकी चिकित्सा में अत्यन्त सहायक हैं।

3.3.7 प्रार्थना—

रेकी में सहायक साधनाओं में “प्रार्थना” अत्यन्त प्रभावी सरल एवं सुगम साधना है। इसे कोई भी व्यक्ति, किसी भी क्षण कर सकता है, बशर्ते हृदय पवित्र हो। प्रार्थना के सन्दर्भ में महामानवों के अनुभव का सच यह है कि करुण हृदय से निकली हुयी पुकार को भगवान् कभी भी अनुसुना नहीं करते अर्थात् प्राणी को प्रार्थना का प्रत्युत्तर अवश्य मिलता है। जब हम निर्मल हृदय से भगवान् से प्रार्थना करते हैं तो उस क्षण हमारी चेतना भगवान् के सर्वाधिक करीब होती है। इसलिये ऐसी प्रार्थना कभी निष्फल नहीं होती। प्रार्थना के द्वारा भगवान् से सीधा सम्पर्क होने से हमारे भीतर उर्जा का अजस्र प्रवाह होने लगता है और हमारे सारे दुःख, चिन्तायें दूर हो जाती हैं। प्रार्थना का संबंध व्यवहार एवं विचार से नहीं भावनाओं से है। यह भक्त और भगवान् के बीच का भावभरा संवाद है।

“व्यवहारिक जीवन का पल हमारे स्थूल शरीर का तल है। वैचारिक प्रगाढ़ता हमें सूक्ष्म चेतना की अनुभूति देती है। भावनात्मक एकाग्रता में हम कारण शरीर में जीते हैं। यहाँ हम जितना अधिक स्थिर, एकाग्र होते हैं, उतना ही अधिक भावनात्मक उर्जा इकट्ठा होती है। हमारी श्रद्धा की परम सघनता में हुआ भावनात्मक उर्जा का विस्फोट हमें सर्वेश्वर की सर्वव्यापी चेतना से एकाकार कर देता है। इस स्थिति में हमारे जीवन में उन प्रभु का असीम उर्जा प्रवाह उमड़ता चला आता है और फिर उनकी अनंत शक्ति के संयोग से हमारे जीवन में सभी असंभव होने लगते हैं।”

(डॉ० प्रणव पण्ड्या: आध्यात्मिक चिकित्सा एक समग्र उपचार पद्धति, 2004)

3.3.8 स्वाध्याय—

स्वाध्याय की भी रेकी चिकित्सा में अत्यधिक महत्ता है। सामान्यतः स्वाध्याय का अर्थ Self Study माना जाता है, किन्तु वास्तव में स्वाध्याय Study Of Self है। कहने का अभिप्राय यह है कि स्वाध्याय सद्ग्रन्थों के प्रकाश में आत्मानुसंधान की प्रक्रिया है, जिसके द्वारा हमारा स्वयं से परिचय होता है, अपने गुण एवं कमियों का हम तटस्थ अवलोकन करते हैं और उन कमियों को दूर करने के लिये सद्ग्रन्थों के अनुसार व्यावहारिक जीवन में आचरण करते हैं।

स्वाध्याय हमारी विचार जगत् की विकृतियों को दूर करने का सशक्त माध्यम है। जैसे-जैसे हम सकारात्मक होते जाते हैं, वैसे – वैसे स्वतः हमारे भीतर प्राण उर्जा सम्यक् रूप से क्रियाशील होने लगती है।

स्वाध्याय की प्रक्रिया—

स्वाध्याय की प्रक्रिया निम्नलिखित चरणों में सम्पन्न होती है—

1. प्रथम चरण – अध्यात्मवेत्ताओं या महामानवों के विचारों या सद्ग्रन्थों का चयन।
2. द्वितीय चरण –सद्विचारों या सद्ग्रन्थों के आलोक में स्वयं का तटस्थ अवलोकन।
3. तृतीय चरण – स्वयं के विचारतंत्र की विकृतियों को दूर करने हेतु प्रभावी समाधान की नीति तया करना अर्थात् अपने अनुरूप सर्वाधिक उपयुक्त समाधान का चयन करना।
4. चतुर्थ चरण –चयनित समाधान के अनुरूप आचरण करना अर्थात् चयनित समाधान व्यावहारिक जीवन में सफलतापूर्वक प्रयोग।

इस प्रकार इन चार चरणों द्वारा स्वाध्याय की पूरी प्रक्रिया निष्पन्न होती है।

3.3.9 आहार संयम—

रेकी चिकित्सा को प्रभावी बनाने में आहार संयम का भी महत्त्वपूर्ण योगदान होता है, क्योंकि भोजन के स्थूल प्रभावों के साथ — साथ इसके सूक्ष्म प्रभाव हमारे मन पर भी पड़ते हैं। इसलिये कहा गया है कि “जैसा खाये अन्न वैसा बने मन”। अतः मन को संवारने के लिये हमें आहार संयम का पालन करना चाहिये।

त्रिगुणों (सत,रज,तम) के आधार पर आहार की भी तीन श्रेणियाँ बतायी गयी हैं, जो निम्न हैं—

1. सात्विक आहार
2. राजसिक आहार
3. तामसिक आहार

गीता में भी इस तथ्य का विवेचन करते हुये भगवान् कृष्ण, अर्जुन से कहते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति को भोजन भी अपनी प्रकृति के अनुसार प्रिय होता है। सात्विक प्रकृति के व्यक्ति सात्विक, राजसिक प्रकृति के व्यक्ति को राजसिक और तामसिक प्रकृति के व्यक्ति को तामसिक भोजन ही प्रिय होता है।

पाठकों, हम सभी जानते हैं कि राजसिक और तामसिक भोजन हमारे स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होता है। अतः हमें सतोगुण की वृद्धि हेतु सात्विक भोजन ग्रहण करना चाहिये। क्योंकि सतोगुण प्रकाश, ज्ञान, विवेक, ऊर्जा का प्रतीक है। रजोगुण एवं तमोगुण की वृद्धि के कारण ही प्राण उर्जा के प्रवाह में व्यतिरेक आते हैं ओर विकृतियाँ जन्म लेने लगती हैं।

अतः सात्विक भोजन के द्वारा रेकी चिकित्सक एवं रोगी इन अवरोधों को सहज ही दूर कर सकता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न (खण्ड — क)

(सत्य/ असत्य)

1. मानस दर्शन का संबंध भविष्य से होता है। (सत्य/असत्य)
2. प्रत्येक चक्र का अपना एक विशिष्ट रंग होता है। (सत्य/असत्य)
3. मन्त्रजप से विकृतियाँ दूर होती हैं। (सत्य/असत्य)

(खण्ड — ख)

(वस्तुनिष्ठ प्रश्न)

1. गीता में आहार बताया गया है—
(क) एक प्रकार का
(ख) दो प्रकार का
(ग) तीन प्रकार का
(घ) उपर्युक्त में से कोई नहीं
2. स्वाध्याय की प्रक्रिया का द्वितीय चरण है—
(क) सद्विचारों का चयन
(ख) तटस्थ आत्मावलोकन
(ग) समाधान का चयन
(घ) समाधान का व्यावहारिक प्रयोग
3. रेकी चिकित्सा में सहायक साधना है—
(क) आसन

- (ख) प्राणायाम
- (ग) आहार संयम
- (घ) उपर्युक्त सभी

3.4 सारांश—

प्रिय विद्यार्थियों, उपरोक्त विवरण से आप जान गये होंगे कि रेकी चिकित्सा में सहायक साधनायें कौन – कौन सी हैं और किस प्रकार इनका अभ्यास किया जा सकता है। इस सन्दर्भ में ध्यान देने योग्य सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि नकारात्मक दृष्टिकोण ही हमारी सारी समस्याओं और रोगों का प्रधान कारण है। नकारात्मकता के कारण ही वे सारे द्वार बन्द हो जाते हैं, जिनसे प्रवेश पाकर प्राण ऊर्जा हम तक पहुँचती है। अतः प्राण ऊर्जा से हमारा सुदृढ़ एवं सतत् सम्पर्क बना रहे, इसके लिये उन छिद्रों को बन्द करना होगा, जिनसे हमारी ऊर्जा व्यर्थ में ही निरन्तर निःसृत हो रही है, क्योंकि जब तक ये छिद्र बन्द नहीं होंगे तब तक हम चाहे जितनी ऊर्जा ग्रहण करें, किन्तु बहना निरन्तर जारी है, इसलिये ऊर्जा संचित नहीं हो पाती।

अतः वे सारी साधनायें और अभ्यास जिनके द्वारा हमारे अन्दर सकारात्मकता का विकास होता है अथवा जो हमें सकारात्मकता के लिये तैयार करती हैं, रेकी चिकित्सा में सहायक हैं। चाहे वे आसन हो, प्राणायाम हो, प्रार्थना या जप हो अथवा मानस दर्शन हो। इन सभी के द्वारा हम ब्रह्माण्डीय प्राण ऊर्जा को ग्रहण करने में समर्थ बनते हैं और इनका अभ्यास एक रेकी चिकित्सक के लिये जितना आवश्यक है, उतना ही रोगी के लिये भी। सामान्य जीवन में भी रोगों से दूर रहने एवं स्वास्थ्य संवर्धन हेतु हमें इन साधनाओं का अपनी सामर्थ्य के अनुसार नियमित अभ्यास करना चाहिये।

3.5 शब्दावली—

मानसदर्शन – किसी व्यक्ति, वस्तु या परिस्थिति का मानसिक प्रतिबिम्ब बनाना।

विधेयात्मक – सकारात्मक

प्रार्थी – प्रार्थना करने वाला

आध्यात्मवेदता – अध्यात्म अथवा आत्मा – परमात्मा को जानने वाला।

निःसृत – निकलना, निष्कासित होना।

प्रक्षेपित करना – आरोपित करना।

श्वास – साँस लेना अर्थात् वायु को भीतर लेना।

प्रश्वास – साँस छोड़ना अर्थात् दूषित प्राणवायु को बाहर निकालना।

बंध – प्राण को शरीर के क्षेत्र विशेष में बाँध देना।

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर—

(खण्ड – क)

1. सत्य
2. सत्य
3. सत्य

(खण्ड – ख)

1. (ग)
2. (ख)

3. (घ)

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची—

1. जैन, देवेन्द्र। (2005), रेकी से चिकित्सा कैसे करें? पापुलर बुक डिपो जयपुर।
2. पण्ड्या, प्रणव (2011), आध्यात्मिक चिकित्सा एक समग्र उपचार पद्धति। श्री वेदमाता गायत्री ट्रस्ट, शांतिकुज, हरिद्वार, उत्तराखण्ड।
3. मक्कड़, मोहन। (2004), रेकी विद्या। ग्रंथ अकादमी, नई दिल्ली।

3.8 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. वैकल्पिक चिकित्सा। (2004), डॉ० आर०एस० विवेका डायमंड बुक्स, नई दिल्ली।
2. वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियाँ (2005), डॉ० राजकुमार प्रुथी। प्रभात पेपरबैक्स, नई दिल्ली।

3.9 निबंधात्मक प्रश्न—

प्रश्न 1 — रेकी चिकित्सा में सहायक साधना के रूप में मन्त्र जप एवं स्वाध्याय की उपयोगिता पर प्रकाश डालिये।

प्रश्न 2 — रेकी चिकित्सा में सहायक विभिन्न साधनाओं का वर्णन कीजिये।

इकाई-4. रेकी चिकित्सा द्वारा उपचार

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 रेकी चिकित्सा द्वारा उपचार

4.3.1 उर्जा केन्द्र : चक्र

4.3.2 रेकी चिकित्सा द्वारा उपचार की प्रक्रिया

4.3.3 विभिन्न रोगों में रेकी चिकित्सा

4.4 सारांश

4.5 पारिभाषिक शब्दावली

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.7 सन्दर्भग्रन्थ सूची

4.8 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

4.9 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना—

प्रिय पाठकों, इससे पूर्व की ईकाईयों में आप रेकी चिकित्सा के इतिहास, अवधारणा, नियम एवं रेकी में सहायक साधनाओं के विषय में अध्ययन कर चुके हैं। प्रस्तुत ईकाई में हमारे अध्ययन का विषय है— **“रेकी चिकित्सा द्वारा उपचार”** अर्थात्— रेकी चिकित्सा की प्रक्रिया क्या है? विभिन्न रोगों में किस प्रकार रेकी दी जाती है? रेकी द्वारा स्वयं का एवं दूसरों का उपचार किस प्रकार किया जाता है? इत्यादि।

तो आइये, हम चर्चा करते हैं, रेकी चिकित्सा की उपचार प्रक्रिया के विषय में।

4.2 उद्देश्य—

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत ईकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप—

- (1) रेकी चिकित्सा की उपचार प्रक्रिया को स्पष्ट कर सकेंगे।
- (2) विभिन्न चक्रों की स्थिति एवं कार्य का वर्णन कर सकेंगे।
- (3) विविध रोगों की रेकी चिकित्सा का विवेचन कर सकेंगे।

4.3 रेकी चिकित्सा द्वारा उपचार—

प्रिय पाठकों, जैसा कि आपको ज्ञात है कि रेकी चिकित्सा प्राण उर्जा के सिद्धांत पर आधारित है। इस चिकित्सा पद्धति में रेकी चिकित्सक, पीड़ित या रोगी व्यक्ति में प्राणऊर्जा को प्रक्षेपित करता है। रेकी चिकित्सा के अनुसार भौतिक शरीर के अतिरिक्त हमारा एक ऊर्जा शरीर भी होता है। नकारात्मकता के कारण अथवा प्राण ऊर्जा में अवरोध आने के कारण पहले यह ऊर्जाशरीर रोगग्रस्त होता है और बाद में इसके लक्षण भौतिक या स्थूल शरीर में दिखायी देते हैं। रेकी विशेषज्ञों का मानना है कि हमारे उर्जा शरीर में ब्रह्माण्डीय ऊर्जा को ग्रहण करने के लिए कुछ केन्द्र होते हैं, इन ऊर्जा केन्द्रों को “चक्र” कहते हैं। इन चक्रों के माध्यम से प्राण उर्जा भौतिक शरीर में पहुँचती है, जिससे शरीर के सभी अंग ठीक प्रकार से कार्य करने लगते हैं, परिणामस्वरूप रोग का निवारण होता है।

पाठकों, आपके मन में चक्रों के बारे में विस्तारपूर्वक जानने की जिज्ञासा हो रही होगी। तो आइये, रेकी चिकित्सा की प्रक्रिया को जानने से पूर्व हम अध्ययन करते हैं, चक्रों के विषय में।

4.3.1 ऊर्जा केन्द्र : चक्र—

प्रिय पाठकों, रेकी चिकित्सा में चक्रों का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। चक्रों की जानकारी के बिना रेकी चिकित्सा की कल्पना ही नहीं की जा सकती। वैसे तो चक्र अनेक हैं, किन्तु रेकी चिकित्सा की दृष्टि से सात चक्र अधिक महत्वपूर्ण हैं। जिनका विवेचन निम्नानुसार हैं—

1. सहस्रार चक्र
2. आज्ञा चक्र
3. विशुद्धि चक्र
4. अनाहत चक्र
5. मणिपुर चक्र
6. स्वाधिष्ठान चक्र
7. मूलाधार चक्र

(1) सहस्रार चक्र— (पीनियल ग्लैण्ड) — पाठकों, चक्रों में सहस्रार चक्र सर्वाधिक महत्वपूर्ण। यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का प्रवेश द्वार है। इस चक्र के ध्यान से अलौकिक आनंद की प्राप्ति होती है, क्योंकि यह उच्चतम चेतना शक्ति के साथ हमारा सम्पर्क जोड़ता है। इस चक्र का रंग गहरा बैंगनी माना गया है। शारीरिक दृष्टि से देखें तो यह पीनियल ग्रन्थि का स्थान है। इसका संबंध उर्ध्व मस्तिष्क एवं दांयी आँख से है। सहस्रार चक्र में शिव और शक्ति का मिलन होता है, अर्थात् साधना के माध्यम से जब मूलाधार चक्र में विद्यमान सुप्त कुण्डलिनी जागृत होती है, तब यह विभिन्न चक्रों का भेदन करती हुयी सहस्रार चक्र में शिव के साथ मिल जाती है। इसलिये इस स्थल को स्थूल एवं सूक्ष्म का मिलन बिन्दु कहा गया है।

(2) आज्ञा चक्र (पिट्यूटरी ग्लैण्ड) — चक्रों के क्रम में यह ऊपर से दूसरा चक्र है। इस चक्र को तीसरी आँख के नाम से भी जाना जाता है। इस चक्र का रंग गहरा नीला है। शारीरिक दृष्टि से यह पिट्यूटरी ग्रन्थि का स्थान है। आज्ञा चक्र अन्तर्दर्शन का केन्द्र है। इस चक्र के जागृत होने पर भविष्य में होने वाली घटनाओं का पहले ही आभास हो जाता है तथा दूरदर्शन, दूरश्रवण, दिव्यदृष्टि आदि अनेक सिद्धियों की प्राप्ति होती है। आज्ञाचक्र पर ध्यान करने से क्रोध एवं आवेग शान्त होकर परम आनंद एवं असीम शांति की प्राप्ति होती है। इस चक्र के सक्रिय या निष्क्रिय होने से हमारे निर्णय प्रभावित होते हैं। यह चक्र वासनाओं को भी नियंत्रित करता है। आज्ञा चक्र मनसत्त्व का प्रतीक है।

(3) विशुद्धि चक्र (थायराइड ग्रन्थि)— यह पंचमहाभूतों में आकाश तत्व का प्रतीक है। इसका रंग आसमानी माना गया है। विशुद्धि चक्र के जागृत होने पर साधक का जीवन के प्रति तटस्थ दृष्टिकोण विकसित हो जाता है। यह समभाव में जीने लगता है तथा सृष्टि के प्रत्येक पदार्थ को चाहे वह जड़ हो या चेतन ईश्वरीय कृति मानकर उसके प्रति प्रेमभाव रखता है। विशुद्धि चक्र थायराइड एवं पैराथायराइड ग्रन्थियों का क्षेत्र है। थायराइड ग्रन्थि व्यक्ति के जीवन की गति को नियंत्रित करती है। इस ग्रन्थि की सक्रियता से जीवन में भी सक्रियता आ जाती है और क्षमता बढ़ जाती है। विशुद्धि चक्र, स्वाधिष्ठान एवं मूलाधार चक्र पर भी प्रभाव डालता है।

(4) अनाहत या हृदय चक्र (थायमस ग्रन्थि) — इस चक्र का रंग हल्का हरा है। अनाहत चक्र का संबंध वायुतत्व से है। इसका संबंध थोइमस ग्रन्थि से है। शिशु के जीवन के विकास में इस ग्रन्थि की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसके साथ ही विशुद्धि चक्र, श्वसन तंत्र एवं रक्तपरिसंचरण तंत्र से सम्बद्ध है।

(5) मणिपुर चक्र (एंड्रीनल ग्रन्थि) — पाठकों, मणि का शाब्दिक अर्थ है—रत्न, और पुर का अर्थ है—नगर। इस प्रकार मणिपुर का शाब्दिक अर्थ हुआ—“रत्नों का नगर।” आप सोच रहे होंगे कि इस चक्र को मणियों या रत्नों का नगर क्यों कहा जाता है। इसका कारण यह है कि इस क्षेत्र में प्राण उर्जा प्रचण्डतम रहती है। यह चक्र अग्नि तत्व का प्रतीक है। इसका स्थान नाभि के ठीक पीछे मेरुदण्ड के मध्य में माना गया है। यह चमकीले पीले रंग का होता है। शारीरिक दृष्टि से देखें तो इसका संबंध पाचन संस्थान एवं एंड्रीनल ग्रन्थि से है। इसी चक्र द्वारा सम्पूर्ण शरीर में प्राण उर्जा वितरित होती है। यह आत्मविश्वास एवं शक्ति का केन्द्र है। मान, सम्मान, प्रतिष्ठा, धन इत्यादि महत्वकांक्षाओं की अभिव्यक्ति इसी के माध्यम से होती है। किसी भी प्रकार के विकारों का प्रभाव सर्वप्रथम इस चक्रपर पड़ता है। लोभ, घृणा, द्वेष, क्रोध, भय इत्यादि वृत्तियाँ इसी चक्र द्वारा अभिव्यक्त होती हैं।

(6) स्वाधिष्ठान चक्र —(गोनेडस ग्रन्थि) — स्व का अर्थ है “अपना” और अधिष्ठान का अर्थ है—“निवास स्थान”। इस प्रकार स्वाधिष्ठान का अर्थ है—“अपने रहने का स्थान”। इसका आशय यह है कि स्वाधिष्ठान चक्र हमारे अचेतन मन से संबंधित है। हमारे जन्म—जन्मान्तर के संस्कारों का संबंध इसी चक्र से है। पूर्वजन्म के सभी संस्कार और स्मृतियाँ मस्तिष्क के उस भाग में संगृहीत रहती हैं, जो स्वाधिष्ठान चक्र से जुड़ा रहता है। यह सांसारिक भोग विलासों का केन्द्र है। इसी चक्र के कारण व्यक्ति आहार, निद्रा, मैथुन आदि भोगों का उपभोग करता है। यह चक्र मेरुदण्ड के आधार पर स्थित होता है। गुदा के ठीक उपर टेलबोन या कोविसक वाला क्षेत्र स्वाधिष्ठान चक्र का स्थान है। यह जल तत्व का प्रतीक है तथा इसका संबंध प्रजनन तंत्र से है। रक्त संचार का नियंत्रण इसी चक्र के द्वारा होता है। यह चक्र नारंगी रंग का होता है।

(7) मूलाधार चक्र (एंड्रीनल एवं गोनेडस ग्रन्थि)— मानसिक चेतना के उत्थान की आधारभूमि होने के कारण इसे “मूलाधार चक्र” कहा जाता है। यह गुदा एवं गुप्तांगों के बीच में स्थित होता है अर्थात्—गुदा मूल से दो अंगुल ऊपर इसका स्थान माना गया है। पंचमहाभूतों में यह पृथ्वी तत्व का प्रतीक माना जाता है तथा चमकीले लाल रंग का होता है।

मूलाधार चक्र में ही कुण्डलिनी शक्ति सुप्तावस्था में विद्यमान रहती है तथा साधना के द्वारा इसे जागृत किया जाता है। इड़ा, पिंगला एवं सुषुम्ना इन नाड़ियों का उद्गम स्रोत यही स्थल हैं। मूलाधार चक्र, आज्ञा चक्र से जुड़ा हुआ है। आज्ञा चक्र में ये तीनों नाड़ियाँ (इड़ा, पिंगला एवं सुषुम्ना) पुनः मिल जाती हैं। हमारी जीने की इच्छा का कारण यही मूलाधार चक्र है। इसी चक्र के कारण व्यक्ति सांसारिक भोग विलासों को संगृहीत करता है। मूलाधार चक्र की हमारे समग्र स्वास्थ्य को बनाये रखने में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इस चक्र के जागरण से आरोग्यता एवं निर्भयता की प्राप्ति होती है।

प्रिय पाठकों, इस प्रकार उपरोक्त विवरण से आप समझ गये होंगे कि चक्र क्या है? और रेकी चिकित्सा में इनकी क्या भूमिका है। आपकी जानकारी के लिये यह और बता दें कि इन चक्रों की स्थिति मेरुदण्ड में पीछे की ओर होती है तथा ये वायु के बवंडरों की तरह गोलाकार अत्यन्त तीव्र गति से घुमते हैं। इसीलिये इन्हें ‘चक्र’ कहते हैं। ये चक्र एक

बार घड़ी की सुई की दिशा में (Clock-wise) और एक बार घड़ी की सुई की विपरीत दिशा (Anti- Clockwise) में घूमते हैं। घड़ी की सुई की दिशा में घूमे हुये ये ब्रह्माण्ड से प्राण उर्जा को प्राप्त करते हैं तथा विपरीत दिशा में घूमे हुये सम्पूर्ण शरीर की नाड़ियों में उर्जा को प्रवाहित करते हैं।

पाठकों, सूक्ष्म शरीर में विद्यमान इन चक्रों का संबंध हमारे भौतिक शरीर से है। अतः ये चक्र शरीर के विभिन्न अंगों की कार्यप्रणाली को प्रभावित करते हैं। किस-किस चक्र का संबंध शरीर के कौन-कौन से अंगों से, इनका विवरण नीचे दिया जा रहा है—

(1) मूलाधार चक्र (Root Chakra) –

- ❖ एड्रीनल ग्रन्थि
- ❖ यौनांग
- ❖ सम्पूर्ण शरीर में उर्जा का संचार
- ❖ अस्थियाँ
- ❖ माँसपेशियाँ
- ❖ रक्त
- ❖ शरीर में ताप का नियंत्रण

(2) स्वाधिष्ठान चक्र (Sacral Chakra)

- ❖ प्रजनन तंत्र से संबंधित अंग
- ❖ उत्सर्जन तंत्र से संबंधित अंग
- ❖ पैर

(3) मणिपुर चक्र (Solar Chakra)

- ❖ किडनी
- ❖ एड्रीनल ग्रन्थि
- ❖ चकृत
- ❖ आमालशय
- ❖ छोटी एवं बड़ी आँत
- ❖ रक्तचाप का नियंत्रण
- ❖ जीवन उर्जा का वितरण केन्द्र
- ❖ गर्मी एवं ठंड का नियंत्रण

(4) अनाहत या हृदय चक्र (Heart Chakra)

- ❖ हृदय
- ❖ रक्त संचार
- ❖ थायमस ग्रन्थि
- ❖ फेफड़े

(5) विशुद्धि चक्र (Throat Chakra)

- ❖ कंठ प्रदेश
- ❖ थायराइड ग्रन्थि

❖ पैराथायराइड ग्रन्थियाँ

(6) आँजा चक्र (Thirid eye or Brow Chakra)

❖ पीयूष ग्रन्थि

❖ पीनियल ग्रन्थि

❖ अन्य सभी अन्तःस्रावी ग्रन्थियों का नियंत्रण

(7) सहस्रार चक्र (Crown Chakra)

❖ पीनियल ग्रन्थि

❖ मस्तिष्क

इस प्रकार आप समझ गये होंगे कि शरीर के विभिन्न अंग किस प्रकार भिन्न-भिन्न चक्रों से संबंधित हैं। इन अंगों के कार्यों में विकृति आने पर संबंधित चक्र पर रेकी दी जाती है।

4.3.2 रेकी चिकित्सा द्वारा उपचार की प्रक्रिया—

प्रिय विद्यार्थियों, चक्रों के विवरण के बाद अब हम अध्ययन करते हैं, रेकी चिकित्सा की उपचार की प्रक्रिया के बारे में।

रेकी चिकित्सा की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसके द्वारा दूसरों के उपचार के साथ-साथ स्वयं का भी उपचार किया जा सकता है। रेकी चिकित्सा की प्रक्रिया का विवेचन निम्नानुसार है—

रेकी द्वारा दूसरों का उपचार—

- रेकी चिकित्सा देने से पहले सर्वप्रथम रेकी का, इससे संबंधित दैवीय शक्तियों का एवं गुरुजनों का आह्वाहन किया जाता है।
- इसके बाद रेकी चिकित्सा कक्ष को सकारात्मक बनाने के लिये कमरे की चारों दीवारों, छत एवं फर्श पर शक्ति प्रतीक बनाये जाते हैं। इन शक्ति प्रतीकों को लिखकर भी बनाया जा सकता है और अपने हाथ से हवा में बनाकर भी प्रयुक्त किया जा सकता है।
- इसके उपरान्त रेकी कक्ष को नकारात्मक उर्जा से मुक्त करने हेतु भीनी सुगन्ध का प्रयोग किया जाता है। इसके लिये धूप, अगरबत्ती इत्यादि का प्रयोग किया जा सकता है।
- रेकी कक्ष का वातावरण शान्त एवं सकारात्मक हो, इसके लिये ऐसी व्यवस्था बनायी जाती है, ताकि किसी भी प्रकार का शोर रेकी चिकित्सा में बाधा न पहुँचाये। जैसे की मोबाइल का स्विच बन्द कर देना, टेलीफोन के रिसीवर को उठाकर रख देना आदि।
- रेकी चिकित्सा प्रभावी हो, इस हेतु रोगी की ग्रहणशीलता को बढ़ाना अति आवश्यक है। इसलिये रेकी देने से पहले रोगी को मौजे अंगूठी, बेल्ट, घड़ी, जंजीर और ऐसी कोई भी चीज जो शरीर पर दबाव डाल रही हो, उसे निकालने का निर्देश देते हैं, जिससे कि रेकी के प्रवाह में किसी प्रकार की बाधा न पहुँचे।
- रेकी चिकित्सा से पहले यदि रोगी एवं चिकित्सक दोनों तनाव शैथिल्य की प्रक्रिया से गुजर लें तो इससे रेकी चिकित्सा और भी अधिक प्रभावशाली हो

- जाती है। इसके लिये जीभ को मोड़कर तालु से लगाना चाहिये तथा दीर्घ श्वास-प्रश्वास का अभ्यास करना चाहिये।
- रेकी चिकित्सा के लिये उपयुक्त वातावरण बनाने में मधुर एवं मद्धिम संगीत भी अत्यन्त सहायक होता है। बाँसुरी की धुन इस हेतु अत्यन्त उपयुक्त है। तेज रॉक एवं पॉप संगीत नहीं बजाना चाहिये, क्योंकि तनाव एवं उत्तेजना पैदा करता है।
 - रेकी चिकित्सा के दौरान इस बात का भी खास ध्यान रखा जाना चाहिये कि रेकी चिकित्सा कक्ष में प्रकाश मन्द हो। नीले बल्ब का प्रकाश रेकी के लिये अत्यन्त उपयुक्त है।
 - रोगी के बस्त्र सूती एवं आरामदायक होने चाहिये।
 - रेकी चिकित्सा कक्ष में टेबल एवं कुर्सी की उपयुक्त व्यवस्था होनी चाहिये, जिससे कि रेकी के दौरान आवश्यकतानुसार रोगी को बिठाया और लिटाया जा सके।
 - आधा बाल्टी (लगभग 5लीटर) पानी में 200-250 ग्राम नमक डालकर रेकी चिकित्सा कक्ष में रखते हैं। नमकयुक्त पानी रोगी और वातावरण के नकारात्मक उर्जा को सोख लेता है, जिससे रेकी के प्रवाह में सहायता मिलती है।
 - इसके बाद रोगी व्यक्ति की स्कैनिंग की जाती है। स्कैनिंग का अर्थ है— आन्तरिक आभा की जाँच करना अर्थात्— किस चक्र में उर्जा की कमी है और किस चक्र में उर्जा का घनत्व ज्यादा है, इसकी जाँच करके रोग का निदान करना। प्रारंभ में स्कैनिंग ऊपर से नीचे अर्थात्— सिर से पैर तक की जाती है। इसके बाद अगल-बगल में। जिस तरफ उर्जा की कमी होती है, उधर रेकी देते हैं और जहाँ उर्जा ज्यादा होती है, वहाँ पर शुद्धिकरण के द्वारा उर्जा को संतुलित किया जाता है। प्रारंभ में हथेलियों को कप जैसी आकृति में बनाते हुये बन्द हाथों से और फिर खुली अंगुलियों से शुद्धिकरण की प्रक्रिया की जाती है। शुद्धिकरण करते हुये हाथों को नीचे लाते समय नमकयुक्त पानी में इस प्रकार छिटकना चाहिये जैसे किसी गन्दी चीज के लग जाने पर हाथों को जोर-जोर से छिड़कते हैं। शुद्धिकरण के दौरान यह भावना की जाती है कि नकारात्मक उर्जा बाहर निकल रही है।
 - रोगग्रस्त अंग पर एवं उससे संबंधित चक्र पर रेकी ज्यादा देर तक देनी होती है। रोगयुक्त अंग पर रेकी तब तक देते रहना चाहिये जब तक की हाथों के चक्रों से रेकी का प्रवाह अनुभव होता रहे। जब ऐसा लगे की रेकी का प्रवाह कम हो गया हो या बन्द हो गया हो, तब रेकी देना बन्द कर देना चाहिये। वैसे तो रेकी की अपनी चेतना होती और यह तब तक प्रवाहित होती रहती है, जब तक कि उर्जा पूरी तरह संतुलित न हो जाये। उर्जा के संतुलित होने पर रेकी का प्रवाह स्वतः बन्द हो जाता है।
 - रेकी देने के लिये विभिन्न प्रकार की हस्त स्थितियों को अपना जाता है। हथेलियों को अंजलि के आकार में रखना होता है। पाठकों रेकी विशेषज्ञों ने इस हस्त स्थितियों का एक क्रम बताया है, जो रेकी के प्राकृतिक प्रवाह के

अनुसार ही बनाया गया है। शरीर के विभिन्न हिस्सों एवं चक्रों पर हथेलियों को रखने का क्रम निम्नानुसार है—

शरीर के अग्रभाग हेतु हस्तस्थितियाँ—

1. **आँखें**— सर्वप्रथम दोनों हाथों को दोनों आँखों पर रखा जाता है।
2. **कनपटी**— इसके बाद दोनों हथेलियों को दोनों तरफ कनपटी पर रखते हैं।
3. **कान**— तदनन्तर दोनों हथेलियाँ दोनों कानों पर रखते हैं।
4. **माथा एवं सिर का पीछे का भाग**— अब अपनी सुविधानुसार एक हाथ माथे पर एवं दूसरा हाथ सिर के पिछले भाग पर रखते हैं।
5. **दोनों हाथ सिर के पीछे**— अब एक हाथ पर दूसरा हाथ रखते हुये दोनों हाथ सिर के पीछे रखते हैं।
6. **विशुद्धि चक्र**— एक हाथ कंठ प्रदेश पर और दूसरा गर्दन के पीछे
7. **थायमस एवं थाइराइड ग्रन्थियाँ**— अब दोनों हाथ कंठमणि से 1-1/2 इंच की दूरी पर थायमस एवं थाइराइड ग्रन्थि वाले स्थान पर रखते हैं।
8. **अनाहत या हृदय चक्र**— दोनों हाथ छाती के बीच में अनाहत चक्र वाले स्थान पर रखते हैं।
9. **मणिपुर चक्र**— दोनों हाथ मणिपुर चक्र वाले स्थान पर रखते हैं।
10. **जिगर या यकृत**— अब दोनों हाथ नाभि के पास दायीं ओर जिगर पर रखते हैं।
11. **फेफड़े**— अब दोनों हाथों को दोनों फेफड़ों की टिप पर रखते हैं।
12. **तिल्ली**— इसके बाद दोनों हाथ नाभि के बायीं ओर तिल्ली (प्लीहा) पर रखते हैं।
13. **स्वाधिष्ठान चक्र**— अब दोनों हथेलियों को नाभि के थोड़ा नीचे स्वाधिष्ठान चक्र के स्थान पर रखते हैं।
14. **मूलाधार चक्र**— अब दोनों हाथों को मूलाधार चक्र वाले स्थान पर रखते हैं। पुरुष एवं महिलाओं में यह स्थिति पृथक-पृथक होती है। स्त्रियों में अंडाशय वाले स्थान पर एवं पुरुषों में शुक्राणु वाले स्थान पर हाथों को रखा जाता है।
15. **जंघा**— अब दाँयां हाथ दाँयी जंघा पर रखते हैं।
16. **घुटना**— इसके बाद दाँयी हथेली दाँयें घुटने पर एवं बाँयीं हथेली बाँये घुटने पर रखते हैं।
17. **पिंडलियाँ**— अब दाँयी हथेली दाँयीं पिण्डली पर एवं बाँयीं हथेली बाँयीं पिण्डली पर रखते हैं।
18. **बाँये पैर का टखना एवं तलुवा**— अब एक हाथ बाँयें पैर के टखने पर एवं दूसरा हाथ बाँयें तलुए पर रखते हैं।
19. **दाँये पैर का टखना एवं तलुवा**— अब तक हाथ दाँयें पैर के टखने पर एवं दूसरा हाथ दाँयें तलुवे पर रखते हैं।

शरीर के पश्चभाग हेतु हस्तस्थितियाँ—

पाठकों, रेकी चिकित्सा के लिये शरीर के पिछले भाग में हाथों की स्थितियाँ निम्नानुसार हैं—

1. कंधा (पिछला भाग)— बाँयी हाथ बाँयें कंधे पर एवं दाँयां हाथ दाहिने कंधे पर।
2. थायमस एवं थाइराइड ग्रन्थियाँ— शरीर के पिछले वाले हिस्से में थायमस एवं थाइराइड ग्रन्थि वाले स्थानों पर दोनों हाथों को रखते हैं।
3. अनाहत चक्र— पिछले भाग में हृदय या अनाहत चक्र पर दोनों हाथों को रखते हैं।
4. मणिपुर चक्र— शरीर के पिछले हिस्से में मणिपुर चक्र वाले स्थान पर दोनों हाथों को रखते हैं।
5. किडनी— दोनों हाथों को दोनों किडनी पर रखते हैं।
6. स्वाधिष्ठान चक्र— शरीर के पिछले भाग में स्वाधिष्ठान चक्र वाले स्थान पर दोनों हथेलियों को रखते हैं।
7. मूलाधार चक्र— अब दोनों हथेलियों को शरीर के पिछले भाग में मूलाधार चक्र वाले स्थान पर रखते हैं।

प्रिय पाठकों, इस सन्दर्भ में एक तथ्य पर ध्यान देना अति आवश्यक है कि सामान्य तौर पर तो रेकी देते समय इसी क्रम को अपनाना चाहिये, किन्तु जब कोई गंभीर स्थिति हो तब केवल रोगग्रस्त अंग या चक्र को ही रेकी दी जा सकती है। जैसे यदि नाक से संबंधित कोई रोग हो तो केवल नाक पर एवं उससे संबंधित चक्र पर रेकी दी जा सकती है और पैर से संबंधित कोई रोग है तो केवल पैर एवं उससे संबंधित चक्र पर रेकी दी जा सकती है, किन्तु रेकी विशेषज्ञों का मत है कि चाहे कोई भी समस्या हो, प्रत्येक स्थिति में मूलाधार एवं मणिपुर चक्र को रेकी दी जानी चाहिये तथा हृदय रोगियों को सामने के अनाहत चक्र पर रेकी नहीं देनी चाहिये। ऐसे रोगियों को शरीर के पिछले भाग में अनाहत चक्र पर रेकी देनी चाहिये तथा इसके साथ ही यह भी ध्यान रखना चाहिये कि सहस्रार चक्र एवं नाभि पर रेकी न दें।

- रेकी के बाद रोगी को कम से कम 12 घण्टे तक स्नान नहीं करना चाहिये अथवा रोगग्रस्त अंग को पानी से नहीं धोना चाहिये।
- रेकी देते समय रेकी चिकित्सक को अपनी अंगुलियों के पोरों से नीले रंग की या हल्के चमकीले बैंगनी रंग के निकलने की कल्पना करनी चाहिये।
- रेकी देने के पश्चात् रोगी का आभा मण्डल जरूर सील करना चाहिये, जिससे कि प्राण उर्जा लीक न हो, आभामण्डल को सील करने के लिये रेकी देने के बाद पूरे शरीर के ऊपर 1-2 इंच की दूरी पर हाथ फेरना चाहिये और यह भावना करनी चाहिये कि हल्के नीले रंग से रोगी का आभामण्डल सील हो रहा है।
- रेकी देने के बाद रोगी के आभामण्डल और अपने आभामण्डल के बीच की काल्पनिक डोरी को अपनी कल्पना से काट देना चाहिये।
- इसके बाद रेकी, संबंधित दैवीय शक्तियों और गुरुजनों को धन्यवाद देना चाहिये।
- रेकी देने के बाद अपने हाथों को कोहनी तक नमक के पानी या साबुन से जरूर धोना चाहिये।

- रेकी चिकित्सा के परिणामों के प्रति रेकी विशेषज्ञ को निर्लिप्त रहना चाहिये और आशावादी दृष्टिकोण रखना चाहिये।

4.3.3 विभिन्न रोगों में रेकी चिकित्सा—

प्रिय पाठकों, अब हम चर्चा करते हैं कि भिन्न-भिन्न रोगों में रेकी चिकित्सा कैसे दी जाती है। किस बीमारी में किस चक्र को रेकी देकर उर्जा को संतुलित किया जाता है, इसका विवेचन निम्नानुसार है—

चक्र का नाम

(1) मुलाधार चक्र

बीमारी का नाम

- कैंसर
- ल्यूकमिया
- एलर्जी
- अस्थमा
- शारीरिक कमजोरी
- यौन संबंधी रोग
- जोड़ों का दर्द
- कमर दर्द
- रक्त संबंधी बीमारियाँ
- मानसिक रोग
- बच्चों का समुचित
- विकास न होने पर
- कब्ज
- प्रसव में कठिनाई होने पर
- छोटी एवं बड़ी आँत से संबंधित रोग
- मधुमेह
- अल्सर
- उच्च रक्त कोलेस्ट्रॉल
- हृदय रोग
- किडनी से संबंधित रोग
- उच्चरक्तचाप
- कमर दर्द इत्यादि

(2) स्वाधिष्ठान चक्र—

- मूत्राशय से संबंधित रोग
- यौन संबंधी कमजोरी
- उच्च रक्तचाप

(3) मणिपुर चक्र—

- कमर दर्द
- किडनी संबंधीरोग
- उर्जा की कमी
- कब्ज

- आँत संबंधी रोग
 - उच्चरक्त कोलेस्ट्रॉल
 - मधुमेह
 - अल्सर
 - यकृत संबंधी रोग
 - गठिया
 - संवेगों का नियन्त्रण
- (4) अनाहत या हृदय चक्र—
- संवेगों का नियंत्रण
 - फेफड़ों संबंधी रोग
 - हृदय रोग
 - रक्तसंबंधी रोग
- (5) विशुद्धि चक्र—
- गले से संबंधित रोग
 - अस्थमा
 - गलगण्ड इत्यादि
- (6) आज्ञा चक्र—
- कैंसर
 - अस्थमा
 - एलर्जी
 - अन्तःस्रावी संबंधी रोग
 - तंत्रिका तंत्र संबंधी रोग
- (7) सहस्रार चक्र—
- मानसिक रोग
 - तंत्रिका तंत्र संबंधीरोग
 - पीनियल ग्रन्थि संबंधीरोग

पाठकों, इस प्रकार आप समझ गये होंगे कि जो रोग होता है, उससे संबंधित चक्र को उर्जित करके या शुद्धिकरण करके उर्जा को संतुलित करते हैं, जिससे रोग दूर होता है।

4.4 सारांश—

प्रिय पाठकों, उपरोक्त विवरण से आप रेकी चिकित्सा की प्रक्रिया को भली-भाँति समझ गये होंगे। जैसे किसी भी चिकित्सा पद्धति में सर्वप्रथम रोग का निदान किया जाता है, उसके बाद उपचार करते हैं, ठीक इसी प्रकार रेकी में भी चक्रों की स्कैनिंग करके पहले रोग का पता लगाते हैं, कि रोग कौनसा है और किस चक्र से संबंधित है। इसके बाद जहाँ उर्जा की कमी होती है, वहाँ उर्जा दी जाती है और जहाँ उर्जा की कमी होती है वहाँ शुद्धिकरण करके उर्जा को संतुलित करते हैं।

इस प्रकार प्राण उर्जा को संतुलित करके रेकी द्वारा विभिन्न रोगों का उपचार किया जाता है। इस संबंध में एक बात का ध्यान रखना चाहिये कि रेकी देने से पहले रोगी के साथ मुस्कुराकर सहानुभूतिपूर्वक व्यवहार करना चाहिये तथा रोग या चिकित्सा के विषय में

उसकी जो भी आशंकायें या जिज्ञासायें हो उनका समाधान करना चाहिये। रोगी को इस बात का विश्वास दिलाना चाहिये कि आप उसके हितैषी हैं तथा उसकी समस्या को दूर करने का यथा संभव प्रयास करेंगे।

4.5 पारिभाषिक शब्दावली—

सुप्त कुण्डलिनी शक्ति —सुप्त (सोयी हुयी) प्राणशक्ति

समभाव — सुख-दुःख, सफलता-असफलता में तटस्त बने रहना अर्थात्—दोनों परिस्थितियों में समान भाव से जीना। सुख न तो अत्यधिक सुखी और दुःख में न अत्यधिक दुःखी होना।

मनस् तत्त्व— मन

नाड़ियाँ — उर्जा प्रवाह पथ, जिनमें प्राण बहता है।

इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना— योगाचार्यों के अनुसार हमारे शरीर में लगभग 72,000 नाड़ियाँ पायी जाती है, जिनमें इड़ा-पिंगला और सुषुम्ना—ये तीन नाड़ियाँ प्रधान मानी गयी हैं।

विकृति— विकार या रोग

हितैषी— हित या भला चाहने वाला।

अग्रभाग— आगे का भाग

पश्चभाग— पीछे का भाग

अभ्यासार्थ प्रश्न—

(1) निम्न में चक्र किस चक्र का संबंध पाचन तंत्र से है—

- (क) मूलाधार चक्र
- (ख) स्वाधिष्ठान चक्र
- (ग) अनाहत चक्र
- (घ) मणिपुर चक्र

(2) विशुद्धि चक्र का संबंध है—

- (क) थाइराइड ग्रन्थि से
- (ख) पैराथायराइड ग्रन्थि से
- (ग) पिट्यूटरी ग्रन्थि से
- (घ) क एवं ख दोनों

(3) कौन सा चक्र पृथ्वी तत्व का प्रतीक हैं—

- (क) सहस्रार चक्र
- (ख) आज्ञा चक्र
- (ग) विशुद्धि चक्र
- (घ) मूलाधार चक्र

(4) पिट्यूटरी ग्रन्थि का संबंध है—

- (क) विशुद्धि चक्र से
- (ख) आज्ञा चक्र से
- (ग) सहस्रार चक्र से

(घ) उपर्युक्त सभी

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर—

- (1) घ
 - (2) घ
 - (3) घ
 - (4) ख
-

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची—

- (1) जैन देवेन्द्र (2005), रेकी से चिकित्सा कैसे करें? पापुलर बुक डिपो, जयपुर।
-

4.8 सहायक, उपयोगी पाठ्य सामग्री—

डॉ. प्रणव पण्ड्या (2004)— आध्यात्मिक चिकित्सा एक समग्र उपचार पद्धति।
शांतिकुंज, हरिद्वार, उत्तराखण्ड।

4.9 निबंधात्मक प्रश्न—

प्रश्न.1 रेकी चिकित्सा के सन्दर्भ में विभिन्न चक्रों का वर्णन कीजिए।

प्रश्न.2 रेकी चिकित्सा की उपचार प्रक्रिया को समझाइये।

इकाई – 5 रेकी चिकित्सा के लाभ।

- 5.1 प्रस्तावना
- 5.2 उद्देश्य
- 5.3 रेकी चिकित्सा के लाभ
- 5.4 रेकी चिकित्सा हेतु व्यवहारिक सुझाव
- 5.5 रेकी चिकित्सा की सीमायें
- 5.6 सारांश
- 5.7 शब्दावली
- 5.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 5.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
- 5.10 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री
- 5.11 निबंधात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना—

प्रिय पाठकों, इससे पूर्व की इकाई में आपने जाना की रेकी के द्वारा किस प्रकार से विभिन्न रोगों का उपचार किया जाता है। प्रस्तुत ईकाई में हम रेकी के लाभ, सीमाओं एवं इसको प्रभावी बनाने हेतु आवश्यक कुछ व्यवहारिक सुझावों की चर्चा करेंगे।

जिज्ञासु विद्यार्थियों, जैसा कि आप परिचित हो गये होंगे की रेकी एक वैकल्पिक एवं पूरक चिकित्सा पद्धति है, जिसके लाभ अनगिनत एवं हानि की संभावना ना के बराबर हैं। वैसे तो रेकी से अनेक फायदे हैं, लेकिन फिर भी इस पद्धति का महत्पूर्ण लाभ यह है कि इसके द्वारा हम ब्रह्माण्डीय प्राण ऊर्जा से जुड़ जाते हैं, और हमारे वे सभी अवरोध दूर हो जाते हैं, जिनके कारण रोग उत्पन्न होते हैं और परिणामस्वरूप सम्पूर्ण स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है, किन्तु इसके साथ ही रेकी की अपनी कुछ सीमायें एवं सावधानियाँ हैं। यदि सजगतापूर्वक इनका पालन किया जाये तो हम इस पद्धति से अधिकतम लाभ ग्रहण कर सकते हैं और यह विधा हमारे साथ – साथ दूसरों के लिये भी अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

तो आइये, सबसे पहले हम चर्चा करते हैं, रेकी की उपयोगिता के बारे में।

5.2—उद्देश्य —

प्रिय विद्यार्थियों इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप —

1. रेकी के विभिन्न लाभों का स्पष्ट कर सकेंगे।
2. रेकी के लिये आवश्यक व्यावहारिक सुझावों का विवेचन कर सकेंगे।
3. रेकी चिकित्सा की सीमाओं का विश्लेषण कर सकेंगे।

5.3—रेकी चिकित्सा के लाभ —

प्रिय विद्यार्थियों, आपके मन में सहज ही जिज्ञासा उत्पन्न हो रही होगी कि रेकी चिकित्सा से क्या –क्या फायदे हैं, जो हमें आधुनिक या पारम्परिक चिकित्सा से प्राप्त नहीं हो सकते। पाठको, वास्तव में यदि देखा जाये तो रेकी मात्र एक पूरक चिकित्सा पद्धति नहीं वरन् एक समग्र जीवन दर्शन है अर्थात् रेकी सच्चे अर्थों में हमें जीवन जीना सीखाती है।

हम अपनी जीवनशैली को किस प्रकार सुव्यवस्थित कर सकते हैं तथा किस प्रकार ऊर्जा, उत्साह एवं उमंग से युक्त एक आनंदयुक्त जीवन व्यतीत कर सकते हैं, इन सभी के महत्वपूर्ण सूत्र रेकी में समाहित हैं।

रेकी के क्या – क्या लाभ हैं? इसके माध्यम से हम अपने जीवन में क्या अर्जित कर सकते हैं? इसका विवेचन निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत किया जा सकता है—

- ❖ समग्र स्वास्थ्य की प्राप्ति
- ❖ जीवन में सफलता की प्राप्ति
- ❖ समायोजन क्षमता का विकास
- ❖ ब्रह्माण्डीय ऊर्जा से सम्पर्क
- ❖ चक्रों का सक्रिय होना
- ❖ आत्मविश्वास एवं आत्मसम्मान में वृद्धि
- ❖ प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि
- ❖ संतोषजनक संबंध
- ❖ रचनात्मक क्षमताओं का जागरण एवं संवर्द्धन
- ❖ अतीन्द्रिय शक्तियों का जागरण
- ❖ स्वयं के साथ – साथ दूसरों का उपचार
- ❖ अवांछनीय आदतों से मुक्ति
- ❖ दुर्व्यसनों से मुक्ति
- ❖ सुरक्षा

इन सभी का विस्तृत विवेचन निम्नानुसार है –

- ❖ **समग्र स्वास्थ्य की प्राप्ति** – रेकी के माध्यम से केवल भौतिक शरीर अर्थात् शारीरिक स्वास्थ्य की प्राप्ति ही नहीं होती वरन् शरीर के साथ-साथ यह मन एवं आत्मा को भी स्वस्थ करती है क्योंकि रेकी के सिद्धान्त के अनुसार रोगों का मूल कारण नकारात्मक ऊर्जा के कारण ऊर्जा शरीर का विकृत होना है और विकृत ऊर्जा शरीर से बीमारियाँ भौतिक शरीर में प्रविष्ट होती है। इस प्रकार रेकी में रोगों के मूल कारण को ही दूर कर दिया जाता है, जिससे समग्र स्वास्थ्य (Holistic Health) की प्राप्ति होती है।

“रेकी से सम्पूर्ण परिवार, मित्रजनो एवं स्वयं का शारीरिक, भावनात्मक, वैचारिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक स्वास्थ्य बनाया रखा जा सकता है।”

(डॉ० देवेन्द्र जैन: रेकी से चिकित्सा कैसे करें? 2005)

“यह ऊर्जा की रूकावट को हटाकर पूरे शरीर में जीवन ऊर्जा के प्रवाह को सुचारु करती है।” (डॉ० राजकुमार प्रुथी : वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियाँ: 2005)

“रेकी से हमारे अस्तित्व के सभी स्तरों – भौतिक, भावनात्मक एवं मानसिक स्तर पर उपचार संभव होता है।” (डॉ० आर०एस० विवेक : वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियाँ: 2004)

- ❖ **जीवन में सफलता की प्राप्ति** – पाठकों, जीवन में किसी भी सफलता की प्राप्ति का मुख्य कारण शक्ति या ऊर्जा ही है। जिस व्यक्ति के पास जितनी अधिक ऊर्जा होती है, वह उसी अनुपात में अपने जीवन में सफलतायें अर्जित करता चला

जाता है, और रेकी उसी दैवीय ऊर्जा को प्राप्त करने का माध्यम है। इसलिये यदि हमें भी अपने जीवन में यदि सफलतायें प्राप्त करनी हैं, चाहे वे भौतिक स्तर की हो या आध्यात्मिक स्तर की, तो इसके लिये हमें भी स्वयं में वह योग्यता, पात्रता विकसित करनी होगी जिससे रेकी अर्थात् विश्वव्यापी जीवनी शक्ति हमारे भीतर भी प्रवाहित हो सके। इस प्रकार स्पष्ट है कि रेकी के माध्यम से हम अपने जीवन में अधिकतम सफलतायें प्राप्त कर सकते हैं।

- ❖ **समायोजन क्षमता का विकास** – रेकी के माध्यम से हमारी समायोजन क्षमता का भी अत्यधिक विकास होता है। हमारे भीतर जीवनीशक्ति इतनी बढ़ जाती है कि हम किसी भी प्रतिकूल परिस्थिति से एकदम से विचलित, हैरान तथा परेशान नहीं होते वरन् पूरे धैर्य के साथ उस परिस्थिति के साथ समायोजन स्थापित करते हैं।
- ❖ **ब्रह्माण्डीय ऊर्जा से सम्पर्क** – प्रिय पाठको, इस तथ्य से तो आप भली – भाँति परिचित ही हैं कि हमारा जीवन ब्रह्माण्डीय ऊर्जा से ही संचालित होता है। न केवल चेतन वरन् जड़ पदार्थों के अस्तित्व का कारण भी यह ऊर्जा ही है। जब-जब हमारा सम्पर्क इस ब्रह्माण्डीय ऊर्जा से टूट जाता है, तब-तब ही हम शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक या आत्मिक स्तर पर विकृतियों से ग्रस्त हो जाते हैं और हमारा जीवन अनेक प्रकार की परेशानियों से घिर जाता है। इसलिये स्वस्थ, सुखी जीवन के लिये एक प्रकार से अनिवार्य शर्त है कि हमारा सम्पर्क इस ब्रह्माण्डीय ऊर्जा से लगातार बना रहे। रेकी के माध्यम से इस ऊर्जा प्रवाह में जो भी अवरोध आते हैं, वे दूर हो जाते हैं और हम निरन्तर उस ऊर्जा को ग्रहण करते रहते हैं।

“रेकी से आप एक अत्यन्त शक्तिशाली दैवीय उर्जा के सम्पर्क में आते हैं। जो हर समय आपका मार्गदर्शन करती है।”

(डॉ० देवेन्द्र जैन: रेकी से चिकित्सा कैसे करें? 2005)

“यह सार्वभौम उर्जा की प्राप्ति को संभव बनाता है।”

(डॉ० राजकुमार प्रुथी : वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियाँ: 2005)

- ❖ **चक्रों का सक्रिय होना** – प्रिय पाठकों, जैसा कि आप जानते होंगे कि चक्र एक प्रकार के नाड़ियों के गुच्छे हैं, जिन्हें ऊर्जा केन्द्र कहा जाता है। योग में मुख्य रूप से सप्तचक्रों का उल्लेख मिलता है। जिन का नीचे से ऊपर की ओर क्रम निम्नानुसार है—

1. मूलाधार चक्र
2. स्वाधिष्ठान चक्र
3. मणिपुर चक्र
4. अनाहत चक्र
5. विशुद्धि चक्र
6. आज्ञा चक्र
7. सहस्रार चक्र

पाठको, इनमें से प्रत्येक चक्र का अपना स्थान, रंग, गुण व विशेषतायें हैं और ये चक्र चेतना के विभिन्न आयामों से संबन्धित हैं। इन चक्रों के माध्यम से ही हम ब्रह्माण्डीय ऊर्जा को ग्रहण करते हैं। रेकी के माध्यम से ये चक्र सक्रिय होने लगते हैं। चक्रों के सक्रिय होने का मतलब है कि हमें आवश्यक प्राण ऊर्जा ब्रह्माण्ड से मिलती रहे। इसमें जो

भी अवरोध हो, वे दूर हो जाये। अतः रेकी के माध्यम से ये चक्र सक्रिय होने लगते हैं। प्रिय पाठकों, यहाँ एक बात ध्यान देने योग्य है कि चक्रों का सक्रिय होना और जागृत होना दोनों अलग – अलग बातें हैं। चक्रों के सक्रिय होने का मतलब है कि हमें आवश्यक प्राण ऊर्जा ब्रह्माण्ड से मिलती रहे, उसमें किसी प्रकार का अवरोध ना हो और जब चक्र जागृत होते हैं तो साधक का संबंध चक्रों से संबंधित चेतना के विभिन्न आयामों से होने लगता है और उसमें अनेक रहस्यमयी अद्भुत शक्तियाँ प्रवाहित होने लगती हैं।

- ❖ **आत्मविश्वास एवं आत्मसम्मान में वृद्धि** – रेकी के द्वारा हम अपने आत्मविश्वास एवं आत्मसम्मान में भी वृद्धि कर सकते हैं क्योंकि प्राणऊर्जा की कमी के कारण ही व्यक्ति में भय एवं आत्महीनता की भावना आती है। प्रचण्ड प्राण ऊर्जा ही आत्मविश्वास एवं आत्मसम्मान के रूप में बदलती है।
- ❖ **प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि** – रेकी के द्वारा हमारी रोग प्रतिरोधक क्षमता में आश्चर्यजनक ढंग से वृद्धि होती है। प्रतिरोधक क्षमता केवल शारीरिक ही नहीं वरन् मानसिक एवं आध्यात्मिक भी होती है। अतः रेकी के द्वारा एक ओर जहाँ हमारा शरीर विभिन्न प्रकार की बीमारियों से लड़ने में समर्थ हो जाता है, वहीं दूसरी ओर मन में भी प्रतिकूल परिस्थितियों से जूझने की सामर्थ्य पैदा हो जाती है तथा हम आत्मिक स्तर पर भी उन्नत होते जाते हैं।
- ❖ **संतोषजनक संबंध** – रेकी के द्वारा सकारात्मक ऊर्जा को संप्रेषित करके हम टूटे हुए रिश्तों में पुनः भावनात्मक माधुर्य स्थापित कर सकते हैं तथा लोगों के साथ प्रसन्नता प्रदान करने वाले संतोषजनक संबंध कायम कर सकते हैं।
- ❖ **रचनात्मक क्षमताओं का जागरण एवं संवर्द्धन** – रेकी के द्वारा हमारे अन्दर सकारात्मक ऊर्जा में अभिवृद्धि होती है और सकारात्मक दृष्टिकोण सृजनशीलता का आधार है। जिस क्षण भी हम सकारात्मक होते हैं उसी क्षण हमारे अन्तस् में अनेक रचनात्मक कल्पनायें जन्म लेने लगती हैं। हम विभिन्न रचनात्मक कार्यों को करने के लिये प्रेरित होते हैं। व्यक्ति की यह रचनात्मक क्षमता किसी भी क्षेत्र में अभिव्यक्ति पा सकती है। जैसे संगीत के क्षेत्र में, कला या लेखन के क्षेत्र में, विज्ञान के क्षेत्र में। व्यक्ति की अपनी रुचि के अनुसार इसकी अभिव्यक्ति भिन्न-भिन्न प्रकार से हो सकती है। इस प्रकार रेकी के द्वारा हम अपनी रचनात्मक क्षमताओं का जागरण, संवर्द्धन एवं सुनियोजन कर सकते हैं।
- ❖ **अतीन्द्रिय शक्तियों का जागरण** – रेकी से व्यक्ति के भीतर अतीन्द्रिय शक्तियों का जागरण भी होने लगता है। प्रिय विद्यार्थियों, आपके मन में जिज्ञासा उत्पन्न हो रही होगी कि अतीन्द्रिय शक्तियों से क्या आशय है ? हम सभी जानते हैं कि हमारी इन्द्रियों (आँख, नाक, कान, त्वचा, जीभ) की एक सीमित क्षमता होती है। अपनी क्षमता के अनुसार ये इन्द्रियाँ एक सीमित दायरे के भीतर आने वाले विषयों का ज्ञान ही हमें करा सकती हैं, उससे अधिक नहीं। उदाहरण के लिये— आँखों के देखने की अपनी क्षमता है कि वे निश्चित दूरी तक की वस्तुओं या व्यक्तियों को देख सकती हैं। इसी प्रकार शेष चार इन्द्रियों (नाक, कान, त्वचा, जीभ) की भी अपनी शक्ति के सीमित दायरे हैं, किन्तु रेकी के माध्यम से व्यक्ति इन इन्द्रियों की सीमित क्षमता के पार भी देख-सुन सकता है। स्पर्श कर सकता है, गन्ध एवं स्वाद का अनुभव ले सकता है, किसी दूसरे व्यक्ति के मन की बात जान लेना,

स्वयं के विचार दूसरों तक भेज देना, भविष्य में होने वाली घटनाओं का पूर्वाभास हो जाना, सामान्य आँखों से दिखाई न देने वाली वस्तुओं, घटनाओं या व्यक्तियों को देख लेना, दूरश्रवण इत्यादि अतीन्द्रिय शक्तियों के ही उदाहरण है।

“रेकी से अतीन्द्रिय शक्तियाँ जागृत होती हैं। जैसे किसी के मन की बात पढ़ लेना, उसके विचार जान लेना, अपने विचार दूसरों के मन में प्रेषित कर देना, भविष्य में होने वाली घटनाओं की आहट सुन लेना, मनचाहे कार्य सिद्ध हो जाना और उनके लिये अनायास ही उपयुक्त परिस्थितियाँ पैदा हो जाना।”

(डॉ० देवेन्द्र जैन: रेकी से चिकित्सा कैसे करें? 2005)

- ❖ **स्वयं के साथ – साथ दूसरों का उपचार** – रेकी न केवल स्वयं के लिये लाभकारी है, वरन् इसके द्वारा हम दूसरे व्यक्तियों तथा अन्य जीवों (पशु- वनस्पति) को जो पीड़ित हैं, उन्हें भी स्वस्थ कर सकते हैं। इस प्रकार यह स्वयं के साथ-साथ दूसरों के लिये भी अत्यन्त उपयोगी है।
- ❖ **अवांछनीय आदतों से मुक्ति** – रेकी के द्वारा हम ऐसी आदतों को दूर कर सकते हैं, जो हमारे व्यक्तित्व विकास में बाधक हैं। जैसे कि चिन्ता करने की आदत, अत्यधिक क्रोध करना, जल्दबाजी करना, जल्दी हतोत्साहित होना, निन्दा करना, नकारात्मक सोचना, सुबह से देर से उठना इत्यादि।
- ❖ **दुर्व्यसनों से मुक्ति** – रेकी के द्वारा शराब, नशीली दवाइयों (अफीम, भांग, चरस इत्यादि) तथा गुटखा, तम्बाकू, सिगरेट इत्यादि के सेवन के दुर्व्यसनों से भी छुटकारा पाया जा सकता है।
- ❖ **सुरक्षा** – रेकी के द्वारा विभिन्न प्रकार के प्रतीक चिन्हों का प्रयोग करके अपने प्रियजनों, प्रिय वस्तुओं की सुरक्षा की जा सकती है।

प्रिय विद्यार्थियों, उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि रेकी के इतने अधिक लाभ हैं कि उन्हें शब्दों की सीमा में सीमित नहीं किया जा सकता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न –

(खण्ड क) सत्य / असत्य

1. रेकी के द्वारा हम केवल स्वयं की चिकित्सा कर सकते हैं। (सत्य/असत्य)
2. रेकी से अतीन्द्रिय शक्तियों का जागरण होता है। (सत्य/असत्य)
3. रेकी का उपयोग मानसिक रोगों को दूर करने में किया जा सकता है। (सत्य/असत्य)

(अभ्यासार्थ प्रश्न)

(खण्ड ख)

(वस्तुनिष्ठ प्रश्न)

1. रेकी के लाभ हैं –
 - (क) जीवन में सफलता की प्राप्ति
 - (ख) चक्रों का सक्रिय होना
 - (ग) अवांछनीय आदतों से मुक्ति
 - (घ) उपर्युक्त सभी
2. रेकी से प्राप्ति होती है –
 - (क) शारीरिक स्वास्थ्य की
 - (ख) मानसिक स्वास्थ्य की

(ग) सामाजिक एवं आध्यात्मिक स्वास्थ्य की

(घ) उपर्युक्त सभी

(अभ्यासार्थ प्रश्नों के उत्तर)

(खण्ड ख)

1. घ

2. घ

5.4 व्यावहारिक सुझाव

प्रिय पाठको, रेकी के लाभ जानने के बाद अब हम चर्चा करते हैं, कुछ ऐसे व्यावहारिक सुझावों के बारे में, जिनको रेकी चिकित्सा देते समय ध्यान रखना चाहिये। इन सुझावों को अपनाने पर एक रेकी चिकित्सक अधिक सफलतापूर्वक चिकित्सा कर सकता है।

1. रेकी चिकित्सा के दौरान सभी चक्रों को संतुलित करना चाहिये, जिससे कि प्राण का प्रवाह सुचारु ढंग से हो सके।
2. जिन अंगों में विकृति हो या बीमारी हो, उस अंग से संबंधित चक्र को रेकी देना चाहिये।
3. रेकी देने के बाद सम्पूर्ण शरीर पर स्पर्श करते हुये या शरीर से 1-2 इंच तक की दूरी पर अपने हाथों को रखते हुये पूरे शरीर पर सिर से लेकर पैरों तक घुमाना चाहिये। इससे जिस व्यक्ति को रेकी दी गई है, उसका आभामंडल (Aura) सील हो जाता है और ऊर्जा बाहर नहीं निकलती।
4. रेकी देते समय यह कल्पना करनी चाहिये कि रोगी को स्वास्थ्य लाभ हो रहा है और वह ईश्वर के प्रति और आपके प्रति कृतज्ञता प्रकट कर रहा है।
5. रेकी देते समय रोगग्रस्त भाग पर धीरे – धीरे स्ट्रोकिंग करनी चाहिये। इसके रेकी अर्थात् ऊर्जा के प्रवाह में सहायता मिलती है।
6. रेकी के प्रति किसी भी प्रकार का सन्देह या भ्रम नहीं रखना चाहिये वरन् पूरे विश्वास एवं आस्था के साथ उपचार करना चाहिये।
7. रेकी चिकित्सक को रोगी के स्वस्थ होने की कल्पना तो करनी चाहिये लेकिन उससे भावनात्मक संबंध नहीं बनाने चाहिये।
8. रेकी चिकित्सक को रेकी के परिणामों को लेकर संवेदनशील नहीं होना चाहिये और न ही किसी प्रकार की शंका को अपने मन में स्थान देना चाहिये।
9. रेकी चिकित्सा के दौरान रोगी को अपनी आँखें बंद करके श्वास-प्रश्वास पर अपने मन को केन्द्रित करने के लिये निर्देश देना चाहिये, जिससे रोगी तनावमुक्त हो सके।
10. रेकी चिकित्सा के दौरान रोगी और चिकित्सक दोनों में से किसी को भी अपने पैर क्रांस करके नहीं बैठना चाहिये।
11. रेकी चिकित्सा के दौरान रोगी को अपनी जीभ को पलटकर तालु से लगाने का निर्देश देना चाहिये, इससे रेकी के प्रवाह में सहायता मिलती है।
12. रेकी देने के तुरन्त बाद रोगी को खड़े नहीं होने देना चाहिये, वरन् उसे धीरे – धीरे अपनी आँखें खोलने के लिये कहना और किसी प्रकार की जल्दबाजी किये बिना धीरे – धीरे सामान्य स्थिति में लाना चाहिये।

13. रेकी चिकित्सा देने से पूर्व चिकित्सक को रेकी का आह्वान करके उससे सम्बद्ध दैवीय शक्तियों का अभिवादन करना चाहिये। चिकित्सा के बाद उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करनी चाहिये।
14. चिकित्सा देने के बाद रेकी चिकित्सक को अपने हाथ एवं बाहें नमक के पानी से या साबुन से धोनी चाहिये, जिससे कि नकारात्मक ऊर्जा उनके भीतर प्रवेश न कर सके।
15. रेकी देने के बाद चिकित्सक को स्वयं और रोगी के आभामण्डल के बीच संबंध को, जो एक प्रकाश डोरी के माध्यम से स्थापित होता है, कल्पना के द्वारा काट देना चाहिये।
16. रेकी देने से पूर्व रोगी की रेकी से संबंधित शंकाओं का यथासंभव समाधान करना चाहिये।
17. रेकी से पूर्व चिकित्सक को रोगी को अपने विश्वास में लेना चाहिये। जिससे वह अपनी समस्याओं को सहज ढंग से बता सके और उसे यह अहसास होना चाहिये कि आप उसके हितैषी हैं और आपके माध्यम से उसकी समस्याओं का समाधान हो सकता है।
18. रेकी की सफलता के लिये यह अत्यन्त प्रारंभिक आवश्यकता है कि मरीज या समस्याग्रस्त व्यक्ति का रेकी चिकित्सक और रेकी के प्रति पूर्ण विश्वास एवं पूर्ण समर्पण हो।
19. रेकी चिकित्सक को अपनी एक निर्धारित फीस भी अवश्य रखनी चाहिये, क्योंकि मुफ्त में मिली हुयी किसी भी वस्तु या सेवा की प्रायः कोई कीमत नहीं समझता, लेकिन यहाँ पर यह तथ्य भी अत्यन्त ध्यान देने योग्य है कि रेकी चिकित्सक का उद्देश्य रेकी सेवा के बदले में केवल धन कमाना नहीं होना चाहिये।
20. रेकी चिकित्सा के लिये स्पर्श करना बिल्कुल भी आवश्यक नहीं है। यह हाथों द्वारा स्पर्श करके भी दी जा सकती है और रोगी से 1-4 इंच की दूरी पर हाथ रखकर भी दी जा सकती है। संभव हो तो महिलाओं को रेकी दूर से ही दी जानी चाहिये और उन्हें (महिलाओं) को रेकी देते समय उनके किसी मित्र या संबंधी जन को अथवा किसी महिला/अटेन्डेंट को हमेशा अपने साथ रखना चाहिये।
21. सामान्य रोगों के लिये प्रतिदिन कम से कम एक बार चार दिनों तक रेकी देनी चाहिये।
22. पुरानी या अत्यंत तीव्र बीमारी में कम से कम **इक्कीस दिनों** तक रेकी देनी चाहिये।
23. रेकी देती समय यह आवश्यक नहीं है कि हाथों में गर्माहट का अहसास हो ही। ऐसा हो भी सकता है और नहीं भी। गर्माहट न महसूस होने पर भी रेकी का प्रवाह निरन्तर बना रहता है।
24. रेकी के बाद रोगी को कम से कम 12 घंटे तक पानी के सम्पर्क से बचने के लिये कहना चाहिये।
25. छोटे बच्चों, वृद्ध व्यक्तियों और गर्भवती स्त्रियों को रेकी देते समय विशेष सावधानी रखनी चाहिये। इन्हें एक साथ लम्बे समय तक रेकी न देकर प्रारम्भ में सम्पूर्ण शरीर में केवल 20-30 मिनट तक ही रेकी देनी चाहिये।

26. रेकी के लिये हाथों की विभिन्न स्थितियाँ निर्धारित की गई हैं। उन सभी पर प्रारम्भ में कम से कम 3-5 मिनट तक अपने हाथ रखने चाहिये। शरीर का जो अंग रोगग्रस्त हो वहाँ कम से कम 10-20 मिनट तक रेकी देनी चाहिये।
27. रेकी से पूर्व चिकित्सक तथा रोगी दोनों को ही अपने शरीर से ऐसी चीजों को निकाल देना चाहिये जो शरीर पर दबाव डाल रही हो। जैसे कि बैल्ट, बैण्ड, चैन इत्यादि। इससे रेकी के प्रवाह में बाधा उपस्थित होती है।
28. रेकी के दौरान रोगी एवं चिकित्सक दोनों को ही प्लास्टिक, रबर अथवा सिल्क की वस्तुओं और वस्त्रों को धारण नहीं करना चाहिये।
29. रेकी देने के बाद रोगी से उसके स्वास्थ्य के बारे में जरूर पूछना चाहिये कि पहले की तुलना में उसे अब कैसा महसूस हो रहा है तथा रेकी के बाद उसके चक्रों को पुनः स्कैन करना चाहिये।
30. शल्य क्रिया के पूर्व और बाद में रोगी को स्वस्थ करने में रेकी अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुयी है।

प्रिय विद्यार्थियों, इस प्रकार उपर्युक्त विवरण से आप जान गये होंगे कि रेकी के दौरान किन-किन सावधानियों को हमें रखना चाहिये।

अभ्यासार्थ प्रश्न – (खण्ड –ख) सत्य / असत्य

1. रेकी के दौरान पैरों को क्रॉस करके बैठना चाहिये। (सत्य / असत्य)
2. रेकी देने के बाद चिकित्सक को अपने हाथ नहीं धोने चाहिये। (सत्य / असत्य)
3. रेकी में रोगी के शरीर को स्पर्श करना अनिवार्य है। (सत्य / असत्य)
4. वृद्ध व्यक्तियों को प्रारम्भ में लंबे समय तक रेकी देनी चाहिये। (सत्य / असत्य)
5. रेकी के दौरान रोगी को आँखें बन्द करने के लिये कहना चाहिये। (सत्य / असत्य)
6. रेकी में सभी चक्रों को संतुलित करना चाहिये। (सत्य / असत्य)
7. रेकी के तुरन्त बाद रोगी को नहाना चाहिये। (सत्य / असत्य)
8. रेकी से पूर्व रोगी को रेकी के बारे में कुछ भी नहीं बताना चाहिये। (सत्य / असत्य)

5.5 रेकी चिकित्सा की सीमायें

प्रिय पाठको, कोई भी चिकित्सा पद्धति हो उसकी अपनी कुछ सीमायें होती हैं। उन सीमाओं को ध्यान में रखकर दी गई चिकित्सा ही प्रभावी एवं सफल होती है। इसलिये रेकी की भी अपनी कुछ सीमायें हैं, जिनका विवेचन हम निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत कर सकते हैं—

1. **वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति** — जैसा कि आप जानते ही हैं कि रेकी वैकल्पिक एवं पूरक चिकित्सा पद्धति है। अतः ऐसे मामले जिनमें प्राथमिक उपचार के रूप में एलोपैथी की आवश्यकता हो, जैसा कि शल्य क्रिया से संबंधित मामला या हड्डी टूटना, तो उनमें प्राथमिक चिकित्सा के रूप में एलोपैथी चिकित्सा ही लेनी चाहिये। लेकिन एलोपैथी के साथ-साथ शीघ्र स्वास्थ्य लाभ के लिये पूरक चिकित्सा के रूप में रेकी ली जा सकती है।
2. **बिना प्रशिक्षण के रेकी चिकित्सा नहीं दी जा सकती** — पाठको, आपकी जानकारी के लिये बता दें कि रेकी एक ऐसी विद्या है जिसको सिर्फ कुछ पुस्तकों के अध्ययन द्वारा नहीं सीख सकते। रेकी देने के लिये इसका रेकी विशेषज्ञ से विधिवत् प्रशिक्षण प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक है। इसके बाद ही हम रेकी चैनल बन सकते हैं।

3. रेकी के पाँच नियमों का पालन जरूरी – रेकी चिकित्सा के प्रणेता डॉ० उशुई ने रेकी के पाँच नियम बताये हैं, जो निम्न हैं –

1. सिर्फ आज मैं क्रोध नहीं करूँगा/ करूँगी।
2. आज मैं सभी प्राणियों से करुणा का व्यवहार करूँगा।
3. केवल आज के लिये मैं चिन्ता त्याग दूँगा/दूँगी।
4. केवल आज के लिये मैं अपने अनेक अनुग्रहों के लिये धन्यवाद दूँगा/दूँगी।
5. केवल आज के लिये मैं अपना कार्य ईमानदारी से करूँगा/करूँगी।

रेकी का हमारे भीतर सतत् प्रवाह बना रहे। इसके लिये इन नियमों का पालन अति आवश्यक है।

प्रिय विद्यार्थियों, उपरोक्त विवरण से आप समझ गये होंगे कि रेकी की क्या – क्या सीमायें हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न –

(खण्ड ग) (सत्य /असत्य)

1. रेकी केवल पुस्तकों को पढ़कर भी दी जा सकती है। (सत्य /असत्य)
2. डॉ० उशुई ने रेकी के पाँच नियम बताये हैं। (सत्य /असत्य)

5.6 सारांश –

प्रिय पाठकों, उपर्युक्त विवेचन से आप जान गये होंगे कि एक वैकल्पिक एवं पूरक चिकित्सा पद्धति के रूप में रेकी कितनी उपयोगी है। सहज एवं सुलभ होने के साथ –साथ इससे अनेक ऐसे फायदे हैं जो हमें एलोपैथी चिकित्सा के द्वारा प्राप्त नहीं हो सकते। आधुनिक यांत्रिक जीवनशैली, भौतिकवादी दृष्टिकोण निरन्तर बढ़ते हुए प्रदूषण, खाद्य पदार्थों में मिलावट इत्यादि के कारण आज प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी रोग से ग्रस्त है और जीवनीशक्ति की कमी के कारण उसकी रोग प्रतिरोधक क्षमता भी निरन्तर घटती ही जा रही है।

अतः प्रत्येक व्यक्ति इसके समाधान के रूप में कोई ऐसा विकल्प चाहता है, जो आम जनता की पहुँच में भी हो तथा जिसके दुष्प्रभाव की संभावना कम से कम हो।

प्रिय विद्यार्थियों, ऐसे विकल्प के रूप में रेकी अत्यन्त प्रभावी पद्धति है, जिसे कुछ सावधानियों के साथ यदि प्रयोग किया जाये तो इससे हमें अत्यन्त आश्चर्यजनक एवं लाभकारी परिणाम प्राप्त हो सकते हैं।

5.7 शब्दावली –

रेकी – ब्रह्माण्डीय ऊर्जा

स्ट्रोकिंग – अंगुलियों से धीरे – धीरे छूना

रोग प्रतिरोधक क्षमता – रोगों से लड़ने की शक्ति

आत्मसम्मान – स्वयं के प्रति आदर का भाव

समग्र स्वास्थ्य – शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक स्वास्थ्य को समग्र स्वास्थ्य की संज्ञा दी जाती है।

5.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

खण्ड (क) (सत्य/असत्य)

1. असत्य
2. सत्य
3. सत्य
- खण्ड (ख) (सत्य/असत्य)
1. असत्य
2. असत्य
3. असत्य
4. असत्य
5. सत्य
6. सत्य
7. असत्य
8. असत्य
- खण्ड (ग) (सत्य/असत्य)
1. असत्य
2. सत्य

5.9 संन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- 1 जैन, देवेन्द्र। (2005), रेकी से चिकित्सा कैसे करें? पापुलर बुक डिपो जयपुर।
- 2 मक्कड़, मोहन। (2004), रेकी विद्या। ग्रंथ अकादमी, नई दिल्ली।

5.10 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. पाण्ड्या, प्रणव। (2011), आध्यात्मिक चिकित्सा एक समग्र उपचार पद्धति। श्री वेदमाता गायत्री ट्रस्ट, गायत्री नगर। श्रीरामपुरम् – शांतिकुंज, हरिद्वार, उत्तराखण्ड।
2. विवेक, आर0एस0 (2004), वैकल्पिक चिकित्सा। डायमंड पॉकेट बुक्स नयी दिल्ली।
3. प्रुथी, राजकुमार। (2005), वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियाँ। प्रभात प्रकाशन, नयी दिल्ली।

5.11 निबंधात्मक प्रश्न –

- प्रश्न 1 – रेकी चिकित्सा के लाभ का विस्तृत वर्णन कीजिये।
- प्रश्न 2 – रेकी चिकित्सा की सीमाओं का वर्णन करते हुये रेकी को प्रभावी बनाने हेतु आवश्यक सुझावों का वर्णन कीजिये।

इकाई-6 प्राण चिकित्सा का अर्थ एवं सिद्धांत, प्राण का स्वरूप, प्राण के स्रोत, प्राण चिकित्सा की विधि एवं सावधानियाँ

- 6.1 प्रस्तावना
- 6.2 उद्देश्य
- 6.3 प्राण चिकित्सा का अर्थ
- 6.4 प्राण चिकित्सा के सिद्धांत
- 6.5 प्राण का स्वरूप
- 6.6 प्राण के स्रोत
- 6.7 प्राण चिकित्सा की विधि
- 6.8 प्राण चिकित्सा की सावधानियाँ
- 6.9 सारांश
- 6.10 शब्दावली
- 6.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 6.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
- 6.13 निबंधात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना—

प्रिय विद्यार्थियों, इससे पूर्व की ईकाईयों में आपने रेकी चिकित्सा का विस्तारपूर्वक अध्ययन किया है, जो प्राण ऊर्जा के सिद्धांत पर आधारित है। प्रस्तुत इकाई में इसी क्रम को आगे बढ़ाते हुये हम प्राण चिकित्सा की अवधारणा का विस्तृत अध्ययन करेंगे। प्राण क्या है? इसका स्वरूप क्या है? प्राण के प्रमुख स्रोत कौन-कौन से हैं? प्राण चिकित्सा किसे कहते हैं? प्राण चिकित्सा की प्रक्रिया क्या है? इत्यादि अनेक महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर इस इकाई में प्रकाश डाला जायेगा।

प्रिय विद्यार्थियों, अब तक के अध्ययन से आप इस तथ्य से भली-भाँति अवगत हो चुके हैं कि एलोपैथी के दुस्प्रभाव एवं अस्थायी प्रभाव के कारण वर्तमान समय में लोगों का रुझान पूरक चिकित्सा पद्धतियों की ओर अत्यधिक बढ़ रहा है, क्योंकि ये चिकित्सा पद्धतियाँ सहज-सुलभ एवं कम खर्चीली होने के साथ-साथ बिना किसी दुस्प्रभाव के रोगों को समूल नष्ट करती है। इन्हीं पद्धतियों में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण पद्धति है—“प्राण चिकित्सा”। प्राण उर्जा के द्वारा रोगों को दूर करने एवं स्वास्थ्य लाभ प्रदान करने वाली विधि।

अतः पाठकों, सर्वप्रथम हम जानें कि यह प्राण चिकित्सा क्या है?

6.2 उद्देश्य—

प्रिय पाठकों, प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के बाद आप—

1. प्राण चिकित्सा के अर्थ को स्पष्ट कर सकेंगे।
2. प्राण चिकित्सा के सिद्धान्तों का वर्णन कर सकेंगे।
3. प्राण के स्वरूप को स्पष्ट कर सकेंगे।
4. प्राण के विभिन्न स्रोतों का विवेचन कर सकेंगे।

5. प्राण चिकित्सा की विधि का वर्णन कर सकेंगे।
6. प्राण चिकित्सा के दौरान रखी जाने वाली सावधानियों को स्पष्ट कर सकेंगे।

6.3 प्राण चिकित्सा का अर्थ—

प्रिय पाठकों, प्राणचिकित्सा उपचार की एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विधि है, जो अत्यन्त प्राचीनकाल से चली आ रही है। इसमें दृश्य या भौतिक शरीर का उपचार करने के लिये प्राण उर्जा, जिसे ओजस्वी उर्जा भी कहा जाता है, का उपयोग किया जाता है।

प्राण चिकित्सा के अन्तर्गत उपचारक अपने हाथों के माध्यम से ब्रह्माण्डीय प्राणऊर्जा को ग्रहण करके हाथों द्वारा ही रोगी व्यक्ति में प्रक्षेपित करता है। इस प्रकार इस चिकित्सा पद्धति में चिकित्सक रोगी की प्राणशक्ति को प्रभावित करके उसे स्वास्थ्यलाभ प्रदान करता है।

प्राण चिकित्सा के द्वारा न केवल दूसरों का वरन् स्वयं का भी उपचार किया जा सकता है। इस प्रकार यह पद्धति स्वयं के लिये और दूसरों के लिये समान रूप से उपयोगी है।

प्राण चिकित्सा को अनेक नामों से जाना जाता है। जैसे औषधि धिवगांग, अतिभौतिक उपचार, मानसिक उपचार, हाथ का स्पर्श, चिकित्सकीय छुअन, चुम्बकीय उपचार, विश्वास उपचार, चमत्कारी उपचार, ओज उपचार आदि।

प्रिय पाठकों, अपने अनेक बार अनुभव किया होगा कि जो लोग अत्यधिक प्राणवान् होते हैं, उनके आसपास रहने वाले लोग भी उनके सान्निध्य में स्वयं को ऊर्जावान् एवं अच्छा महसूस करते हैं क्योंकि जिनमें प्राणऊर्जा की कमी होती है, वे अनायास ही अधिक उर्जा वाले व्यक्ति से जीवनीशक्ति ग्रहण करते हैं। इसलिये कमजोर एवं निर्बल प्राणशक्ति वाले के ही स्वयं को अत्यधिक थका हुआ अनुभव करते हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि प्राणशक्ति अधिक से कम की ओर स्थान्तरित होती है और प्राण चिकित्सा में उपचारक प्रयासपूर्वक इस जीवनीशक्ति को रोगी में प्रक्षेपित करते हैं।

प्रिय विद्यार्थियों, न केवल इंसान वरन् कुछ पेड़-पौधे भी ऐसे हैं, जो अन्य पौधों की तुलना में अधिक प्राणऊर्जा छोड़ते हैं और इनके पीछे बैठने या लेटने पर हम स्वयं को अत्यधिक प्राणवान् अनुभव करते हैं। इस दृष्टि से पीपल का वृक्ष अत्यन्त उपयोगी है। गीता में भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं कि “वृक्षों में मैं पीपल हूँ।” पीपल के पेड़ को अत्यधिक चैतन्य माना जाता है और यह एक ऐसा पेड़ है जो दिन एवं रात दोनों समय ऑक्सीजन छोड़ता है। इसलिये भारतीय संस्कृति में आध्यात्मिक दृष्टि से भी पीपल के वृक्ष का अत्यन्त महत्व है और इसकी पूजा की जाती है।

प्राणियों एवं वनस्पतियों के समान कुछ स्थानविशेष भी अन्य स्थानों की अपेक्षा अधिक प्राणशक्ति से युक्त होते हैं। जैसे—मंदिर, चर्च, तीर्थस्थल में जाकर हमें अत्यधिक शांति महसूस होती है। यह सब प्राणऊर्जा का ही कमाल है।

इस प्रकार पाठकों आप समझ गये होंगे कि हमारे स्वास्थ्य का रहस्य जीवनीशक्ति या प्राणशक्ति में समाया हुआ है। इस प्राणऊर्जा के असंतुलित होने पर ही व्यक्ति बीमार पड़ता है। अतः प्राणचिकित्सक हाथों द्वारा प्राणऊर्जा को रोगी में प्रक्षेपित करता है, जिससे प्राणऊर्जा का प्रवाह संतुलित होकर रोग दूर हो सके।

अतः हम कह सकते हैं कि प्राणऊर्जा के माध्यम से रोगों को दूर एवं नियंत्रित करने वाली चिकित्सा प्रणाली प्राणचिकित्सा है।

6.4 प्राण चिकित्सा के सिद्धान्त

प्रिय पाठकों, प्राण चिकित्सा निम्न दो सिद्धान्तों पर आधारित है—

1. रोग से स्वमुक्ति का सिद्धान्त
2. प्राणउर्जा या जीवनीशक्ति का सिद्धान्त

(1) रोग से स्वमुक्ति का सिद्धान्त—

प्राणचिकित्सा का पहला सिद्धान्त “रोग से स्वमुक्ति” का सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त का आशय यह है कि हमारे शरीर में स्व-उपचार की क्षमता होती है। शरीर में जब किसी भी प्रकार की विकृति उत्पन्न हो जाती है तो शरीर स्वयं इसे ठीक करता है।

पाठकों, आपने देखा होगा कि जब किसी व्यक्ति की हड्डी टूट जाती है तो कुछ समय के बाद वह स्वतः जुड़ जाती है। प्लास्टर तो उसे जुड़ने में केवल सहयोग देता है, किन्तु हड्डी को जोड़ने का कार्य शरीर स्वयं करता है। इसी प्रकार जुकाम या बुखार अथवा खाँसी होने पर चाहे हम दवा लें अथवा ना ले कुछ दिनों बाद ये स्वयं ही ठीक हो जाते हैं। ये सभी तथ्य शरीर की स्वउपचार की क्षमता को सिद्ध करते हैं।

पाठकों, जिस प्रकार रसायन विज्ञान में रासायनिक क्रियाओं की गति को बढ़ाने के लिये विद्युत उर्जा का उपयोग उत्प्रेरक (केटेलिस्ट) के रूप में किया जाता है, उसी प्रकार प्राण चिकित्सा में प्राण उर्जा उत्प्रेरक के रूप में उन जीव रासायनिक प्रतिक्रियाओं की गति को तीव्र कर देती है जो शरीर की स्वयं चिकित्सा से संबंधित है। प्राण चिकित्सा के द्वारा सम्पूर्ण शरीर या प्रभावित अंग विशेष को उर्जा देने पर उसके उपचार की गति अत्यन्त तीव्र हो जाती है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि विभिन्न चिकित्सा पद्धतियाँ शरीर की स्वयं उपचार की गति को बढ़ाने में सहायक बनती है, लेकिन रोग को ठीक करने की सामर्थ्य शरीर में स्वयं में है।

2. प्राण उर्जा या जीवनीशक्ति का सिद्धान्त—

यह प्राण चिकित्सा का दूसरा प्रमुख सिद्धान्त है, जिसके अनुसार जीवित रहने के लिये हमारे शरीर में प्राणशक्ति का होना अत्यन्त आवश्यक है। इसलिये पाठकों, आपने सुना होगा कि जब व्यक्ति मर जाता है तो कहा जाता है कि अमुक व्यक्ति के प्राण निकल गये। इस प्रकार स्पष्ट है कि जीवन को बनाये रखने के लिये जीवनीशक्ति का होना अनिवार्य है।

इस प्रकार रोग से स्वमुक्ति तथा प्राणउर्जा इन दो सिद्धान्तों पर प्राणचिकित्सा आधारित है।

6.5 प्राण का स्वरूप

प्रिय विद्यार्थियों, प्राण चिकित्सा के अर्थ एवं सिद्धान्तों का अध्ययन करने के बाद हमारे अध्ययन का अगला बिन्दु है— प्राण का स्वरूप।

प्रिय पाठकों, प्राण हमारे जीवन का सार तत्व है और हमारी प्रगति का मूल आधार है। समृद्धि का स्रोत यही प्राण तत्व है। यह प्राण तत्व हमारे अन्दर प्रचुर मात्रा में है। यदि हम अपने भीतर इस प्राण का चुम्बकत्व बढ़ा दें तो ब्रह्माण्डीय प्राण या विश्वप्राण को अभीष्ट मात्रा में धारण कर सकते हैं। मानवीकाय में निहित इस प्राणउर्जा के भण्डार को “प्राणमयकोश” कहा जाता है। सामान्यतः हमारी यह प्राणऊर्जा प्रसुप्त स्थिति में रहती है

तथा इससे शरीर के निर्वाह भर के कार्य ही सम्पन्न हो पाते हैं किन्तु साधना के माध्यम से इस प्रसुप्त प्राण का जागरण संभव है।

“प्राण” शब्द प्र उपसर्ग पूर्वक अन् धातु से बना है और अन् धातु जीवनीशक्ति का प्रतीक या चेतनावाचक है। इस प्रकार प्राण से तात्पर्य “जीवनीशक्ति” से है।

इस प्रकार विश्वव्यापी प्राण एक महान् तत्त्व है, जो संसार के समस्त जड़-चेतन पदार्थों में भिन्न-भिन्न मात्रा में पाया जाता है। हमारे शरीर में बहने वाला विद्युत प्रवाह इसी प्राण तत्त्व का अंश है। जो प्राणी इस प्राण तत्त्व को समुचित मात्रा में धारण कर लेता है, वह संकल्प बल से युक्त प्रसन्न उत्साहित रहता है और जो इस शक्ति का समुचित मात्रा में ग्रहण नहीं कर पाता है, वह उदास, निराश, निस्तेज देखा जाता है। मनुष्य ने सृष्टि के प्रारंभ में ही इस बात का पता लगा लिया था कि मानवीय प्राण में एक प्रबल रोग निवारक शक्ति होती है। पाठकों, आपने देखा होगा कि जब बच्चा रो रहा हो और उसे गोद में ले लिया जाये तो उसका रोना बंद हो जाता है, क्योंकि उसकी पीड़ा चाहे वह किसी भी प्रकार की क्यों न हो, उसको गोद में उठाने वाले व्यक्ति की प्राण उर्जा का सम्पर्क पाकर कम हो जाती है। रोगी व्यक्ति के मस्तक पर जब हाथ फेरा जाये तो उसे अच्चा अनुभव होता है। इसके पीछे यह वैज्ञानिक कारण है कि एक व्यक्ति की प्राण उर्जा दूसरे व्यक्ति में जो कमजोर या बीमार है, उसमें प्रविष्ट होकर उसे प्रसन्नता एवं आनन्द प्रदान करती है।

पाठकों, हमारे शरीर में यह प्राण नाड़ियों में प्रवाहित होता है, किन्तु दूसरे व्यक्ति या प्राणी तक हम इस प्राण उर्जा को नाड़ियों के बिना भी प्रेषित कर सकते हैं

हमारे मस्तिष्क से प्रतिक्षण विचार निकलते रहते हैं और आकाश में निरन्तर गति करते रहते हैं। यदि इन विचारों को प्राणशक्ति का बल मिल जाये तो ये विचार उत्पन्न शक्तिशाली बनकर कार्यरूप में परिणत होने लगते हैं। अतः प्राणचिकित्सक उपचार करते समय मानसिक रूप से रोगी के स्वस्थ होने की भावना भी करता है, क्योंकि इसके बिना मार्जन एवं उत्सर्जन की क्रिया पूरी तरह सफल नहीं हो पायेगी।

विद्यार्थियों, प्राणउर्जा कोई काल्पनिक विचार नहीं है। इस सन्दर्भ में वैज्ञानिकों ने गहन अनुसंधान किये हैं। कोलकत्ता के सर्जन डॉक्टर एसलेड ने सन् 1842 में अपनी प्राणउर्जा से रोगियों के सम्पूर्ण मस्तिष्क अथवा स्थान विशेष को चेतना शून्य करके अनेक सफल ऑपरेशन किये थे तथा रोगियों को इस बात का पता ही नहीं चला कि उनका ऑपरेशन कब हुआ। उस समय सुँघाकर बेहोश करने की दवा क्लोरोफोर्न का आविष्कार तक नहीं हुआ था। इसी प्रकार लन्दन में डॉक्टर ईलिट द्वारा भी अनेक ऑपरेशन किये गये।

प्रिय विद्यार्थियों, हम अपनी इच्छाशक्ति का प्रयोग करके इस प्राणउर्जा द्वारा अद्भुत कार्य कर सकते हैं। जिस प्रकार आतिशी शीशे द्वारा जब सूर्य की किरणों को एक जगह इकट्ठा किया जाता है, तो उर्जा के केन्द्रीकरण के कारण वहाँ अग्नि जल उठती है, इसी प्रकार प्राणचिकित्सा में, जब उपचारक द्वारा प्राणउर्जा को रोगी के अंगविशेष पर जब प्रक्षेपित किया जाता है तो इसके आश्चर्यजनक परिणाम आते हैं, और उसका रोग ठीक होने लगता है।

कुछ डॉक्टर यह मानते हैं कि प्राणउर्जा केवल मस्तिष्क में ही रहती है, किन्तु उनकी यह मान्यता ठीक नहीं है। प्राण उर्जा तो हमारे सम्पूर्ण शरीर में प्रवाहित होती है। इस संबंध में डॉक्टर अल्बर्ट का मत है कि “मस्तिष्क केवल तर्क और बुद्धि का स्थान है। अन्य शक्तियाँ इस स्थान में नहीं रहती।” हमारे प्रत्येक कार्य केवल बुद्धि या तर्क के बल

पर नहीं किये जा सकते हैं। प्रो. इनजेलो के अनुसार “निद्रावस्था में मनुष्य का दिमाग सोता रहता है और प्राण तत्त्व द्वारा शरीर की रक्षा होती रहती है।”

वैज्ञानिकों ने एक प्रयोग किया जिसमें छोटे जानवरों का मस्तिष्क निकाल देने के बावजूद वे पहले की तरह ही सब कार्य करते रहते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि प्राणशक्ति केवल मस्तिष्क में ही नहीं वरन् सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त रहती है।

पाठकों, वर्तमान समय में विश्व के अनेक देशों में प्राणचिकित्सा का सफलतापूर्वक प्रयोग किया जा रहा है और इसके अत्यन्त उत्साहजनक परिणाम सामने आ रहे हैं।

अभ्यास प्रश्न . क

कोलकत्ता के किस वैज्ञानिक ने मस्तिष्क की चेतना को शून्य कर सफल ऑपरेशन किया

1.एसलेड 2 इनजेलो 3 फमले 4 अल्बर्ट

6.6 प्राण के स्रोत

प्रिय पाठकों, प्राण चिकित्सा के अनुसार प्राण के तीन मुख्य स्रोत बताये गये हैं—

- (1) सौर प्राणशक्ति
- (2) वायु प्राणशक्ति
- (3) भू या भूमिप्राणशक्ति

(1) **सौर प्राणशक्ति**— प्रिय विद्यार्थियों, सूर्य से प्राप्त होने वाली उर्जा को “सौरप्राणशक्ति” कहा जाता है। सूर्य प्राणउर्जा का अक्षय स्रोत है। इसे जगत् की आत्मा कहा जाता है। सूर्य के प्राणीमात्र में नवजीवन का संचार होता है। सूर्य से प्राणशक्ति प्राप्त करने के अनेक तरीके हैं। जैसे सूर्य या धूप स्नान, धूप में रखे हुये पानी या तेल का प्रयोग करके इत्यादि।

धूप स्नान लेते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि प्रातः कालीन सूर्य की रोशनी ही हमारे लिये स्वास्थ्यवर्द्धक होती है। अत्यधिक तेज धूप में लम्बे समय तक खड़े रहने पर हमारे शरीर को हानि पहुँचा सकता है।

(2) **वायु प्राणशक्ति**— वायुमंडल में पाये जाने वाली उर्जा को वायुप्राणशक्ति या प्राणवायु कहते हैं। वायुप्राण को ग्रहण करने का सर्वाधिक सशक्त माध्यम श्वसन क्रिया है। श्वसन क्रिया के द्वारा हम अधिकतम प्राण उर्जा को ग्रहण कर सकें इस हेतु हमारी श्वास—प्रश्वास दीर्घ हो, उथली नहीं। अतः प्राणायाम के द्वारा हम सहजतापूर्वक वायुप्राणशक्ति को ग्रहण कर सकते हैं। विशेष प्रकार का प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्ति वायु प्राण को त्वचा के सूक्ष्म छिद्रों के द्वारा भी ग्रहण कर सकते हैं।

(3) **भू प्राणशक्ति**— पृथ्वी या भूमि में पायी जाने वाली प्राणशक्ति को भू प्राणशक्ति कहते हैं। भूमि के माध्यम से हम निरन्तर भूप्राणशक्ति को ग्रहण करते रहते हैं। यह प्रक्रिया स्वतः ही होती रहती है। भू प्राण को हम पैर के तलुवों के माध्यम से प्राप्त करते हैं। नंगे पैर भूमि पर चलने से भू प्राणउर्जा की मात्रा में वृद्धि होती है।

प्रिय पाठकों, इस प्रकार आप जान गये होंगे की सूर्य, वायुमंडल और भूमि—प्राणशक्ति के ये तीन मुख्य स्रोत हैं।

6.7 प्राण चिकित्सा की विधि—

प्रिय विद्यार्थियों, प्राणशक्ति उपचार या प्राणचिकित्सा अपने आप में कोई नयी चिकित्सा प्रणाली नहीं है, वरन् हमारे ऋषि—मुनियों, योगियों, महापुरुषों के वरदानों—आशीर्वादों के रूप में अत्यन्त प्राचीनकाल से चली आ रही है।

प्राण चिकित्सा में सभी रोगों का मूल कारण एक ही माना जाता है और वह है—प्राणऊर्जा का असंतुलित होना। इसलिये सभी रोगों के इलाज की पद्धति भी एक ही है। प्राण चिकित्सा की सभी प्रक्रियायें मूलतः **मार्जन** एवं **उर्जन** की दो आधारभूत विधियों पर आधारित है। दूषित प्राण को शरीर से बाहर निकालना अर्थात् मार्जन या सफाई करना और स्वस्थप्राण ऊर्जा को रोगी के शरीर में प्रवेश करना अर्थात् उत्र्जन।

इस प्रकार प्राणचिकित्सा में हर रोग की दवा अलग-अलग नहीं है, वरन् रोग का निदान करना अत्यन्त महत्वपूर्ण है अर्थात् रोग शरीर के किस भाग में है? रोग की स्थिति क्या है? रोग शरीर में क्या विकृति उत्पन्न कर रहा है? इन सभी बातों को ध्यान में रखकर रोग का सफल निदान करने के बाद उपचार प्रारंभ करना चाहिये।

उपचारक को इलाज करते समय इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि जब रोग शरीर में प्रवेश करता है तो उसकी गति बाहर से भीतर की ओर एवं नीचे से ऊपर की ओर रहती है, लेकिन रोग जब ठीक होने की स्थिति में होता है तो उसकी गति बदल जाती है अर्थात् उसकी गति भीतर से बाहर की ओर एवं ऊपर से नीचे की ओर हो जाती है। अतः रोग की गति की दिशा के आधार पर हम यह आसानी से पता लगा सकते हैं कि इस समय रोग का प्रकोप हो रहा है या रोग ठीक हो रहा है।

मास्टर चोआ कोक्सुई ने प्रारंभिक प्राण चिकित्सा की सात मूल पद्धतियाँ बतायी हैं, जिनके आधार पर प्राणचिकित्सा दी जाती है। ये सात पद्धतियाँ निम्न हैं—

1. हाथों को संवेदनशील बनाना
2. जाँच प्रक्रिया
3. सफाई या झाड़-बुहार : सामान्य एवं स्थानीय
4. रोगी की ग्रहणशीलता को बढ़ाना
5. प्राणशक्तिद्वारा उर्जित करना : हाथ चक्र पद्धति
 - क. प्राणशक्ति को एकत्रित करना
 - ख. प्राणशक्ति का प्रक्षेपण
6. प्रक्षेपित प्राणशक्ति को स्थिर करना।
7. प्रक्षेपित प्राणशक्ति को मुक्त करना।

पाठकों, इन सातों पद्धतियों का विस्तृत विवेचन निम्नानुसार है—

1. **हाथों को संवेदनशील बनाना—** प्रिय पाठकों, प्राण चिकित्सा की पूरी प्रक्रिया में हाथों की संवेदनशीलता का अत्यधिक महत्व है, क्योंकि इसमें उपचारक हाथों के माध्यम से ही रोग का निदान, शरीर का मार्जन एवं उर्जा का प्रक्षेपण करता है। इसलिये उपचारक के हाथों का संवेदनशीलता होना अत्यावश्यक है।

मास्टर चोआ कोक्सुई ने हाथों की संवेदनशीलता को बढ़ाने के लिये अनेक व्यायाम बताये हैं, जो निम्नानुसार है—

रीढ़ का व्यायाम— अपनी बांहों को सामने की ओर उठाते हुये रीढ़ की हड्डी को बाँये-दाँये मोड़ना। ऐसा लगभग 10 बार करना चाहिये।

कुल्हे का व्यायाम— कुल्हे को बाँये-दाँये 10 बार घुमाना।

गर्दन का व्यायाम— गर्दन का 10-10 बार बाँये और दाँये घुमाना। ध्यान दें यह अभ्यास उन व्यक्तियों को नहीं करना चाहिये, जिनकी कैरोटिड धमनियाँ अवरुद्ध हैं।

कंधों का व्यायाम— अपने कंधों को 10-10 बार सामने और पीछे की ओर घुमाना।

कोहनी एवं मुट्ठी का व्यायाम— मुट्ठी को बन्द करते हुये कोहनी को अपनी ओर मोड़ना और फिर मुट्ठी खोलते हुये कोहनी को आगे की ओर झटकना। इस अभ्यास को भी 10 बार करना चाहिये।

कलाई का व्यायाम— अपनी बाँहों को बगल की ओर से ऊँचा उठाते हुये कलाईयों को 10 बार घड़ी की सुई की दिशा में और 10 बार विपरीत दिशा में घुमाना चाहिये।

इस प्रकार हाथों को संवेदनशील बनाने के लिये कुछ समय तक लगातार उपर्युक्त व्यायाम करने चाहिये।

हाथों को संवेदनशील बनाने की विधि— पाठकों, प्राण चिकित्सा में हाथों को संवेदनशील बनाने की निम्न विधि बतायी गयी है—

- ❖ सर्वप्रथम उपचारक को जीभ को तालू पर लगाना चाहिये।
- ❖ इसके उपरान्त अंगूठों द्वारा हथेलियों के मध्यभाग को दबाना चाहिये। ऐसा करने से हथेलियों के मध्यभाग के चक्र क्रियाशील होने लगते हैं और मध्यभाग में एकाग्रता बनाना आसान हो जाता है।
- ❖ अब तनावमुक्त रहते हुये अपने दोनों हाथों को परस्पर सामने लगभग 3 इंच की दूरी पर रखना चाहिये।
- ❖ इसके बाद लगभग 5—10 मिनट तक अपना ध्यान हथेलियों के मध्यभाग पर केंद्रित करना चाहिये। लयबद्ध दीर्घ श्वास—प्रश्वास करना चाहिये। ऐसा करने पर हथेलियों के बीच वाले भाग में गर्मी, एक प्रकार की झुनझुनी, कंपन या दबाव महसूस होने लगता है। यह हाथों के संवेदनशील होने का संकेत है।
- ❖ हाथों की संवेदनशीलता के लिये लगभग एक महीने की अवधि तक इस प्रकार का अभ्यास करना चाहिये।

पाठकों, ऐसा भी संभव है कि पहले अभ्यास में किसी को अपने हाथ में कुछ भी महसूस न हों, किन्तु इससे निराश नहीं होना चाहिये और अपना अभ्यास लगातार जारी रखना चाहिये। लम्बे समय तक निरन्तर अभ्यास करने पर निश्चित रूप से हाथ संवेदनशील होने लगते हैं। हाथों के संवेदनशील होने के बाद ही जाँचने का कार्य प्रारंभ करना चाहिये।

2. जाँच प्रक्रिया— हाथों को संवेदनशील बनाने के बाद जाँचने की प्रक्रिया प्रारंभ होती है। रोग के ठीक निदान के लिये आन्तरिक आभा के साथ—साथ बाहरी आभा एवं स्वास्थ्य आभा की जाँच करना अत्यन्त सहायक होता है, किन्तु ऐसा करना आनिवार्य नहीं होता है। रोग का पता लगाने के लिये मुख्य रूप से आन्तरिक आभा की ही जाँच की जाती है, क्योंकि बाहरी एवं स्वास्थ्य आभा, आन्तरिक आभा की तुलना में अधिक सूक्ष्म होती है। इसलिये जब हाथ बहुत ज्यादा संवेदनशील हो जाते हैं, तभी इनकी जाँच करना संभव हो पाता है।

हाथ में आभा की जाँच करने पर हमेशा अपना ध्यान हथेलियों के बीच में ही केंद्रित करना चाहिये, क्योंकि ऐसा करने से हथेलियों के बीच में पाये जाने वाले चक्रों को उत्प्रेजित किया जा सकता है या उन्हें रोका भी जा सकता है।

पाठकों, यहाँ तीनों प्रकार की आभा को जाँचने की विधि दी जा रही है जो निम्नानुसार है—

बाहरी आभा को जाँचने की विधि—

- ❖ उपचारक को सर्वप्रथम अपने हाथों को अपने शरीर से कुछ दूरी पर रखकर अपनी हथेलियों को रोगी की तरफ करके रोगी से लगभग चार मीटर की दूरी पर खड़े होना चाहिये।
- ❖ अब उपचारक को अपने हथेलियों के मध्यभाग में ध्यान केन्द्रित करते हुये धीरे-धीरे रोगी की ओर बढ़ना चाहिये और रोगी की बाहरी आभा को महसूस करना चाहिये।
- ❖ ऐसा करने पर जब हाथ में गर्मी, दबाव या कंपन जैसा महसूस होने पर रुक जाना चाहिये, क्योंकि इस समय यह बाहरी आभा को अनुभव करने का संकेत है। अब बाहरी आभा के आकार-प्रकार को जाँचने का प्रयास करना चाहिये। सिर से लेकर कमर तक और कमर से पैर तक। आगे से पीछे तक उसकी चौड़ाई कितनी है इत्यादि। अधिकांशतया बाहरी आभा का आकार एक उल्टे अंडे के सामन प्रतीत होता है अर्थात् ऊपरी भाग चौड़ा और निचला भाग अपेक्षाकृत कम चौड़ा।
- ❖ सामान्य तौर पर बाहरी आभा का व्यास लगभग एक मीटर तक का होता है किन्तु कुछ लोगों में यह 2 मीटर से भी अधिक चौड़ा पाया जाता है। कुछ बच्चे जो अत्यधिक सक्रिय होते हैं, उनकी बाहरी आभा 3 मीटर तक होती है।

स्वास्थ्य आभा को जाँचने की विधि-

भौतिक शरीर की सतह से जीवद्रव्य किरणें सीधी और खड़े रूप में बाहर निकलती है, जिन्हें स्वास्थ्य किरणें कहा जाता है। ये स्वास्थ्य किरणें आन्तरिक आभा को पारकर बाहर निकलती हैं तथा सामान्य तौर पर दो मीटर चौड़ी होती हैं। स्वास्थ्य किरणें भी भौतिक शरीर के आकार में ही होती है। व्यक्ति के रोगग्रस्त होने पर स्वास्थ्य किरणें भी कमजोर होकर नीचे की ओर लटक जाती हैं और उलझ जाती हैं। इसके साथ ही इसका आकार भी छोटा हो जाता है। कभी-कभी रोगावस्था में स्वास्थ्य आभा का आकार 12 इंच या उससे भी कम हो जाता है। अत्यधिक स्वस्थ एवं प्राणवान व्यक्ति की स्वास्थ्य आभा एक मीटर अथवा उससे भी अधिक बड़ी होती है। स्वास्थ्य आभा का आकार भी उल्टे अंडे के समान होता है अर्थात् ऊपर की ओर चौड़ा और नीचे की ओर अपेक्षाकृत कम चौड़ा।

स्वास्थ्य आभा की जाँच प्रक्रिया निम्नानुसार है-

- ❖ स्वास्थ्य आभा को जाँचने के लिये पहले वाली स्थिति में ही रहते हुये धीरे-धीरे थोड़ा आगे की ओर बढ़ना चाहिये।
- ❖ अब जब हथेलियों में पुनः संवेदना महसूस होने पर रुक जाना चाहिये। ये संवेदन पहले की अपेक्षा थोड़े तीव्र हो सकते हैं। ये स्वास्थ्य आभा की निशानी हैं।
- ❖ अब धीरे-धीरे एकाग्रतापूर्वक बाहरी आभा के समान ही स्वास्थ्य आभा के आकार-प्रकार को महसूस करना चाहिये।

आन्तरिक आभा को जाँचने की विधि-

- ❖ आन्तरिक आभा सामान्यतः 4-5 इंच तक फैली होती है। इसकी जाँच करने के लिये अपनी हथेलियों को धीरे-धीरे थोड़ा और आगे तक एवं पीछे लाना चाहिये तथा अपना ध्यान हथेली के मध्यभाग पर केन्द्रित रखना चाहिये।

- ❖ उपचारक को रोगी की सिर से लेकर पैर तक अर्थात् ऊपर से नीचे तक और आगे से पीछे तक जाँच करनी चाहिये। इस संबंध में यह ध्यान रखना चाहिये कि शरीर के दाँयें और बाँयें भाग की आन्तरिक आभा समान होनी चाहिये।

यदि शरीर का एक हिस्सा अर्थात् दाँयाँ या बाँया भाग दूसरे की अपेक्षा यदि छोटा है, तो उसमें जरूर कोई विकृति है। उदाहरण के तौर पर जब एक रोगी के कानों की आन्तरिक आभा की स्कैनिंग या जाँच की गई तो उसके बाँये कान की आभा 5 इंच से भी अधिक थी और दाँये कान की आभा मात्र दो इंच थी। इसके बाद पता चला कि रोगी का दाँयी कान करीब 17 वर्षों से आंशिक रूप से बहरेपन से ग्रस्त था।

- ❖ जाँच के दौरान बड़े चक्रों, प्रमुख अंगों एवं रीढ़ की हड्डी की आभा पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिये। कभी-कभी ऐसा होता है कि पीठ में दर्द की शिकायत नहीं होती किन्तु फिर भी रीढ़ की हड्डी में उर्जा या तो घनी हो जाती है या कम हो जाती है।
- ❖ गले की आन्तरिक आभा की जाँच करते समय रोगी को टुड्डी को थोड़ा उठाकर रखने के लिये कहना चाहिये, क्योंकि टुड्डी की आन्तरिक आभा के कारण गले की वास्तविक स्थिति पता नहीं चलती है।
- ❖ चक्रों में सौर जालिका चक्र की जाँच विशेष रूप से करना चाहिये, क्योंकि भावनात्मक रूप से उत्पन्न होने वाली विकृतियों का प्रभाव इस चक्र पर विशेष रूप से पड़ता है।
- ❖ फेफड़ों को जाँचने के लिये पूरी हथेली का प्रयोग न करके केवल दो अंगुलियों का प्रयोग करना चाहिये और ज्यादा अच्छे परिणाम प्राप्त करने के लिये फेफड़ों की जाँच सामने की तरफ से न करके पीछे और बगल से करना चाहिये।

आन्तरिक आभा की जाँच से प्राप्त परिणामों की व्याख्या—

पाठकों, आन्तरिक आभा की जाँच करने के बाद अब यह कैसे पता चले कि शरीर के किस भाग में या अंग में उर्जा कम है और कहाँ उर्जा का घनापन है? इसे ज्ञात करने का तरीका निम्नानुसार है—

- ❖ रोगी की आन्तरिक आभा की जाँच के दौरान जिन अंगों की आभा में खोखलापन प्रतीत हो तो वहाँ उर्जा कम होती है। यह प्राणशक्ति के कम होने का संकेत है।
- ❖ इसी प्रकार जहाँ प्राणशक्ति का घनापन होता है, वहाँ उस अंग की आन्तरिक आभा में उभार पाया जाता है।

6.8 प्राण चिकित्सा की सावधानियाँ

प्राण चिकित्सा की प्रमुख सावधानियाँ निम्न हैं !

1. प्राण चिकित्सा में सभी रोगों का मूल कारण एक ही माना जाता है और वह है—प्राणउर्जा का असंतुलित होना
2. रोगी की आन्तरिक आभा की जाँच के दौरान जिन अंगों की आभा में खोखलापन प्रतीत हो तो वहाँ उर्जा कम होती है। यह प्राणशक्ति के कम होने का संकेत है।
3. स्वास्थ्य आभा को जाँचने के लिये पहले वाली स्थिति में ही रहते हुये धीरे-धीरे थोड़ा आगे की ओर बढ़ना चाहिये।
4. अब उपचारक को अपने हथेलियों के मध्यभाग में ध्यान केन्द्रित करते हुये धीरे-धीरे रोगी की ओर बढ़ना चाहिये और रोगी की बाहरी आभा को महसूस करना चाहिये।

5. हाथों की संवेदनशीलता के लिये लगभग एक महीने की अवधि तक इस प्रकार का अभ्यास करना चाहिये।
6. सर्वप्रथम उपचारक को जीभ को तालू पर लगाना चाहिये।
7. उपचारक को इलाज करते समय इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि जब रोग शरीर में प्रवेश करता है तो उसकी गति बाहर से भीतर की ओर एवं नीचे से ऊपर की ओर रहती है, लेकिन रोग जब ठीक होने की स्थिति में होता है तो उसकी गति बदल जाती है अर्थात् उसकी गति भीतर से बाहर की ओर एवं ऊपर से नीचे की ओर हो जाती है। अतः रोग की गति की दिशा के आधार पर हम यह आसानी से पता लगा सकते हैं कि इस समय रोग का प्रकोप हो रहा है या रोग ठीक हो रहा है।
8. अब जब हथेलियों में पुनः संवेदना महसूस होने पर रुक जाना चाहिये। ये संवेदन पहले की अपेक्षा थोड़े तीव्र हो सकते हैं। ये स्वास्थ्य आभा की निशानी हैं।
9. निदान — रोग की पहचान करना तथा उसके कारणों का पता लगाना।
10. प्रक्षेपित प्राणउर्जा — उपचारक या हीलर द्वारा रोगी को दी गई जीवनशक्ति
11. चक्र — उर्जा केन्द्र । प्राणचिकित्सा में 11 बड़े या प्रमुख चक्र तथा अन्य छोटे चक्र माने गये हैं।

6.9 सारांश

प्रिय पाठकों, उपरोक्त विवरण से आप समझ गये होंगे कि चक्र हमारे जीवद्रव्य शरीर के महत्वपूर्ण अंग हैं, जिनके द्वारा हमारे सम्पूर्ण भौतिक शरीर में ऊर्जा प्रवाहित होती है। चक्रों के ठीक प्रकार से कार्य न करने से प्राणशक्ति असंतुलित हो जाती है तथा भौतिक शरीर अनेक प्रकार के रोगों से ग्रस्त हो जाता है। अतः स्वस्थ रहने के लिये चक्रों का ठीक प्रकार से कार्य करना अत्यावश्यक है। ऐसे तो प्राण चिकित्सा में छोटे-बड़े अनेक चक्रों की चर्चा की गई है, किन्तु उनमें से मूलाधार, काम चक्र, कटिचक्र, नाभिचक्र, प्लीहा चक्र, सौर जालिका चक्र, हृदय चक्र, कंठ चक्र, भृकुटि चक्र, ललाट चक्र और ब्रह्म चक्र ये ग्यारह चक्र प्रधान हैं।

6.10 शब्दावली

- निदान — रोग की पहचान करना तथा उसके कारणों का पता लगाना।
- प्रक्षेपित प्राणउर्जा — उपचारक या हीलर द्वारा रोगी को दी गई जीवनशक्ति
- चक्र — उर्जा केन्द्र । प्राणचिकित्सा में 11 बड़े या प्रमुख चक्र तथा अन्य छोटे चक्र माने गये हैं।

6.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

क. 1

6.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- प्राणशक्ति उपचार : प्राचीन विज्ञान और कला — मास्टर चो कोक् सुई
- (1) सिंह, अरुण कुमार । (2001) आधुनिक असामान्य मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसीदास, बंगलोर, दिल्ली।

6.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. प्राण चिकित्सा में सभी रोगों का मूल कारण एक ही माना जाता है, समझाइएँ !
2. प्राण चिकित्सा की विधि एवं सावधानियों बताइएँ !

इकाई- 7 प्राण चिकित्सा के अनुसार चक्र या उर्जा केन्द्र

- 7.1 प्रस्तावना
- 7.2 उद्देश्य
- 7.3 जीवद्रव्यशरीर एवं नाड़ियाँ
- 7.4 चक्र या उर्जा केन्द्र
- 7.5 सारांश
- 7.6 शब्दावली
- 7.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 7.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
- 7.9 सहायक उपयोगी पाठ्यसामग्री
- 7.10 निबंधात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना—

प्रिय विद्यार्थियों, इससे पूर्व की ईकाई में हमने प्राण चिकित्सा की अवधारणा का अध्ययन किया है, जिसमें प्राण चिकित्सा के अर्थ, प्राण के स्रोत एवं उसकी प्रकृति तथा प्राण चिकित्सा की प्रक्रिया का विस्तृत वर्णन किया गया है। प्रस्तुत ईकाई में इसी क्रम को आगे बढ़ाते हुये हमारे अध्ययन का विषय है— “प्राण चिकित्सा के अनुसार चक्र या उर्जा केन्द्र”।

प्रिय पाठकों, प्राण चिकित्सा के विषय में आपने अब तक जो अध्ययन किया है, उससे एक बात तो स्पष्ट है कि अन्य वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियों के समान प्राण चिकित्सा भी समग्र स्वास्थ्य की अवधारणा पर आधारित है तथा रोग के समूल नाश पर बल देती है।

प्राण चिकित्सा के अनुसार भौतिक शरीर के अतिरिक्त हमारा एक जीवद्रव्य शरीर भी होता है, जिसे **उर्जा शरीर** या **आभा शरीर** या **वायवी शरीर** इत्यादि विभिन्न नामों से जाना जाता है। भौतिक शरीर, जिसे हम छू सकते हैं, जो हमें दिखायी देता है, उसे “दृश्य शरीर” कहते हैं और प्रत्यक्ष रूप से हमारा परिचय इस भौतिक शरीर से ही अधिक होता है। किन्तु इस दृश्य शरीर के अतिरिक्त हमारा एक अदृश्य आभा शरीर भी होता है जो भौतिक शरीर को भेद कर उसके बाहर चारों ओर कम से कम सामान्यतः 4-5 इंच तक फैला हुआ रहता है, जिसको हम सामान्य रूप से देख तो नहीं सकते, किन्तु महसूस अवश्य कर सकते हैं।

मानव-आभा जो शरीर के चारों ओर चमकदार बादलों के समान प्रकाशित होती है, का विचार अत्यन्त प्राचीन है। प्रख्यात दिव्यदर्शी **श्री स्वीडनबोर्ग** ने अपनी महान कृति **Spiritual Diry** में लिखा है—

“प्रकृति और भौतिक शरीरधारी, सभी को एक आध्यात्मिक चक्र घेरे रहता है।”

पाठकों, चक्र या उर्जा केन्द्र, जिनका विस्तृत अध्ययन हमें इस ईकाई में करना है, उनका संबंध इसी जीवद्रव्यशरीर या उर्जा शरीर से है। जिस प्रकार हमारे भौतिक शरीर में उनके प्रकार के तंत्र हैं और उन तंत्रों से संबंधित विभिन्न अंग हैं। ठीक उसी प्रकार चक्र हमारे उर्जा शरीर के अंग है, जिनके माध्यम से जीव द्रव्य शरीर कार्य करता है।

अतः प्रस्तुत ईकाई में हम जीवद्रव्यशरीर और विभिन्न चक्रों के बारे में विस्तार से अध्ययन करेंगे;

7.2 उद्देश्य—

प्रिय पाठकों, प्रस्तुत ईकाई का अध्ययन करने के बाद आप—

1. जीवद्रव्य शरीर के स्वरूप को स्पष्ट कर सकेंगे।
2. विभिन्न चक्रों के स्थान, कार्य आदि का वर्णन कर सकेंगे।
3. प्राण चिकित्सा में चक्रों की महत्ता का विश्लेषण कर सकेंगे।

7.3 जीवद्रव्य शरीर एवं नाड़ियाँ —

जीवद्रव्य शरीर— प्रिय पाठकों, जैसा कि आप जान चुके हैं कि चक्रों का संबंध हमारे जीवद्रव्य शरीर से है। अतः चक्रों के बारे में अध्ययन से पूर्ण जीवद्रव्य शरीर के बारे में जान लेना अत्यावश्यक हैं।

प्रिय पाठकों, दिव्यद्रव्य मनीशियों ने अपने अनुभव के आधार पर यह जाना कि प्रत्येक व्यक्ति अपने शरीर के चारों ओर एक आभा द्वारा घिरा रहता है, जिसे **आभा शरीर**, **उर्जा शरीर**, या **जीवद्रव्य शरीर** (बायोप्लाज्मिक बोडी) कहते हैं। जीवद्रव्य शरीर भी भौतिक शरीर के समान ही होता है अर्थात् इसका भी एक सिर, दो आँखें, दो हाथ एवं दो मेरे होते हैं। जीवद्रव्य का तात्पर्य एक **जीवित शक्ति** है, जो अदृश्य सूक्ष्म पदार्थ अथवा वायवी पदार्थ का बना होता है। जीवद्रव्य शरीर दृश्यमान भौतिक शरीर को भेदकर बाहर की ओर लगभग 4-5 इंच तक फैला रहता है और भौतिक शरीर के आकार में ही होता है। इसे **“आन्तरिक आभा”** भी कहते हैं। प्राण शक्ति की कमी होने से या घनेपन के कारण जीवद्रव्य शरीर बीमार हो जाता है, क्योंकि जीवद्रव्य शरीर की नाड़ियाँ, जिनसे प्राणशक्ति प्रवाहित होती है, वे आंशिक रूप से या पूरी तरह अवरुद्ध हो जाती है। अतः इस प्रकार प्राणशक्ति प्रभावित अंग के चारों ओर न तो अंदर की ओर और न ही बाहर की ओर आ-जा सकती हैं और इसके परिणामस्वरूप भौतिक शरीर, रोगग्रस्त हो जाता है और उसमें विभिन्न रोगों के लक्षण प्रकट होने लगते हैं।

दृश्यमान भौतिक शरीर की सतह से जीवद्रव्य किरणें सीधी, खड़े रूप में निकलती हैं, जिन्हें **स्वास्थ्य किरणें** कहते हैं। ये आन्तरिक आभा को पार कर बाहर आती है, स्वास्थ्य किरणें भी भौतिक शरीर के आकार में ही होती है। इनका कार्य आसपास फैले कीटाणुओं एवं रोगग्रस्त जीवद्रव्य पदार्थों से सुरक्षा प्रदान करना होता है। स्वास्थ्य किरणें छोटे-छोटे छिद्रों के द्वारा कीटाणुओं एवं रोगग्रस्त जीवद्रव्य पदार्थों को लगातार बाहर फेंकती रहती है। बीमार होने पर स्वास्थ्य किरणें भी कमजोर होकर नीचे की ओर लटक जाती है।

पाठकों, आन्तरिक आभा एवं स्वास्थ्य आभा के चारों ओर एक और चमकदार उर्जा क्षेत्र पाया जाता है, जिसको बाहरी आभा के नाम से जाना जाता है। बाहरी आभा, आन्तरिक एवं स्वास्थ्य आभा को पार कर बाहर निकली हुयी रहती है और भौतिक शरीर से लगभग एक मीटर दूर तक फैली रहती है। सामान्य रूप से बाहरी आभा रंगीन दिखायी देती है और इसका आकार उलटे अंडे के समान होता है। व्यक्ति की शारीरिक एवं मानसिक स्थिति के अनुसार इसके रंग में भी परिवर्तन होता रहता है। बीमार होने पर व्यक्ति की बाहरी आभा में कुछ छिद्र हो जाते हैं, जिससे होकर प्राणशक्ति बहती रहती है। इस प्रकार बाहरी आभा प्राण उर्जा के लिए कवच का कार्य करती है।

पाठकों, आपको जानकारी के लिये बता दें कि वर्तमान समय में किर्तियन फोटोग्राफी के माध्यम से आन्तरिक आभा को देखना संभव है।

जीवद्रव्य शरीर एवं भौतिक शरीर का संबंध

प्रिय पाठकों, जीवद्रव्य शरीर एवं भौतिक शरीर दोनों घनिष्ठ रूप से संबंधित हैं और दोनों एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। यदि जीवद्रव्य शरीर रोगग्रस्त हो जाता है तो भौतिक शरीर भी बीमार हो जाता है। किसी भी रोग के लक्षण पहले उर्जा शरीर में प्रकट होते हैं, उसके बाद भौतिक शरीर में। यदि उर्जा शरीर में ही रोग का निदान कर लिया जाये तो उसे भौतिक शरीर में आने रोका जा सकता है।

अतः स्पष्ट है कि स्वस्थ रहने के लिये जीवद्रव्यशरीर में प्राणशक्ति का संतुलित होना अनिवार्य एवं अत्यावश्यक है।

नाड़ियाँ या शिरोबिन्दु –

प्रिय पाठकों, जिस प्रकार भौतिक शरीर में रक्त संचरण हेतु अनेक रक्त नलिकाएँ होती हैं, उसी प्रकार उर्जा शरीर में विभिन्न शिरोबिन्दु या नाड़ियाँ होती हैं, जिनसे सम्पूर्ण शरीर में प्राण का प्रवाह होता है। योगियों के अनुसार हमारे शरीर में छोटी-बड़ी लगभग 72,000 नाड़ियाँ होती हैं।

7.4 चक्र या उर्जा केन्द्र –

प्रिय विद्यार्थियों, चक्र हमारे जीवद्रव्य शरीर के अत्यावश्यक अंग हैं। जिस प्रकार हमारा भौतिक शरीर छोटे-बड़े विभिन्न अंगों के माध्यम से कार्य करता है। उसी प्रकार उर्जा शरीर चक्रों के माध्यम से क्रियाशील होता है।

प्राण चिकित्सा के अनुसार हमारे शरीर में छोटे-बड़े अनेक प्रकार के चक्र होते हैं, जिन्हें निम्न तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है—

1. बड़े चक्र
2. छोटे चक्र
3. सूक्ष्म चक्र

1. **बड़े चक्र**— इनका आकार लगभग 3—4 इंच का होता है। ये उर्जा हार के समान कार्य करते हैं तथा भौतिक शरीर के बड़े और प्रधान अंगों को नियंत्रित एवं अर्जित करने का कार्य करते हैं।

2. **छोटे चक्र**— छोटे चक्र लगभग 1 से 2 इंच तक के होते हैं।

3. **सूक्ष्म चक्र**— सूक्ष्म चक्र एक इंच से भी छोटे होते हैं।

पाठकों, छोटे एवं सूक्ष्म चक्र भौतिक शरीर के छोटे एवं कम जरूरत वाले अंगों को नियंत्रित एवं उर्जित करने का कार्य करते हैं। ये चक्र भौतिक शरीर को पारकर उससे आगे की ओर निकल आते हैं।

चक्रों के कार्य—

पाठकों, प्राणशक्ति उपचारकों द्वारा चक्रों के निम्न लिखित आवश्यक कार्य माने गये हैं—

1. प्राणशक्ति को अवशोषित करके उसे शरीर के विभिन्न भागों तक पहुँचाना।
2. सम्पूर्ण भौतिक शरीर को नियंत्रित करना तथा उर्जित करना। चक्रों के ठीक प्रकार से कार्य न करने पर अनेक रोग हो जाते हैं।
3. मानसिक क्षमताओं के विकास में भी चक्रों का महत्वपूर्ण योगदान होता है।

प्रिय विद्यार्थियों, इस प्रकार स्पष्ट है कि प्राण चिकित्सा में छोटे-बड़े अनेक चक्रों का वर्णन किया गया है, जिनमें ग्यारह चक्र प्रधान हैं। इनका विस्तृत विवेचन निम्नानुसार है।

1. **मूलाधार चक्र (बेसिक चक्र)** — प्राण चिकित्सा में जिन ग्यारह चक्रों की चर्चा की गई है, उनमें नीचे से उपर के क्रम में पहला चक्र **मूलाधार** है। इस चक्र का स्थान रीढ़ की हड्डी का अंतिम छोर या कोक्सिक्स क्षेत्र माना गया है। मूलाधार चक्र भौतिक शरीर को नियंत्रित करने के साथ-साथ इसे उर्जा देने और शक्तिशाली बनाने का कार्य भी करता है। यह मांसपेशियों और कंकाल तंत्र, रीढ़ की हड्डी, शुद्ध रक्त के निर्माण, एंड्रीनल ग्रन्थियों, शरीर के ऊतकों तथा आन्तरिक अंगों को नियंत्रित करने तथा उर्जा देने का कार्य भी करता है। इसके साथ-साथ मूलाधार चक्र शरीर के मूल भाग में स्थित होने के कारण जननांगों को भी प्रभावित करता है, तथा उर्जा देता है। यह चक्र शरीर की ऊष्णता, सामान्य आजेस्विता तथा शिशु और बच्चों के विकास पर भी प्रभाव डालता है। पाठकों, यदि मूलाधार चक्र ठीक ढंग से कार्य न करे तो भौतिक शरीर अनेक प्रकार के रोगों और समस्याओं से ग्रस्त हो सकता है। जैसे रक्त के रोग, जोड़ों के दर्द, रीढ़ की हड्डी से संबंधित रोग, एलर्जी, कैंसर, ल्यूकेमिया, शारीरिक विकास से सम्बद्ध समस्याएँ, जीवनीशक्ति की कमी, घाव भरने में देरी, हड्डियों का टूटना आदि। इसके साथ ही अनेक प्रकार की मानसिक समस्याएँ जैसे तनाव, अवसाद इत्यादि भी उत्पन्न हो सकती हैं।

प्रिय विद्यार्थियों, जिन व्यक्तियों का मूलाधार चक्र ठीक प्रकार से कार्य करता है, वे स्वस्थ एवं ह्रस्ट-पुस्ट रहते हैं और जिन लोगों में यह चक्र सुचारु ढंग से क्रियाशील नहीं होता है, वे अस्वस्थ रहते हैं। उनमें जीवनीशक्ति की कमी होती है।

वृद्धावस्था में मूलाधार चक्र सामान्य की अपेक्षा कम सक्रिय होता है। इसी कारण वृद्धलोग शारीरिक रूप से कमजोर होते हैं, उनकी रीढ़ की हड्डी झुक जाती है तथा उनको अक्सर जोड़ों के दर्द की शिकायत बनी रहती है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि मूलाधार चक्र का वही महत्व है, जो किसी पेड़ की जड़ का होता है। यदि जड़ ही कमजोर होगी तो पेड़ का कमजोर होना भी स्वाभाविक है।

अतः आधार या नीब के रूप में यदि मूलाधार चक्र सुचारु रूप से क्रियाशील है, तो व्यक्ति स्वस्थ जीवन व्यतीत करता है। इसी कारण इसे **मूल चक्र** या **जड़चक्र** भी कहा जाता है।

2. काम-चक्र (सेक्सचक्र)–

मूलाधार के बाद दूसरा प्रमुख चक्र **“कामचक्र”** है, जिसका स्थान जननांग क्षेत्र है। इसका कार्य जननांगों तथा मूत्राशय को नियंत्रित और उर्जित करना है। काम चक्र, आज्ञा या भृकुटि चक्र, कंठ चक्र तथा मूलाधार चक्र से घनिष्ठ रूप से संबंधित है। कहने का तात्पर्य यह है कि ये तीनों चक्र काम चक्र को अत्यधिक प्रभावित करते हैं। इसलिये इनमें से किसी भी चक्र के ठीक ढंग से कार्य न करने पर काम चक्र भी ठीक प्रकार से कार्य नहीं कर पाता है। काम चक्र में असंतुलन होने पर काम संबंधी समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

3. कटिचक्र (मिंगमेन चक्र)

प्रिय पाठकों, काम चक्र के बाद तीसरा **कटि चक्र** है। इस चक्र का स्थान नाभि के ठीक पीछे पीठ में बताया गया है। कटि चक्र रीढ़ की हड्डी में **“पॉम्पिंग स्टेशन”** की तरह

कार्य करता है, क्योंकि यह मूलाधार चक्र से आने वाली सूक्ष्म प्राणऊर्जा को उपर की ओर भेजने का कार्य करता है तथा इसके साथ ही रक्तचाप का नियंत्रण, किडनी तथा एड्रीनल ग्रन्थियों के नियंत्रण और उर्जन का कार्य भी करता है।

कटि चक्र की क्रियाशीलता में असंतुलन होने पर उच्च रक्तचाप, पीठ दर्द, किडनी से संबंधित रोग, जीवनशक्ति का ह्रास इत्यादि रोग हो जाते हैं।

प्रिय पाठकों, कटि चक्र को उत्सर्जित करते समय अत्यधिक सावधानी रखना अत्यावश्यक है, अन्यथा इसके दुष्प्रभाव भी हो सकते हैं। इसे केवल अनुभवी विशेषज्ञों द्वारा ही व्यवहार में लाना चाहिये।

इस संबंध में यह ध्यान रखना चाहिये कि कटि चक्र को शिशुओं, बच्चों वृद्धों और गर्भवती स्त्रियों में उर्जित नहीं करना चाहिये।

4. नाभिचक्र (नेवल चक्र)

जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है यह चक्र नाभि पर स्थित होता है। इस चक्र का कार्य छोटी एवं बड़ी आँत तथा एपेंडिक्स को नियंत्रित एवं उर्जित करना है। इसका संबंध व्यक्ति की सामान्य ओजस्विता से भी है।

नाभि चक्र के ठीक प्रकार से कार्य न करने पर कब्ज, प्रसव संबंधी समस्याएँ, ओजस्विता की कमी, एपेंडिसाइटिस तथा छोटी एवं बड़ी आँत संबंधी अनेक रोग हो सकते हैं।

5. प्लीहा चक्र (स्पलीन चक्र)–

पाठकों प्लीहा चक्र अगले सौर कालिका चक्र और नाभि चक्र को बीच पेट के बायीं तरफ स्थित माना गया है। यह चक्र बायीं ओर निचली पसली के मध्य में स्थित होता है। प्लीहा चक्र वायु प्राणशक्ति के लिये प्रमुख प्रवेश द्वार है। इस कारण यह व्यक्ति की सामान्य परिस्थिति के लिये महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है। प्लीहा चक्र दूसरे बड़े चक्रों और सम्पूर्ण शरीर द्वारा आत्मसात् की गई प्राणऊर्जा को वितरित करके उन्हें उर्जा प्रदान करने का कार्य करता है। पाठकों, आपकी जानकारी के लिये बता दें कि प्लीहा चक्र शरीर के सामने वाले भाग के अतिरिक्त पिछले भाग में भी होता है और पिछला प्लीहा चक्र अगले प्लीहा चक्र के ठीक पीछे स्थित होता है। इस प्रकार आप समझ गये होंगे कि प्लीहा चक्र के दो भेद हैं— (1) अगला प्लीहा चक्र (2) और पिछला प्लीहा चक्र।

अगले और पिछले दोनों प्लीहा चक्र के कार्य समान हैं।

प्लीहा चक्र को उर्जित करने में अत्यधिक सावधानी रखनी चाहिये। शिशुओं और बच्चों में इस चक्र को उर्जित न करने का परामर्श दिया जाता है, क्योंकि प्राण उर्जा के घनेपन के कारण वे बेहोश भी हो सकते हैं। यदि कभी ऐसी स्थिति (बेहोशी) उत्पन्न हो जाये तो उपचारक को तुरन्त सामान्य सफाई की क्रिया करनी चाहिये। इसके साथ ही जिनको उच्चरक्तचाप की समस्या है या पहले रही हो उनके भी प्लीहा चक्र को उर्जित नहीं किया जाता, क्योंकि इससे रक्तचाप बढ़ने की संभावना रहती है।

6. सौर चक्र (सोलर लेक्ससचक्र)

प्रिय विद्यार्थियों, प्लीहा चक्र के समान ही सौर चक्र भी दो प्रकार के होते हैं—

(1) अगला सौर चक्र

(2) पिछला और चक्र

अगला सौर चक्र पसलियों के बीच खाली स्थान में, सौर ...क्षेत्र में पाया जाता है और इसके ठीक पीछे पिछला सौर चक्र पाया जाता है।

यह चक्र डायाफ्राम, यकृत, अग्न्याशय, आमाशय, छोटी एवं बड़ी आंत, एपेंडिक्स, फेफड़े, हृदय इत्यादि को नियंत्रित एवं उर्जित करता है। सौर.....चक्र रक्त की गुणवत्ता को भी प्रभावित करता है, क्योंकि इसका संबंध यकृत के नियंत्रण और उत्सर्जन से है, जो रक्त में मिले हुये दूषित पदार्थों को दूर करता है।

सौर जालिका चक्र के माध्यम से सम्पूर्ण शरीर को उत्सर्जित किया जा सकता है। क्योंकि प्राणशक्ति निचले चक्रों से ऊपर के चक्रों की ओर इसी चक्र से होकर जाती है। सौर जालिका चक्र **ऊर्जा सफाई घर** के समान कार्य करता है। जब कभी सौर जालिका चक्र की सफाई किये बिना ही इसे अधिक मात्रा में उत्सर्जित करने से प्राणशक्ति में घनापन आ जाता है, जिससे डायाफ्राम को लकवा मार जाता है और साँस लेने में कठिनाई होने लगती है। इसलिये पहले इस चक्र की ठीक तरह सफाई करनी चाहिये, इसके बाद इसे उत्सर्जित करना चाहिये। सौर जालिका चक्र शरीर के तापक्रम को नियंत्रित करने का कार्य भी करता है।

पाठकों, यदि यह चक्र ठीक प्रकार से कार्य न करे तो अल्सर, यकृत में सूजन, मधुमेह, हृदय रोग, अग्न्याशय, आमाशय, छोटी एवं बड़ी आंत, फेफड़े और एपेंडिक्स से संबंधित अनेक प्रकार के रोग हो सकते हैं।

7. हृदय चक्र (हार्ट चक्र)

हृदय चक्र भी दो प्रकार के होते हैं—

(1) अगला हृदय चक्र

(2) पिछला हृदय चक्र

अगला हृदय चक्र छाती के बीच में स्थित होता है तथा पिछला हृदय चक्र हृदय के पीछे स्थित होता है।

पाठकों, अगला हृदय चक्र हृदय थायमस ग्रन्थि तथा रक्त परिसंचरण तंत्र को नियंत्रित एवं उर्जित करने का कार्य करता है। अगले हृदय चक्र के गलत ढंग से कार्य करने पर हृदय एवं रक्त संचार तंत्र से संबंधित रोग होने की संभावना होती है।

अगले हृदय चक्र पर सौरजालिका चक्र अत्यधिक प्रभाव डालता है। अतः यदि सौर जालिका चक्र सुचारु ढंग से कार्य नहीं करता है, तो इससे अगले हृदय चक्र और हृदय की कार्यप्रणाली भी प्रभावित होती है।

पिछले हृदय चक्र का संबंध मुख्य रूप से फेफड़ों से हैं तथा अपेक्षाकृत कम मात्रा में हृदय एवं थायमसग्रन्थि के नियंत्रण एवं उर्जन से है। इस चक्र के ठीक प्रकार से कार्य न करने पर दमा, क्षयरोग तथा फेफड़ों से संबंधित अनेक रोग हो जाते हैं।

हृदय को उर्जा पहुँचाने का कार्य पिछले हृदय चक्र के माध्यम से किया जाता है। क्योंकि अगला हृदय चक्र अपेक्षाकृत अधिक जल्दी हृदय को उर्जा पहुँचाता है और प्राणउर्जा एक जगह स्थिर होती है। इसलिये वह शीघ्रता से शरीर के अन्य भागों में प्रसारित नहीं होती है। उस कारण अगले हृदय चक्र द्वारा हृदय को उर्जित करने से प्राणशक्ति को घनेपन की संभावना बढ़ जाती है। इसलिये अगले हृदय चक्र को अधिक समय तक और अत्यधिक उर्जित करने की सलाह नहीं दी जाती। अतः अनुभवी उपचारक पिछले हृदय चक्र को उर्जित करते हैं जिससे कि प्राणशक्ति के घनेपन की समस्या उत्पन्न न हो और अतिरिक्त प्राणउर्जा को सुगमतापूर्वक फेफड़ों तथा शरीर के दूसरे भागों तक पहुँचाया जा सके। पाठकों, पिछले हृदय चक्र के माध्यम से सम्पूर्ण शरीर को उर्जित किया जा सकता है।

8. कंठ चक्र (थ्रोट चक्र)

पाठकों, जैसा कि आपको नाम से ही स्पष्ट हो रहा होगा कि यह चक्र गले या कंठ के बीच में स्थित होता है। इसलिये इसे कंठचक्र कहते हैं। इसका संबंध गले में स्थित थायराइड, पैरोथायराइड ग्रन्थियों तथा लिम्फेटिक तंत्र के नियंत्रण और उर्जन् से है।

इस चक्र के गलत ढंग से कार्य करने पर घेंघा। टांसिलाइटिस, गले में दर्द, सूजन, खाँसी तथा थाइराइड एवं पैराथायराइड, ग्रन्थियों से संबंधित अनेक प्रकार के रोग हो जाते हैं।

कंठ चक्र, काम चक्र को भी प्रभावित करता है।

9. भृकुटि चक्र (अठना चक्र)

पाठकों, दोनों भौहों के मध्य स्थित रहने वाले इस भृकुटि चक्र को “प्रधानचक्र” भी कहा जाता है, क्योंकि यह दूसरे सभी बड़े चक्रों एवं उनसे सम्बद्ध अन्तःस्रावी ग्रन्थियों और प्रमुख अंगों को नियंत्रित करता है।

भृकुटि चक्र का संबंध पीयूष ग्रन्थि एवं अन्य अन्तःस्रावी ग्रन्थियों मस्तिष्क, आँख, नाक, कान इत्यादि के नियंत्रण एवं उत्सर्जन से है। इस चक्र के माध्यम से सम्पूर्ण शरीर को उत्सर्जित किया जा सकता है।

इस चक्र के ठीक से कार्य न करने पर अन्तःस्रावी ग्रन्थियों, मस्तिष्क तथा आँख, नाक, कान इत्यादि के रोग तथा कैंसर, दमा, एलर्जी आदि अनेक बीमारियाँ हो सकती हैं।

10. ललाट चक्र (फोरहेड)

पाठकों, यह चक्र ललाट अर्थात् माथे के बीच में स्थित होता है। इस चक्र का संबंध पीनियल ग्रन्थि तथा तंत्रिका तंत्र के नियंत्रण और उर्जन से है। ललाट चक्र को उर्जित करने पर एक के बाद दूसरे चक्र के द्वारा सम्पूर्ण शरीर में प्राणऊर्जा का वितरण हो जाता है।

इस चक्र के गलत ढंग से कार्य करने पर पीनियल ग्रन्थि, से संबंधित रोग, लकवा, मिरगी, यादाश्त में कमी इत्यादि समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं।

11. ब्रह्मचक्र (क्राउन चक्र)

पाठकों, ब्रह्म चक्र, प्राणशक्ति के प्रवेश के लिये प्रमुख केन्द्र है। यह सिर के तालु पर स्थित माना गया है, जिसका संबंध प्रधान रूप से पीनियल ग्रन्थि, मस्तिष्क एवं सम्पूर्ण शरीर के नियंत्रण एवं उर्जन से है। ब्रह्म चक्र को उर्जित करने पर सम्पूर्ण शरीर में प्राणशक्ति प्रवाहित होने लगती है। अतः कुछ उपचारक, किसी भी प्रकार का रोग होने पर सीधे ब्रह्म चक्र को उर्जित करते हैं।

ब्रह्म चक्र के ठीक प्रकार से कार्य न करने पर पीनियल ग्रन्थि एवं तंत्रिका तंत्र से सम्बद्ध अनेक प्रकार के शारीरिक रोग एवं इसके साथ-साथ विभिन्न प्रकार के मानसिक रोग भी हो सकते हैं।

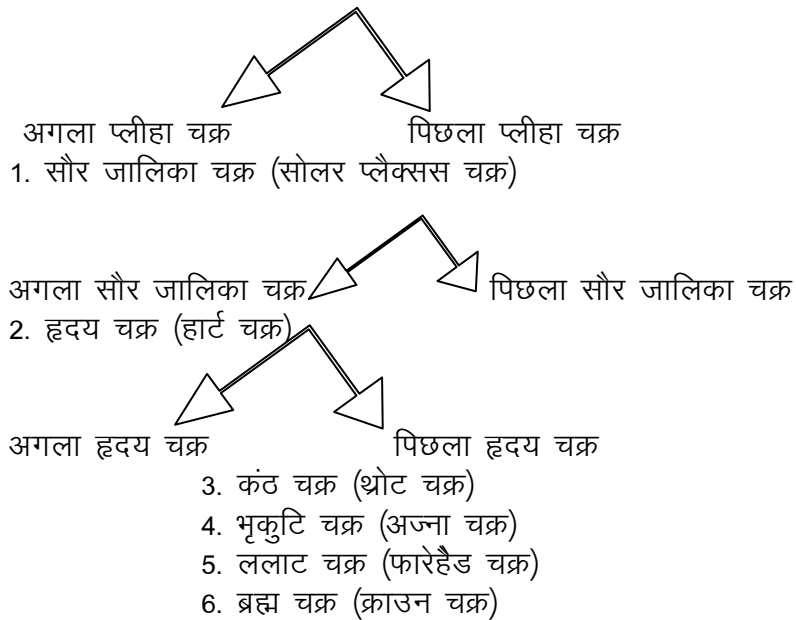
प्रिय पाठकों, उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि प्राणचिकित्सा में ग्यारह चक्रों की चर्चा की गई है, जिनका विभिन्न रोगों की चिकित्सा की दृष्टि से अत्यन्त महत्व है।

प्राण चिकित्सा
के अनुसार चक्र

ग्यारह प्रमुख
चक्र

नीचे से ऊपर के
क्रम में

- | | |
|-----------------|----------------|
| 1. मूलाधार चक्र | (बेसिक चक्र) |
| 2. काम चक्र | (सेक्स चक्र) |
| 3. कटि चक्र | (मिंगमेन चक्र) |
| 4. नाभिचक्र | (नेवल चक्र) |
| 5. प्लीहा चक्र | (स्प्लीन चक्र) |



अभ्यासार्थ प्रश्न (सत्य/असत्य)

- | | |
|--|----------------|
| 1. जीवद्रव्य शरीर को स्पर्श किया जा सकता है। | (सत्य / असत्य) |
| 2. सौर जालिका चक्र उर्जा सफाई घर की तरह कार्य करता है। | (सत्य / असत्य) |
| 3. छोटे चक्र एक इंच से छोटे होते हैं। | (सत्य / असत्य) |
| 4. रोग पहले जीवद्रव्य शरीर में दिखायी देते हैं। | (सत्य / असत्य) |
| 5. कटि चक्र पंपिंग स्टेशन की तरह कार्य करता है। | (सत्य / असत्य) |
| 6. बच्चों में प्लीहा चक्र को उर्जित नहीं करना चाहिये। | (सत्य / असत्य) |
| 7. थायमस ग्रन्थि का सम्बन्ध हृदय चक्र से है। | (सत्य / असत्य) |
| 8. कंठ चक्र को प्रधान चक्र भी कहते हैं। | (सत्य / असत्य) |

- | | |
|---|----------------|
| 9. मूलाधार चक्र काम चक्र को प्रभावित करता है। | (सत्य / असत्य) |
| 10. जीवद्रव्य शरीर 4-5 इंच तक फैला रहता है। | (सत्य / असत्य) |

7.5 सारांश

प्रिय पाठकों, उपरोक्त विवरण से आप समझ गये होंगे कि चक्र हमारे जीवद्रव्य शरीर के महत्वपूर्ण अंग है, जिनके द्वारा हमारे सम्पूर्ण भौतिक शरीर में उर्जा प्रवाहित होती है। चक्रों के ठीक प्रकार से कार्य न करने से प्राणशक्ति असंतुलित हो जाती है तथा भौतिक शरीर अनेक प्रकार के रोगों से ग्रस्त हो जाता है। अतः स्वस्थ रहने के लिये चक्रों का ठीक प्रकार से कार्य करना अत्यावश्यक है। ऐसे तो प्राण चिकित्सा में छोटे-बड़े अनेक चक्रों की चर्चा की गई है, किन्तु उनमें से मूलाधार, काम चक्र, कटिचक्र, नाभिचक्र, प्लीहा चक्र, सौर जालिका चक्र, हृदय चक्र, कंठ चक्र, भृकुटि चक्र, ललाट चक्र और ब्रह्म चक्र ये ग्यारह चक्र प्रधान हैं।

7.6 शब्दावली

भौतिक शरीर –दिखायी देने वाला शरीर, जिसे हम स्पर्श कर सकते हैं।
जीव द्रव्य या उर्जा शरीर—दिखाई ने देने वाला शरीर जिसे हम स्पर्श नहीं, केवल अनुभव कर सकते हैं।
शिरोबिन्दु या नाड़ियाँ— जीवद्रव्य शरीर का भाग जिनसे प्राण प्रवाहित होता है।
किर्लियन फोटोग्राफी— किर्लियन फोटोग्राफी का आविष्कार सन् 1939 में सेम्योन डेविडोविच किर्लियन एवं उनकी पत्नी द्वारा किया गया। इसका उपयोग जीवद्रव्य शरीर के चित्र लेने में किया जाता है।

7.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर—

(सत्य / असत्य)

- | | | | | |
|-----------|----------|-----------|----------|-----------|
| (1) असत्य | (2) सत्य | (3) असत्य | (4) सत्य | (5) सत्य |
| (6) सत्य | (7) सत्य | (8) असत्य | (9) सत्य | (10) सत्य |

7.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- (1) मास्टर चो कोक् सुई— प्राण शक्ति उपचार : प्राचीन विज्ञान और कला।

7.9 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

- (1) प्राण शक्ति : एक दिव्य विभूति— पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य, शांतिकुंज, हरिद्वार, उत्तराखण्ड।
 (2) वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियाँ (2005), डॉ. राजकुमार , प्रभात पेपरबैक्स, नई दिल्ली।

7.10— निबंधात्मक प्रश्न

प्रश्न-1 चक्र से आप क्या समझते हैं? प्राण चिकित्सा के अनुसार प्रमुख चक्रों का वर्णन कीजिए।

इकाई— 8 प्राण चिकित्सा का विविध रोगों में प्रयोग

- 8.1 प्रस्तावना
- 8.2 उद्देश्य
- 8.3 प्राण चिकित्सा का विविध रोगों में प्रयोग
- 8.4 प्राण चिकित्सा की सावधानियाँ
- 8.5 सारांश
- 8.6 शब्दावली
- 8.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 8.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
- 8.9 सहायक उपयोगी पाठ्य-सामग्री
- 8.10 निबंधात्मक प्रश्न

8.1 प्रस्तावना —

प्रिय पाठकों, इससे पूर्व की इकाई में आपने प्राण चिकित्सा की अवधारण का विस्तृत अध्ययन किया है। जैसे-प्राण चिकित्सा का अर्थ, सिद्धान्त, विधि, सावधानियाँ इत्यादि। प्रस्तुत इकाई में इस चिकित्सा के व्यावहारिक पक्ष पर बल डाला गया है। कहने का आशय यह है कि विभिन्न रोगों में हम प्राण चिकित्सा का प्रयोग कैसे कर सकते हैं — प्रस्तुत इकाई में इसी विषय पर बल डाला गया है।

प्रायः प्रत्येक व्यक्ति अपनी रोजमर्रा की जिन्दगी में किसी न किसी प्रकार की शारीरिक अथवा मानसिक समस्या या रोग से ग्रसित रहता है। इन रोगों से छुटकारा पाने में प्राण चिकित्सा कितनी प्रभावी एवं उपयोगी है। प्रस्तुत इकाई में हम इसका विस्तृत अध्ययन करेंगे।

8.2 उद्देश्य —

प्रिय विद्यार्थियों प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप —

1. प्राण चिकित्सा का विभिन्न रोगों में कैसे प्रयोग किया जाता है — इसे स्पष्ट कर सकेंगे।
2. प्राण चिकित्सा के दौरान किन — किन बातों का ध्यान रखना चाहिये, इसका वर्णन कर सकेंगे।

8.3 प्राण चिकित्सा का विविध रोगों में प्रयोग —

1. सिर दर्द एवं आधे सिर का दर्द —

- सिरदर्द होने पर ब्रह्म चक्र, कपाल चक्र, भृकुटी चक्र, सिर के पिछले भाग, पूरे सिर की जाँच करनी चाहिये। सिरदर्द का कारण इन अंगों में प्राणशक्ति का कम या अधिक होना हो सकता है। इसलिये रोग के सही निदान के लिये चक्रों की जाँच ठीक ढंग से करनी चाहिए। इसके साथ-साथ आँखों, कर्णपटी एवं सौरजालिका चक्र की भी जाँच करनी चाहिये।
- इसके बाद ब्रह्म चक्र, कपाल चक्र, भृकुटी चक्र, सिर के पिछले एवं सिर के प्रभावित क्षेत्र में स्थानीय सफाई एवं उर्जित करना चाहिये। यदि दर्द

प्राणशक्ति के हानेयन के कारण है तो स्थानीय झाड़ – बुहार से भी दर्द दूर हो जाता है अथवा रोगी से पूछ लेना चाहिये कि उसे किस जगह दर्द हो रहा है तब पहले जानने के बाद उसका दर्द दूर होने तक प्रभावित क्षेत्र पर एक के बाद एक स्थानीय सफाई और उर्जित करना चाहिये।

- यदि रोगी के सिरदर्द का कारण आँखों में तनाव है तो आँखों के तनाव को दूर करने हेतु उपचार करना चाहिये।
 - यदि रोगी को आधे सिर में दर्द हो अथवा सिरदर्द का कारण तनाव या कोई भावनात्मक समस्या हो तो स्थानीय सफाई की प्रक्रिया ठीक प्रकार से करनी चाहिये तथा सिर के भाग के उपचार से पूर्व अगले एवं पिछले सौर जालिका चक्र को उर्जित करना चाहिये, किन्तु जोर स्थानीय सफाई पर ही देना चाहिये। जब तक आवश्यकता हो सप्ताह में कई बार हीलिंग करनी चाहिये। रोगी से उसके स्वास्थ्य के बारे में निरन्तर पूछते रहना चाहिये। उपचार कितना प्रभावी हुआ है, यह जानने के लिये उपचार किये गये अंग एवं भाग की हमेशा स्कैनिंग करते रहें।
 - उर्जित करने के बाद प्रक्षेपित प्राणशक्ति को स्थिर करना ना भूलें।
2. आँखों में तनाव अथवा थकी आँखें –
- आँखों में तनाव या थकान होने पर आँखों, भृकुटी या आज्ञा चक्र, कनपट्टी एवं पिछले शिरोचक्र की जाँच करनी चाहिये। इन क्षेत्रों की प्राणशक्ति प्रायः कम हो जाती है।
 - आँखों की ठीक प्रकार से स्थानीय सफाई करनी चाहिये और पता लगाना चाहिये कि आँखों का आन्तरिक आभामंडल आकार में बढ़ा हुआ है अथवा नहीं। इस हेतु पुनः स्कैनिंग करनी चाहिये। यदि आकार वृद्धि हुयी है तो समझना चाहिये कि झाड़ – बुहार की प्रक्रिया ठीक ढंग से हुयी है।
 - इसके बाद भृकुटी चक्र , पिछला शिरोचक्र एवं कनपट्टी चक्र की स्थानीय झाड़-बुहार करके उन्हें उर्जित करना चाहिये। उत्सर्जित करते समय उपचारक को एक सफेद प्रकाश के रूप में प्राणउर्जा की कल्पना करनी चाहिये जो आँखों के अन्दर जा रही है।
 - आँखों का उपचार करते समय हमेशा इस बात का ध्यान रखें कि आँखों को कभी भी सीधे उर्जित नहीं करना चाहिये, क्योंकि ऐसा करने पर एक लम्बे समय के बाद आँखें खराब हो सकती है।

3. आँखों में सूजन –

- आँखों में सूजन होने पर सबसे पहले 2-3 बार सामान्य सफाई की प्रक्रिया करनी चाहिये।
- इसके बाद उपचार की वही प्रक्रिया अपनायी चाहिये जो “आँखों के तनाव अथवा थकी आँखें” के लिये अपनायी जाती है।
- उपचार के दौरान हमेशा इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि आँखों की झाड़ – बुहार ठीक तरह से और पूरी तरह से की गई हो।

- उपचार की जब तक आवश्यकता हो तब तक दिन में दो-तीन बार दोहराना चाहिये।

4. कान दर्द –

- सबसे पहले पीड़ित कान एवं जबड़ों के छोटे चक्र पर अच्छी तरह से स्थानीय सफाई और उर्धन की प्रक्रिया को अपनाना चाहिये।
- रोगी की नाक मोटी होने पर आज्ञा चक्र की स्थानीय सफाई करके इसे उत्सर्जित करना चाहिये।
- जब तक आवश्यक हो तब तक दिन में 2 – 3 बार इस इलाज को दोहराना चाहिये।

5. नाक से खून बहना –

- नाक से खून बहने पर आज्ञा चक्र की सफाई करके इसे उत्सर्जित करना चाहिये।
- इसके उपरान्त प्रक्षेपित प्राणशक्ति को स्थिर करना चाहिये।

6. दाँत दर्द –

- दाँत दर्द होने पर सर्वप्रथम प्रभावित अंग की जाँच करनी चाहिये।
- दर्द होने वाले भाग में प्रायः प्राणशक्ति कम होती है।
- स्थानीय झाड़ – बुहार द्वारा प्रभावित अंग की ठीक प्रकार से सफाई करनी चाहिये।
- इसके बाद प्रभावित अंग को तब तक उत्सर्जित करना चाहिये जब तक कि रोगी का दर्द दूर न हो जाये।
- प्रक्षेपित प्राणशक्ति को स्थिर करना चाहिये।

7. गले में सूजन अथवा स्वर यंत्र रोग –

- स्वर यंत्र से संबधित कोई समस्या अथवा रोग होने पर कंठ चक्र, छोटे कंठ चक्र तथा जबड़े के छोटे चक्र की स्थानीय सफाई एवं उत्सर्जन करना चाहिये।
- जब तक समस्या दूर न हो तब तक इस उपचार को दिन में अनके बार दोहराना चाहिये।

8. सर्दी – खांसी एवं बंद नाक –

- सर्दी – खांसी एवं नाक बंद होने पर आज्ञा या भृकुटी चक्र, कंठ चक्र एवं छोटा कंठ चक्र, पिछला हृदय चक्र, फेफड़े के चक्र (अगला – पिछला और अगल – बगल का) तथा अगले तथा पिछले सौर जालिका चक्रों की जाँच करनी चाहिये। समस्या या रोग का कारण प्राणशक्ति का समापन अथवा प्राणशक्ति का कमजोर होना हो सकता है।
- ऐसी समस्या होने पर पूरा शरीर ही प्रभावित होता है। अतः सम्पूर्ण शरीर की सामान्य झाड़ – बुहार करनी चाहिये।

9. हिचकियाँ –

- हिचकी की समस्या होने पर अगले तथा पिछले सौर जालिका चक्र की स्थानीय सफाई और उर्धन् करना चाहिये।
- इलाज तब तक जारी रखना चाहिये जब तक रोग दूर न हो जाये।
- यदि रोगी दीर्घकाल से हिचकियों से परेशान है तो ऐसी स्थिति में ग्राशि चक्र की स्थानीय सफाई और उर्जन् तब तक करते रहना चाहिये जब तक रोगी पूरी तरह स्वस्थ न हो जाये।
- प्रक्षेपित प्राणशक्ति को स्थिर करना चाहिये।
- आवश्यक होने पर कई बार इलाज करना चाहिये

10. भूख कम लगना –

- भूख ठीक तरह न लगने पर अथवा कम लगने पर अग्र एवं पश्च सौर जालिका चक्र एवं नाभि चक्र की स्थानीय सफाई करके उन्हें उत्सर्जित करना चाहिये।
- प्रक्षेपित प्राण ऊर्जा को स्थिर करना ना भूलें।
- आवश्यक होने पर इलाज की प्रक्रिया दोहरायें।
- नाक बंद होने पर आज्ञा चक्र की स्थानीय सफाई और उत्सर्जन करना चाहिये।
- खांसी होने पर कंठ चक्र एवं छोटे कंठ चक्र की स्थानीय झाड़ – बुहार तथा उर्जन् करना चाहिये।
- यदि फेफड़े प्रभावित हो तो फेफड़ों तथा पिछले हृदय चक्र द्वारा फेफड़ों को उत्सर्जन करना चाहिये।
- इसके बाद अग्र एवं पश्च सौर जालिका चक्र की स्थानीय सफाई तथा उत्सर्जन करना चाहिये। ऐसा करने पर सम्पूर्ण शरीर को ऊर्जा मिलती है।
- प्रक्षेपित प्राणऊर्जा को स्थिर करना चाहिये।
- इसके उपरान्त जिस भाग का उपचार किया गया है उसकी पुनः जाँच करनी चाहिये। यदि उपचार ठीक ढंग से हुआ है तो रोगी को तुरन्त बहुत आराम मिलता है।
- रोग को दूर करने तथा पिछले उपचार को और अधिक स्थायी बनाने के लिये 4 घंटे बाद एक बार पुनः उपचार की प्रक्रिया को दोहराना चाहिये।
- तदुपरान्त रोगी को विश्राम करने तथा कम भोजन करने के लिये निर्देश देना चाहिये क्योंकि अधिक मात्रा में भोजन करने से अधिक प्राणशक्ति व्यय होती है। रोग जल्दी दूर हो और उपचार की प्रक्रिया तीव्र गति से हो इसके लिये अत्यधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है।

11. पेट दर्द तथा गैस दर्द –

- पेट में दर्द होने पर अगले तथा पिछले सौर जालिका चक्र, नाभि चक्र तथा पेट की जाँच करानी चाहिये तथा इनकी स्थानीय सफाई करनी चाहिये।

- कई बार केवल स्थानीय झाड़ – बुहार से ही समस्या दूर हो जाती है। अतः सफाई ठीक प्रकार से करनी चाहिये।
- अगले – पिछले सौर जालिका चक्र एवं नाभि चक्र को उत्सर्जित करना चाहिये।
- प्रक्षेपित प्राणशक्ति को स्थिर करना चाहिये।

12. डायरिया (दस्त) –

- डायरिया होने पर अगले सौर जालिका चक्र, नाभि चक्र तथा पेट की स्कैनिंग करनी चाहिये।
- सामान्य झाड़ – बुहार करना चाहिये।
- नाभि चक्र, अगले सौर जालिका चक्र और पेट की स्थानीय सफाई करनी चाहिये। पेट की सफाई पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिये।
 - इसके बाद नाभि चक्र और अगले सौर जालिका चक्र को उत्सर्जित करना चाहिये।
 - यदि उपचार ठीक तरह से हुआ है तो रोगी को आराम मिल जाना चाहिये।
 - कई बार अगले सौर जालिका चक्र, नाभि चक्र एवं पेट के ऊपरी एवं निचले हिस्से की केवल स्थानीय झाड़ – बुहार से भी रोगी का आराम मिल जाता है।
 - रोगी के बहुत कमजोर होने की स्थिति में शरीर को ताकत प्रदान करने के लिये मूलाधार चक्र की भी स्थानीय सफाई करके उसे उत्सर्जित करना चाहिये।
 - प्रक्षेपित प्राणशक्ति को स्थिर कर देना चाहिये।
 - यदि रोगी के दर्द बहुत ज्यादा हो रहा हो तथा पतले दस्त अधिक हो रहे हों तो यह इस बात का संकेत है कि रोगी की सफाई प्रक्रिया ठीक प्रकार से नहीं हुयी है। अतः रोगी के सौर जालिका चक्र, नाभि चक्र एवं पेट के निचले हिस्से की स्थानीय सफाई करनी चाहिये।
 - यदि रोग फिर भी दूर न हो और वैसे ही लक्षण बनें रहें तो उन्नत, कुशल प्राणशक्ति उपचारक से मिलने की सलाह देनी चाहिये।

13. कब्ज –

- कब्ज की शिकायत होने पर उपचारक को रोगी के अगले सौर जालिका चक्र, नाभि चक्र, पेट तथा मूलाधार चक्र की जाँच करनी चाहिये।
- इसके बाद अग्र सौर जालिका चक्र, नाभि चक्र, एवं मूलाधार चक्र की स्थानीय सफाई और इन्हें उत्सर्जित करना चाहिये।
- प्रक्षेपित प्राणशक्ति को स्थिर करना चाहिये।

- सामान्य रोगी को तो कुछ ही समय में आराम मिल जाता है।
- यदि रोगी को कब्ज गंभीर एवं पुराना है तो उसे ठीक होने में कुछ वक्त लग सकता है। पुराने कब्ज को दूर करने के लिये उपचार की प्रक्रिया को सप्ताह में कई बार तब तक दोहराना चाहिये जब तक आवश्यक हो। उपचार की प्रक्रिया से रोगी के उत्सर्जन तंत्र में सुधान होकर वह ताकतवर बनता है।

14. परजीवी कृमि –

- इस समस्या को दूर करने के लिये भी उपचार की वही प्रक्रिया अपनायी जाती है जो कब्ज के लिये है।
- जब तक आवश्यक हो तब तक सप्ताह में कई बार इलाज करना चाहिये।

15. मासिक धर्म का दर्द –

- मासिक धर्म का दर्द होने पर काम चक्र, नाभि चक्र, पेट के निचले हिस्से तथा मूलाधार चक्र की ठीक प्रकार से जाँच करनी चाहिये।
- इसके बाद काम चक्र, नाभि चक्र, तथा मूलाधार चक्र की स्थानीय सफाई करके उन्हें उर्जित करना चाहिये। स्थानीय झाड़ू – बुहार पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिये।
- यदि पीड़ित व्यक्ति का अत्यधिक थकान लगे और चक्कर आये तो सौर जालिका चक्र की भी जाँच करके उसका उपचार करना चाहिये।
- रोगी में प्रक्षेपित प्राणशक्ति को स्थिर कर देना चाहिये।
- उपचार ठीक ढंग से होने पर जल्दी ही आराम मिलने लगता है।
- मासिक धर्म होने पर दर्द न हो इसके लिये मासिक धर्म प्रारम्भ होने के तीन दिन पहले से ही उपचार प्रारम्भ किया जा सकता है।

16. अनियमित मासिक धर्म अथवा मासिक धर्म न होना –

- ऐसी समस्या होने पर उपचार हेतु वही प्रक्रिया अपनायें, जो मासिक धर्म का दर्द होने पर अपनायी जाती है।
- इसके साथ – साथ भृकुटी चक्र तथा गले की स्थानीय सफाई करनी चाहिये और उन्हें उर्जित करना चाहिये।
- जब तक आवश्यकता हो, सप्ताह में कई बार उपचार को दोहराना चाहिये।

17. माँसपेशियों का दर्द और मोच –

- इसके लिये सर्वप्रथम पीड़ित अंग की स्थानीय सफाई करनी चाहिये तथा उसे उर्जित करना चाहिये।
- उर्जित करने पर विशेष रूप से ध्यान केंद्रित करना चाहिये।

- जब तक रोगी पूरी तरह ठीक न हो जोये तब तक उर्जित करते रहना चाहिये।
- रोगी को इस बात के लिये निर्देशित किया जाना चाहिये कि जब तक वह पूरी तरह ठीक न हो जाये तब तक पीड़ित अंग या भाग से ज्यादा कार्य ना करें, क्योंकि ऐसा करने पर दर्द पुनः शुरू हो सकता है।
- प्रक्षेपित प्राणशक्ति को स्थिर कर देना चाहिये।

18. पीठ दर्द –

- पीठ दर्द होने पर रोगी के पूरे शरीर की जाँच करनी चाहिये और रीढ़ की हड्डी, अगले एवं पिछले सौर जालिका चक्र एवं मूलाधार चक्र की विशेष रूप से जाँच करनी चाहिये।
- 2 से 3 बार सामान्य सफाई करनी चाहिये।
- पूरी रीढ़ की हड्डी की 10 या इससे अधिक बार स्थानीय सफाई करनी चाहिये।
- अग्र एवं पश्च सौर जालिक चक्र एवं मूलाधार चक्र की स्थानीय सफाई करनी चाहिये।
- पीड़ित अंग एवं स्थान की स्थानीय सफाई और उन्हें उत्सर्जित करना चाहिये।
- मिंग मेन चक्र को उर्जित नहीं करना चाहिये।
- प्रक्षेपित प्राणशक्ति को स्थिर करना भूलें।
- स्थायी रूप से आराम के लिये उपचार को कई सप्ताह तक करना चाहिये।

19. बाँह उठाने में कठिनाई (फ़ोजन शोल्डर्स) –

- रोगी की ठीक प्रकार से जाँच करनी चाहिये।
- ऐसी समस्या प्रायः बगलों में स्थित छोटे चक्र में उर्जा के हानेयन क कारण उत्पन्न हो जाती है।
- कई बार बिना उर्जित किये केवल स्थानीय सफाई से रोगी को आराम मिल जाता है। अतः स्थानीय झाड़ – बुहार ठीक प्रकार से करना चाहिये।
- 2 – 3 बार सामान्य सफाई करनी चाहिये।
- पीड़ित कंधे एवं बगल की ठीक प्रकार से स्थानीय सफाई करके इन्हें उर्जित करना चाहिये।
- इसके साथ – साथ कंठ चक्र, द्वितीय कंठ चक्र, जबड़े के छोटा चक्र, अगले एवं पिछले सौर जालिका चक्र, नाभि चक्र, काम चक्र या मूलाधार चक्र की स्थानीय सफाई करके इन्हें उर्जित करना चाहिये। उपचार के दौरान सौर जालिका चक्र, मूलाधार चक्र तथा गर्दन की सफाई तथा उर्जन पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिये।

- मूलाधार चक्र शरीर के अस्थि तंत्र और माँसपेशियों के नियंत्रण तथा उर्जन का कार्य करता है। अतः इस चक्र का ठीक से उपचार करना चाहिये।
- प्रक्षेपित प्राणशक्ति को स्थिर कर देना चाहिये।

20. गर्दन में खिंचाव –

- गर्दन में खिंचाव होने पर सिर के पीछे के निचले भाग, पूरी गर्दन, दोनों कंधों और बगलों की ठीक प्रकार से जाँच करनी चाहिये।
- इन अंगों की स्थानीय सफाई तथा इन्हें उर्जित करना चाहिये।
- प्रक्षेपित प्राणऊर्जा को स्थिर करें।
- कभी – कभी उच्च रक्तचाप अथवा हृदय रोग के कारण भी गर्दन में खिंचाव हो जाता है। अतः ऐसी स्थित उत्पन्न होने पर उन्नत एवं कुशल प्राणशक्ति उपचारक से मिलने का निर्देश दें।

21. सामान्य जोड़ों का दर्द अथवा गठिया –

- जोड़ों में दर्द होने पर बारी – बारी से पीड़ित अंग की स्थानीय सफाई और उर्जन् करना चाहिये। ऐसा तब तक करते रहना चाहिये जब तक कि रोगी को आंशिक या पूर्णतः आराम ना मिले।
- रीढ़ की हड्डी की भी स्थानीय सफाई करनी चाहिये।
- अग्र एवं पश्च सौर जालिका चक्र, यकृत, नाभि चक्र, काम चक्र तथा मूलाधार चक्र की स्थानीय सफाई करके इन्हें उर्जित करना चाहिये।
- प्रक्षेपित प्राणऊर्जा को स्थिर करना चाहिये।
- जब तक आवश्यकता हो तब तक उपचार का सप्ताह में कई बार करना चाहिये।
- इस संबंध में यह बात ध्यान रखनी चाहिये कि कई बार रोगी बार के उपचार या कई उपचारों के बाद दर्द से पूरी तरह छुटकारा लेता है, किन्तु इसका आशय यह नहीं कि वह पूरी तरह ठीक हो गया है। ऐसा भी हो सकता है कि रोग अभी आंशिक रूप से ठीक हुआ हो तथा पूरी तरह ठीक हुआ हो तथा पूरी तरह ठीक होने की प्रक्रिया में हो। इसलिये रोगी की ठीक प्रकार से जाँच करते रहना चाहिये और रोग जब तक पूरी तरह दूर न हो जो तब तक इलाज करते रहना चाहिये।

22. माँसपेशियों में ऐंठन –

- सर्वप्रथम पीड़ित अंग की जाँच करनी चाहिये।
- इसके बाद प्रभावित अंग की स्थानी सफाई और उन्हें उर्जित करना चाहिये।
- उत्सर्जन पर विशेष रूप से ध्यान केंद्रित करना चाहिये।

- इसके साथ – साथ अग्र एवं पश्च सौर जालिका चक्र, नाभि चक्र, काम चक्र एवं मूलाधार चक्र की स्थानीय झाड़ – बुहार और उन्हें उर्जित करना चाहिये।
- प्रक्षेपित प्राण उर्जा को स्थिर करना चाहिये।

23. साधारण जलने पर –

- यदि गर्म तेल अथवा पानी से शरीर का कोई अंग अथवा भाग जल जाये तो सर्वप्रथम शीघ्रतापूर्वक तेल या पानी को धीरे से पोंछ देना चाहिये।
- इसके बाद पीड़ित अंग की बारी – बारी से सफाई तथा उत्सर्जन करना चाहिये। प्रायः 20 – 30 मिनट के अन्दर रोगी को काफी आराम मिल जाता है। यदि उपचार ठीक प्रकार से किया गया है तो जले हुये स्थान पर छाला अथवा फफोला नहीं होगा, केवल एक लाल निशान ही दिखाई देता है। जब तक यह लाल निशान न हटे, तब तक इस इलाज को दिन में कई बार करना चाहिये।
- यदि शरीर के किसी अंग को जले हुये कुछ घंटे अथवा कुछ दिन हो जाये तो ऐसी स्थिति में प्रभावित अंग तथा मूलाधार चक्र की ठीक से स्थानीय सफाई करके इन्हें उर्जित करना चाहिये। उपचार की प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बनाने हेतु मूलाधार चक्र का भी उपचार किया जाता है।
- जब तक आवश्यक हो तब तक सप्ताह में कई बार इस उपचार की प्रक्रिया को दोहराना चाहिये।
- उपचार के दौरान इस बात का ध्यान रखा जा कि शरीर के जिस भाग या अंग का इलाज किया जा रहा है उसे समुचित रूप से उर्जित किया जाये।
- प्रक्षेपित प्राणशक्ति को स्थिर कर देना चाहिये।

24. कटे हुये और ज्वलनकारी घाव –

- नये, कटे घावों के लिये सर्वप्रथम शीघ्र ही स्थानीय सफाई करनी चाहिये। इसके बाद प्रभावित अंग को समुचित ऊर्जा प्रदान करनी चाहिये।
- घाव में जलन होने पर पीड़ित अंग की स्थानीय झाड़ – बुहार के बाद उसे उर्जित करना चाहिये। इस दौरान स्थानीय सफाई पर विशेष से ध्यान देने की आवश्यकता होती है, क्योंकि कभी – कभी 50– 100 बार तक भी स्थानीय सफाई की आवश्यकता हो सकती है।
- उपचार की प्रक्रिया को अधिक तीव्र एवं प्रभावी बनाने के लिये मूलाधार चक्र की भी स्थानीय सफाई और उसे उर्जित करना चाहिये।
- प्रक्षेपित प्राणशक्ति को स्थिर करना ना भूलें।

- जब तक आवश्यक हो तब तक इलाज को दिन में 2 – 3 बाद दोहराना चाहिये।
- 25. धूप से चमड़ी झुलसना –
 - धूप से चमड़ी झुलसने का कारण सौर प्राण उर्जा की अधिकता है।
 - इसलिये तीन बार सामान्य सफाई की प्रक्रिया को अपनाना चाहिये।
 - जब तक रोग पूरी तरह दूर ना हो जाये तब तक प्रभावित भाग की स्थानीय झाड़ – बुहार करनी चाहिये।
 - इस समय यह विशेष रूप से ध्यान रखें कि रोगी को उर्जित नहीं करना है।
 - यदि उपचार ठीक ढंग से किया जाता है तो रोगी को शीघ्र ही फायदा होने लगता है।
- 26. दाद खाज तथा त्वचा की सामान्य एलर्जी –
 - प्रभावित अंग या भाग की तब तक स्थानीय सफाई और उर्जा देने का कार्य करें, जब तक कि रोगी को पूरी तरह आराम नहीं मिल जाता है।
 - जिगर के आगे-पीछे, दाँये-बाँये स्थानीय सफाई करनी चाहिये।
 - सौर जालिका चक्र, नाभि चक्र तथा मूलाधार चक्र की स्थानी सफाई और उन्हें उर्जित करना चाहिये।
 - प्रक्षेपित प्राणउर्जा को स्थिर करना चाहिये।
 - जब तक आवश्यक हो तब तक सप्ताह में 3 बार इस उपचार की प्रक्रिया को दोहराना चाहिये।
- 27. फोड़े – फुन्सियाँ –
 - फोड़े-फुन्सियाँ होने पर सर्वप्रथम प्रभावित अंग की ठीक प्रकार से स्थानीय झाड़-बुहार करके इसे उर्जित करना चाहिये।
 - स्थानीय सफाई पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिये। यदि उपचार की प्रक्रिया ठीक तरह सम्पन्न हुयी है तो फुन्सियों का रंग गहरे लाल से गुलाबी हो जाता है।
 - फुन्सियों के बहुत पुरानी होने पर जिगर तथा अगले एवं पिछले सौर जालिका चक्र की भी स्थानीय झाड़ – बुहार और उर्जन् करना चाहिये।
 - साथ ही मूलाधार चक्र की भी स्थानीय सफाई करके इसे उर्जित करना चाहिये।
 - प्रक्षेपित प्राणउर्जा को स्थिर करना ना भूलें।
 - आवश्यक होने पर उपचार को दोहराना चाहिये।

28. कीड़ों एवं खटमलों का काटना –

- जिस स्थान पर कीड़े या खटमल ने काटा है, उस स्थान की बारी – बारी से तब तक स्थानीय सफाई और उर्जन करना चाहिये जब तक कि लालिमा तथा सूजन कम ना हो जाये।
- रोगी में प्रक्षेपित प्राणउज्ज को स्थिर कर देना चाहिये।
- जब तक आवश्यक हो, तब तक इलाज को दोहराना चाहिये।

29. मुहांसे –

- प्रायः यह समस्या चेहरे की प्राणऊर्जा के कम होने के कारण होती है। अतः चेहरे की अच्छी तरह सफाई करके इसे अर्जित करना चाहिये।
- इसके साथ – साथ आज्ञा चक्र, कटे चक्र, सौर जालिका चक्र, नाभि चक्र, काम चक्र तथा मूलाधार चक्र की स्कैनिंग करके इनकी स्थानीय झाड़ – बुहार करनी चाहिये तथा इन्हें अर्जित करना चाहिये।
- उपचारक को चाहिये कि वह प्रक्षेपित प्राणऊर्जा को स्थिर जरूर करे।
- चेहरे की सफाई और उर्जन दिन में 1–2 बार की जा सकती है तथा बड़े चक्रों का उपचार 2 – 3 दिन में एक बार करना चाहिये।
- इसके साथ रोगी को अपने आहार पर और चेहरे की सफाई पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिये। मुहांसों को खुजलाना या रगड़ना नहीं चाहिये।

30. अनिद्रा –

- प्रायः अनिद्रा की समस्या सौर जालिका चक्र और मूलाधार चक्र के अत्यधिक उत्तेजित होने के कारण (प्राणशक्ति के हानेयन के कारण) होती है।
- अतः ऐसी स्थिति में सर्वप्रथम रोगी की ऊपर से नीचे की ओर 3–5 बार सामान्य झाड़ – बुहार करनी चाहिये।
- इसके बाद मूलाधार और सौर जालिका चक्र की 30 – 50 बार स्थानीय सफाई करनी चाहिये।
- झाड़ – बुहार ऊपर से नीचे की ओर ही करनी चाहिये न कि नीचे से ऊपर की ओर। नीचे से ऊपर की ओर करने से रोगी ज्यादा उत्तेजित या जागृत हो सकता है।
- रोगी के भावनात्मक रूप से परेशान होने पर तीन से पाँच बार सामान्य झाड़ – बुहार करना चाहिये।

- इसके बाद ब्रह्म चक्र, सौर जालिका चक्र तथा मूलाधार चक्र की 30 – 50 बार स्थानीय सफाई करके उन्हें थोड़ा अर्जित करना चाहिये।
- प्रक्षेपित प्राणऊर्जा को स्थिर करना ना भूलें।
- जब तक समस्या दूर न हो तब तक उपचार की प्रक्रिया को सप्ताह में तीन बार दोहराना चाहिये।
- रोगी में प्राणशक्ति कम होने पर सामान्य झाड़ – बुहार कई बार करनी चाहिये।
- इसके साथ ही नाभि चक्र तथा सौर जालिका चक्र की स्थानीय सफाई करके इन्हें अर्जित करना चाहिये।

31. सामान्य कमजोरी –

- इसके लिये सर्वप्रथम 2 – 3 बार सामान्य झाड़ – बुहार करना चाहिये।
- इसके बाद मूलाधार चक्र, नाभि चक्र, अग्र तथा पश्च सौर जालिका चक्र की स्थानीय सफाई करके उन्हें उर्जित करना चाहिये।
- जब तक आवश्यक हो तब तक उपचार की प्रक्रिया को सप्ताह में तीन बार दोहराना चाहिये।
- प्रक्षेपित प्राणऊर्जा को स्थिर करते रहना चाहिये।

32. थकान से छुटकारा –

- थकान से छुटकारा पाने के लिये भी उपचार की वही प्रक्रिया अपनानी चाहिये। जो सामान्य कमजोरी को दूर करने के लिये बतायी गई है।
- यदि इस प्रक्रिया को ठीक ढंग से लगातार अपनाया जाता है तो इसके अत्यन्त प्रभावी परिणाम प्राप्त होते हैं।
- इस उपचार प्रक्रिया का उपयोग कामकाजी व्यक्तियों की “ऊर्जाशक्ति को बढ़ाने” के लिये किया जाता है।

33. बुखार –

प्राण चिकित्सा में बुखार के उपचार को तीन भागों में विभक्त किया गया है।

1. बुखार को कम करना।
2. हाथों तथा पैरों की हड्डियों को उर्जा प्रदान करके शरीर में प्राणऊर्जा के स्तर को बढ़ाकर शरीर के प्रतिरक्षा तंत्र को मजबूत बनाना।
3. बुखार के कारणों अथवा पीड़ित अंगों का उपचार करना।

प्रायः बुखार श्वसन संबंधी अथवा आँतों में संक्रमण के कारण होता है। बच्चों में टॉन्सिल्स के कारण भी बुखार होता है।

- बुखार पीड़ित रोगी के सर्वप्रथम प्रमुख चक्रों, श्वसन संस्थान एवं अन्न प्रणाली से संबंधित मुख्य अंगों की जाँच करनी चाहिये।

- बुखार की स्थिति में रोगी की प्राणशक्ति प्रायः कम हो जाती है तथा आन्तरिक आभामण्डल छोटा होकर 2 इंच या उससे भी कम हो जाता है, किन्तु सौर जालिका चक्र में प्राणशक्ति की अधिकता हो जाती है।
- रोग के लक्षणों के बारे में रोगी से भी जानकारी लेनी चाहिये।
- इसके बाद 3 – 5 बार सामान्य झाड़ – बुहार करनी चाहिये।
- 50– 100 बार तक अग्र एवं पश्च सौर जालिका चक्र की स्थानीय सफाई करके इन्हें उर्जित करना चाहिये। सम्पूर्ण शरीर की झाड़-बुहार किये बिना सौर जालिका चक्र को उर्जित नहीं करना चाहिये। ऐसा करने पर बुखार की स्थिति बिगड़ सकती है। अतः पहले पूरे शरीर की सफाई करें। इसके बाद सौर जालिका चक्र की झाड़ – बुहार करके उसे उर्जित करना चाहिये।
- कई बार केवल सामान्य सफाई तथा अग्र एवं पश्च सौर जालिका चक्र की सफाई और उन्हें उर्जित करने से बुखार थोड़ा कम हो जाता है।
- इसके साथ – साथ नाभि चक्र, हथेलियों और तलुवों के चक्रों की भी सफाई और उन्हें उर्जित करना चाहिये। प्रक्षेपित प्राणउर्जा को हथेलियों के चक्र एवं तलुवों के चक्र पर स्थिर नहीं करना चाहिये। क्योंकि ऐसा करने से इन चक्रों में आंशिक रूप से रूकावट आने की संभावना रहती है।
- ब्रह्म चक्र की भी स्थानीय सफाई करके इसे अर्जित करना चाहिये।
- पतले दस्त, उल्टी और पेट दर्द के साथ बुखार आने पर अग्र एवं पश्च सौर जालिका चक्र, आमाशय नाभि चक्र, छोटी एवं बड़ी आँत की ठीक प्रकार से सफाई करनी चाहिये। सौर जालिका चक्र तथा नाभि चक्र को कोमलता से उर्जित करना चाहिये। सफाई बहुत अच्छे ढंग से करनी चाहिये। सफाई किये बिना अर्जित करने पर स्थित और ज्यादा खराब हो सकती है।
- यदि बुखार सर्दी – खांसी के साथ आ रहा है तो ऐसा बुखार सामान्यतया श्वास के संक्रमण रोग के साथ मिश्रित होता है। ऐसी स्थिति में आज्ञा चक्र, कंठ चक्र, द्वितीय कंठ चक्र, पिछले हृदय चक्र तथा फेफड़ों की स्थानीय सफाई करके इन्हें उर्जित करना चाहिये।
- इसके उपरान्त प्रक्षेपित प्राणउर्जा को स्थिर कर देना चाहिये।
- बुखार में बेसिक चक्र (मूलाधार चक्र) को सीधे उर्जित नहीं करना चाहिये, क्योंकि इस चक्र के अधिक उर्जित होने से बुखार और अधिक बढ़ जाता है। अतः इसमें मूलाधार चक्र को अलग से

उर्जित नहीं किया जाता। तलवों के चक्रों को उर्जित करने से मूलाधार चक्र अपने आप ही अर्जित हो जाता है।

- तीव्र संक्रमण की स्थिति में अगले तथा पिछले प्लीहा चक्र को कोमलता से अर्जित करना चाहिये। इससे रोगप्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है। रोगी को देखते रहना चाहिये, क्योंकि ऊर्जा अधिक होने से रोगी बेहोश भी हो जाते हैं, किन्तु प्रायः ऐसा कम होता है। यदि रोगी को उच्चरक्तचाप की भी शिकायत है तो उसके प्लीहा चक्र को अधिक अर्जित करना चाहिये।
- उपचार ठीक तरह से किया जाये तो रोगी को एक घंटे या उससे कम समय में ही बहुत आराम मिल जाता है। कभी – कभी कुछ रोगियों में प्रारंभिक दो घंटे में तापमान कुछ बढ़ जाता है। ऐसा होने पर सामान्य झाड़ – बुहार और सौर जालिका चक्र की स्थानी सफाई करनी चाहिये।
- बुखार को शीघ्रता से दूर करने और उपचार की गति में तीव्रता लाने के लिये इस इलाज को दिन में 2– 3 बार करना चाहिये। कुछ रोगी 1 – 2 दिन के अन्दर ही ठीक हो जाते हैं।
- शिशुओं और बच्चों में बुखार को दूर करने के लिये सामान्य सफाई तथा अगले एवं पिछले सौर जालिका चक्र की स्थानीय सफाई करनी चाहिये। थोड़े समय में ही बुखार को कम करने के लिये ऐसा करना पर्याप्त है। आवश्यक होने पर यह प्रक्रिया दिन में कई बार अपनायें।
- यदि रोगी की स्थिति में किसी प्रकार का सुधार न हो तो उसे किसी उन्नत कुशल प्राणचिकित्सक से उपचार करवाने की सलाह दें।

यदि आप (हीलर) निश्चित न हो तो ऐसी स्थिति में क्या करना चाहिये (सामान्य रोगों के लिये)

- यदि हीलर निश्चित न हो तो ऐसी स्थिति में उसे रोगी से ही उसके रोग या समस्या के बारे में विस्तार से जानकारी लेनी चाहिये।
- पीड़ित अंग या भाग की लगभग 30 से 50 बार स्थानीय सफाई करके उसे उर्जित करना चाहिये।
- आवश्यक होने पर इलाज को दोहराना चाहिये।

8.4 प्राण चिकित्सा की सावधानियाँ –

उपचार कितने अंतर से किया जाना चाहिये –

प्रिय पाठकों, प्राण चिकित्सा द्वारा विविध रोगों का उपचार कितने – कितने अंतर से किया जाना चाहिये यह बात निम्न चार कारकों पर निर्भर करती है –

1. रोग की गंभीरता तथा तीव्रता
2. प्राणऊर्जा की खपत की दर

3. उपचार किये जाने वाले अंग का नाजुकपन एवं प्रमुखता।
4. रोगी की आयु एवं स्वास्थ्य की स्थिति।
इन कारकों का विस्तृत विवेचन निम्नानुसार है।

1. रोग की गंभीरता तथा तीव्रता –

प्राण चिकित्सा में उपचार कितने अन्तर से किया जाये यह बहुत कुछ रोग की गंभीरता और तीव्रता पर निर्भर करता है। यदि गंभीर रोग है तो रोगी की दशा तीव्रता से बिगड़ सकती है। अतः रोगी की स्थिति ज्यादा खराब न हो इस हेतु उपचार दिन में कई बाद देना आवश्यक हो जाता है। जैसे – यदि कोई व्यक्ति कैंसर का रोगी है तो उसका दिन में कम से कम दो बार इलाज अत्यावश्यक है। यदि उपचार सप्ताह में केवल एक या दो बार ही किया जाता है तो इससे रोगी के स्वास्थ्य में सुधार होने की संभावना बहुत कम होती है क्योंकि रोग बढ़ने की गति उपचार की गति से बहुत तीव्र होती है।

कभी – कभी रोग के बिगड़ने की गति इतनी तीव्र होती है कि उसमें प्रत्येक घंटे के बाद अथवा 4 घंटे में एक बार उपचार देना बहुत आवश्यक होता है।

2. प्राणऊर्जा की खपत की दर –

प्राणऊर्जा की खपत की दर पर भी यह निर्भर करता है कि कितने अन्तराल से उपचार किया जाये। शरीर के ऐसे ऊतक जो कटने, जलने, सूजन के कारण या तीव्र संक्रमण के कारण नष्ट हो जाते हैं, उनमें प्राणऊर्जा की खपत बहुत अधिक मात्रा में तथा अत्यन्त तीव्र गति से होती है। अतः रोगी के किसी तीव्र संक्रमण रोग से ग्रसित होने पर अथवा जल जाने पर उसे कुछ घंटों तक प्रत्येक घंटे के बाद अर्जित करना चाहिये। अग्न्याशय में तीव्र जलन होने पर प्रति चार घंटे बाद उपचार करना चाहिये। इसी प्रकार यदि रोगी की बाँह में सूजन आ गई हो तो पहले कुछ घंटों में कई बार उपचार की आवश्यकता होती है। यदि इलाज शीघ्र तथा ठीक तरह से किया जाता है तो पीड़ित भाग की त्वचा काली अथवा नीली – पीली नहीं होती है और आराम भी शीघ्रता से मिलता है। एक – दो दिन में रोगी को काफी लाभ मिलने लगता है।

3. उपचार किये जाने वाले अंग का नाजुकपन एवं प्रमुखता –

प्राण चिकित्सा के दौरान यह ध्यान रखना चाहिये कि यदि उपचार किया जाने वाला अंग अत्यन्त नाजुक तथा प्रमुख है। जैसे कि आँख, हृदय, सिर आदि तो उपचार जल्दी – जल्दी नहीं दिया जाता अपितु लंबे अंतराल के बाद उपचार करने का निर्देश दिया जाता है। क्योंकि जल्दी – जल्दी इलाज करने से इन नाजुक अंगों में प्राणशक्ति की अधिकता हो सकती है जिससे रोगी को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है।

4. रोगी की आयु एवं स्वास्थ्य की स्थिति –

उपचार के दौरान रोगी की उम्र तथा स्वास्थ्य की स्थिति को भी ध्यान में रखना अत्यन्त आवश्यक है। वृद्ध तथा कमजोर रोगियों को हल्के तथा लम्बे उपचार की आवश्यकता होती है। इसका कारण यह है कि ऐसे लोगों की प्राणऊर्जा को ग्रहण करने की शक्ति प्रायः कम होती है।

इसी प्रकार रोगी यदि कोई बच्चा या गर्भवती है तो उनके उपचार के दौरान भी इस बात का ध्यान रखना चाहिये।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि प्राणचिकित्सा द्वारा सभी रोगों का उपचार समान अंतराल से नहीं किया जाता है। कुछ रोगों में जल्दी – जल्दी

उपचार करने की आवश्यकता होती है तो कुछ स्थितियों में धीरे – धीरे अतः रोग की गंभीरता, तीव्रता, रोगी की खपत की दर, रोगग्रस्त अंग की नाजुकता एवं प्रमुखता इत्यादि अनेक ऐसे कारक हैं, जिनको प्राण चिकित्सा द्वारा उपचार करते समय ध्यान में रखना चाहिये।

8.5 सारांश –

प्रिय विद्यार्थियों, उपरोक्त विवरण से आप समझ गये होंगे कि विभिन्न रोगों के उपचार में प्राण चिकित्सा का किस प्रकार सफलतापूर्वक प्रयोग किया जा सकता है। उपचार की सफलता हेतु निदान या जाँच ठीक ढंग से हो, यह अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि निदान ठीक प्रकार से होने पर ही उपचार की सही विधि का निर्धारण किया जा सकता है। प्राणचिकित्सा का प्रयोग करके हम विभिन्न रोगों को आसानी से नियंत्रित और दूर कर सकते हैं। किन्तु प्रत्येक चिकित्सा पद्धति के समान प्राण चिकित्सा की भी अपनी कुछ सीमाएँ हैं, जिनका उपचार के दौरान ध्यान रखा जाना चाहिये। कभी – कभी प्राण चिकित्सा के साथ – साथ रोगी की जीवनशैली, उसकी भावनात्मक स्थिति वातावरण इत्यादि में भी अपेक्षित परिवर्तन करने की आवश्यकता होती है। अतः इलाज के साथ – साथ इन बातों को भी ध्यान में रखकर हम चिकित्सा विधि को और उन्नत तथा प्रभावी बना सकते हैं।

8.6 शब्दावली –

- निदान – रोग की पहचान करना तथा उसके कारणों का पता लगाना।
- प्रक्षेपित प्राणऊर्जा – उपचारक या हीलर द्वारा रोगी को दी गई जीवनशक्ति
- चक्र – ऊर्जा केन्द्र । प्राणचिकित्सा में 11 बड़े या प्रमुख चक्र तथा अन्य छोटे चक्र माने गये हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न – (सत्य / असत्य)

1. आँखों से संबधित कोई रोग होने पर प्राण चिकित्सा द्वारा आँखों को सीधे उर्जित करना चाहिये। (सत्य / असत्य)
2. प्राणचिकित्सा में प्रक्षेपित प्राणऊर्जा को स्थिर किया जाता है। (सत्य / असत्य)
3. रोग का कारण प्राणऊर्जा का हानायन अथवा कमजोर होना होता है। (सत्य / असत्य)
4. कमजोर एवं वृद्ध रोगियों का हल्के तथा लंबे इलाज की आवश्यकता होती है। (सत्य / असत्य)
5. बूढ़े रोगियों में प्राणशक्ति को ग्रहण करने की क्षमता ज्यादा होती है (सत्य / असत्य)
6. शरीर के नाजुक अंगों का उपचार जल्दी – जल्दी करने की सलाह दी जाती है। (सत्य / असत्य)

8.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर –

1. असत्य
2. सत्य

3. सत्य
4. सत्य
5. असत्य
6. असत्य

8.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

- प्राणशक्ति उपचार : प्राचीन विज्ञान और कला – मास्अर चो कोक् सुई

8.9 सहायक उपयोगी पाठ्य-सामग्री –

- व्यक्तित्व विकास हेतु उच्चस्तरीय साधनायें – पंडित श्री राम शर्मा आचार्य (1998), अखण्ड ज्योति संस्थान मथुरा।

8.10 निबंधात्मक प्रश्न –

प्रश्न 1— सिरदर्द, कानदर्द एवं दाँत दर्द के उपचार के लिये प्राण चिकित्सा की विधि का वर्णन कीजिये।

प्रश्न 2 – निम्न रोगों में प्राण चिकित्सा द्वारा उपचार की विधि का वर्णन कीजिए—

- क) कब्ज
- ख) डायरिया
- ग) पेट दर्द

प्रश्न 3 – अनिद्रा, थकान एवं सामान्य कमजोरी से छुटकारा पाने के लिये किस प्रकार प्राणचिकित्सा दी जा सकती है ? वर्णन कीजिए।

प्रश्न 4 – बुखार के इलाज हेतु प्राण चिकित्सा की विधि का वर्णन कीजिए।

इकाई – 9 फिजियोथेरेपी का अर्थ, इतिहास एवं उपयोगिता

- 9.1 प्रस्तावना
- 9.2 उद्देश्य
- 9.3 फिजियोथेरेपी का अर्थ
- 9.4 फिजियोथेरेपी का इतिहास
- 9.5 फिजियोथेरेपी की उपयोगिता
- 9.6 फिजियोथेरेपी एवं मानव शरीर
- 9.7 सारांश
- 9.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
- 9.9 निबंधात्मक प्रश्न

9.1 प्रस्तावना :—

वर्तमान समय में प्रतिस्पर्धा के यान्त्रिक युग में मानव भागमभाग के चक्कर में दुर्घटनाग्रस्त होकर शारीरिक रूप से पीड़ित हो रहा है। आज स्लिप डिस्क, सर्वाइकल, घुटने का दर्द, एड़ी का दर्द आदि रोग आम बात हो गयी हैं। ऐसे में कंधे, कमर, पीठ, घुटने एवं एड़ी आदि के दर्दों से मुक्ति पाने के लिये फिजियोथेरेपी चिकित्सा पद्धति वरदान साबित हो रही है। पोलियोग्रस्त बच्चों में, गर्भवती महिलाओं में वृद्धजनों में, पक्षाघात (लकवा), एवं मोटापा से पीड़ित रोगियों में फिजियोथेरेपी के द्वारा आशातीत लाभ हो रहा है। फिजियोथेरेपी द्वारा शारीरिक क्षमता, अंगों एवं मांसपेशियों की कार्य क्षमता को उन्नत बनाने एवं बीमारी अंगों को ठीक करने हेतु उपचार तकनीक होती है। चाहे चोट की वजह से हो या बीमारी की वजह से या उम्र के हिसाब से शारीरिक कार्य क्षमता में आयी कमी को फिजियोथेरेपी में दुरुस्त किया जाता है ताकि शारीरिक क्षमता एवं शक्ति पुनः सामान्य हो सके। **शारीरिक कसरत एवं इलेक्ट्रोथेरेपी** द्वारा दो तरह से यह तकनीक मुख्य रूप प्रचलित है।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई में हम अध्ययन करेंगे कि

- ⇒ फिजियोथेरेपी का अर्थ
- ⇒ फिजियोथेरेपी का इतिहास
- ⇒ फिजियोथेरेपी की उपयोगिता

9.3 फिजियोथेरेपी का अर्थ

शारीरिक कार्य क्षमता की गुणवत्ता को पहचानने एवं बढ़ाने हेतु चाहे अथवा रोगों के बचाव, उपचार एवं इलाज एवं दर्द निवारण एवं पुनर्वास (रीहेबिलिटेशन) की तकनीकों का अध्ययन फिजियोथेरेपी कहलाता है।

इस विज्ञान में शारीरिक कसरत द्वारा एवं तंत्रिका तंत्र को उद्दीप्त करने हेतु इलेक्ट्रोथेरेपी का उपयोग किया जाता है।

प्रिय पाठको फिजियोथेरेपी का अर्थ निम्न परिभाषा से स्पष्ट हो सकेगा।

W.H.O. के अनुसार :— विज्ञान की वह शाखा जिसमें चोट या उम्र की वजह से अंगों एवं शारीरिक जोड़ों एवं मांसपेशियों की कार्य क्षमता को जांचा परखा जाकर बढ़ाया जाता है एवं दर्द को कम किया जाता है।

वह तकनीक जो अंग पूर्ण रूप से कार्य ना करे तो मशीनरी द्वारा सहयोग करते हुये उन्हें कार्य करने हेतु तैयार (Rehabilitation) किया जाता है।

(1) फिजियोथेरेपी में निम्न बिन्दुओं का ध्यान रखा जाता है :-

1. रोगी के चोटिल/काम न कर रहे अंग का परीक्षण करना
2. रोग की एवं कार्य क्षमता की तीव्रता का आंकलन करना
3. रोग एवं शारीरिक कमी की पहचान करना एवं निदान करना
4. रोग/ बीमार अंग/जोड़ों की कार्य क्षमता सुधारने हेतु इलाज करना
5. घर पर करने वाली तकनीकों की उचित सलाह देना

(2) फिजियोथेरेपिस्ट को निम्नानुसार में पारंगत होना चाहिये :-

1. शारीरिक बनावट की पूर्ण जानकारी
2. शरीर की समस्त अस्थियों (हड्डियों) की जानकारी
3. शरीर की समस्त मांसपेशियों की बनावट एवं कार्य की जानकारी
4. दर्द की जगह एवं कारणों की जानकारी
5. फिजियोथेरेपी में काम आने वाले उपकरणों की जानकारी
6. मरीज की आर्थिक हालत के अनुसार उपचार की उचित सलाह की जानकारी
7. शरीर के समस्त हड्डी के जोड़ों तथा उनके कार्यों की जानकारी
8. बच्चों, महिलाओं एवं वृद्धों के सामान्य रोगों की जानकारी
9. रोगों के सही समय पर सही इलाज की जानकारी
10. रोगी के प्रति मृदुभाषी होना एवं सहानुभूतिपूर्वक व्यवहार करना आदि

(3) फिजियोथेरेपी की प्रेक्टिस का विस्तार निम्नानुसार है :-

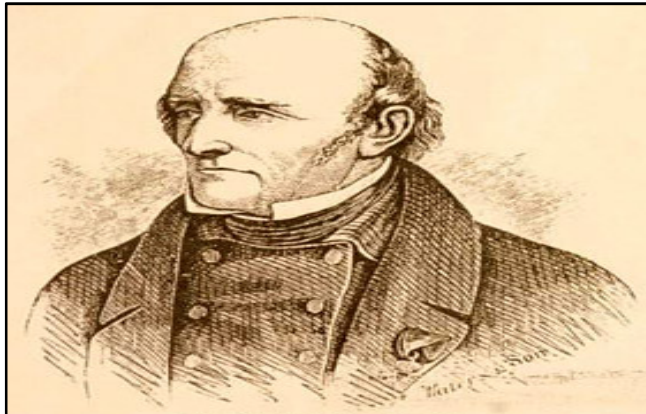
- PROMOTION → स्वास्थ्य एवं रोगों के प्रति जागरूकता
- PREVENTION → बचाव के उपायों पर विशेष ध्यान
- INTERVENTION → रोगों के उपचार तकनीकों का उपयोग कर के रोग निवारण करना
- MODIFICATION → वातावरण, घर की स्थिति एवं कारकों को देखकर रोगी को सलाह देना

(4) फिजियोथेरेपी के चिकित्सक/तकनीशियनों का कार्य क्षेत्र :-

1. हॉस्पिटल
2. आर्थोपेडिक अस्पताल
3. वृद्धाश्रम
4. फिटनेस क्लब, जिम
5. प्राइवेट संस्थायें
6. स्कूल, कॉलेज
7. स्पोर्ट्स टीम
8. व्यायामशाला
9. विभिन्न फेक्ट्रियों एवं कंपनियों में

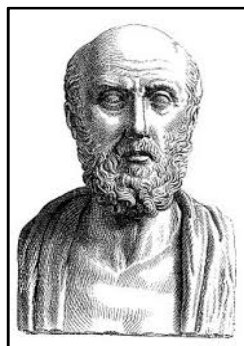
9.4 फिजियोथेरेपी का इतिहास

सर्वप्रथम सर पेरहेनरिकलिंग (जो कि स्वीडन देश में जिम्नास्टिक के गुरु थे) ने फिजियोथेरेपी की शुरुआत सन् 1813 में की थी।



सर पेरहेनरिकलिंग (स्वीडन)

- ⇒ सन् 1894 में ग्रेट ब्रिटेन में चार्टर्ड सोसाइटी ऑफ फिजियोथेरेपी की स्थापना हुई।
- ⇒ सन् 1913 में न्यूजीलैण्ड में ओटागो यूनिवर्सिटी में फिजियोथेरेपी स्कूल पहली बार तथा खोला गया।
- ⇒ 19 वीं शताब्दी के अन्त में आधुनिक फिजियोथेरेपी की शुरुआत हुई।
- ⇒ 19 वीं शताब्दी के अन्त में अमेरिका में भी मालिश एवं शारीरिक कसरत द्वारा ऑर्थोपेडिक सर्जन्स द्वारा रोगियों को फिजियोथेरेपी की सलाह दी जाने लगी।
- ⇒ सन् 1921 में यूनाइटेड स्टेट में प्रथम 'फिजिकल थेरेपी रिसर्च' का प्रकाशन "PT Review" के नाम से हुआ।
- ⇒ सन् 1921 में मेक मेरी मिलन द्वारा फिजिकल थेरेपी एसोसिएशन की स्थापना की गयी, जिसे आजकल "अमेरिकन फिजिकल थेरेपी एसोसिएशन" (APTA) कहा जाता है।
- ⇒ ऐसा माना जाता है कि सर हिप्पोक्रेट्स ने दर्द के निवारण हेतु शारीरिक थेरेपी की शुरुआत सन् 460 B.C. में की थी।



सर हिप्पोक्रेट्स (460 B.C.)

- ⇒ हाइड्रोथेरेपी की शुरुआत 460 B.C. में ग्रीक देश में हुई थी।

- ⇒ सन् 1917 से 1918 मे प्रथम विश्व युद्ध के बाद हमें “रीहेबिलिटेशन थेरेपी” के रूप में जाना जाता था।
- ⇒ मेरी मेकमिलन को “Mother of Physical Therapy” कहा जाता है।
- ⇒ 1950 से विभिन्न विदेशी अस्पतालों में फिजियोथेरेपी का विधि पूर्व इस्तेमाल होने लगा वर्तमान में विभिन्न मशीनरी उपकरणों इलेक्ट्रिक मशीनों एवं अन्य तकनीकों की सहायता से यह शाखा आज वैज्ञानिक रूप से भलिभांति विकसित हो चुकी है।

9.5 फिजियोथेरेपी की उपयोगिता



घुटने एवं कमर की फिजियोथेरेपी

- * वर्तमान मे फिजियोथेरेपी की रोगों के बचाव, उपचार, दर्दनिवारण एवं पुनर्वास में बहुत उपयोगिता है।
- * फिजियोथेरेपी द्वारा निम्न सामान्य तथा विशेष रोगों में प्रभाव निम्नानुसार है –
 - कंधे का दर्द
 - कमर दर्द
 - पीठ दर्द
 - घुटने एवं कूल्हे का दर्द
 - मांसपेशियों का दर्द
 - लकवाग्रस्त रोगियों का उपचार
 - व्यायाम/शारीरिक बनावट आदि मे सहायता
 - स्पोर्ट्स एवं जिम्नास्टिक की कसरतें
 - वृद्ध जनों की शारीरिक क्षमता बढ़ाने में फिजियोथेरेपी
 - गर्भवती महिलाओं हेतु फिजियोथेरेपी
 - पोलियो रोग ग्रस्त बच्चों की फिजियोथेरेपी
 - इलेक्ट्रोथेरेपी से विद्युतधारा, ताप या लाल रंग के प्रकाश से उपचार
 - चुम्बकीय उपकरणों की सहायता से रोगों एवं दर्द का इलाज
 - छाती एवं फेंफड़ों के रोगों मे फिजियोथेरेपी इत्यादि से कफ निकलवाना एवं श्वास लेने की विशेष तकनीक आदि

→ फ्रेक्चर/चोट लगने के बाद शारीरिक जोड़ों में कार्य क्षमता बढ़ाना एवं सूजन कम करवाना

इस तरह विभिन्न रोगों का इलाज, दर्द निवारण एवं शारीरिक कार्य क्षमता बढ़ाने हेतु फिजियोथेरेपी का अत्यन्त महत्वपूर्ण उपयोग है। जो अंग बेकार हो चुके हो (हाथ-पैर इत्यादि) उन्हें चलाने एवं दैनिक कार्य करने हेतु मशीनरी की सहायता से कार्य करने का प्रशिक्षण इसमें बताया जाता है।

प्रत्येक आर्थोपेडिक सर्जरी के बाद फिजियोथेरेपी की सलाह अत्यन्त आवश्यक है। वर्तमान समय में कमजोर हो चुके अंगों को वापस सुचारु रूप से कार्य करने की क्षमता प्राप्त करवाने हेतु फिजियोथेरेपी बहुत उपयोगी है।

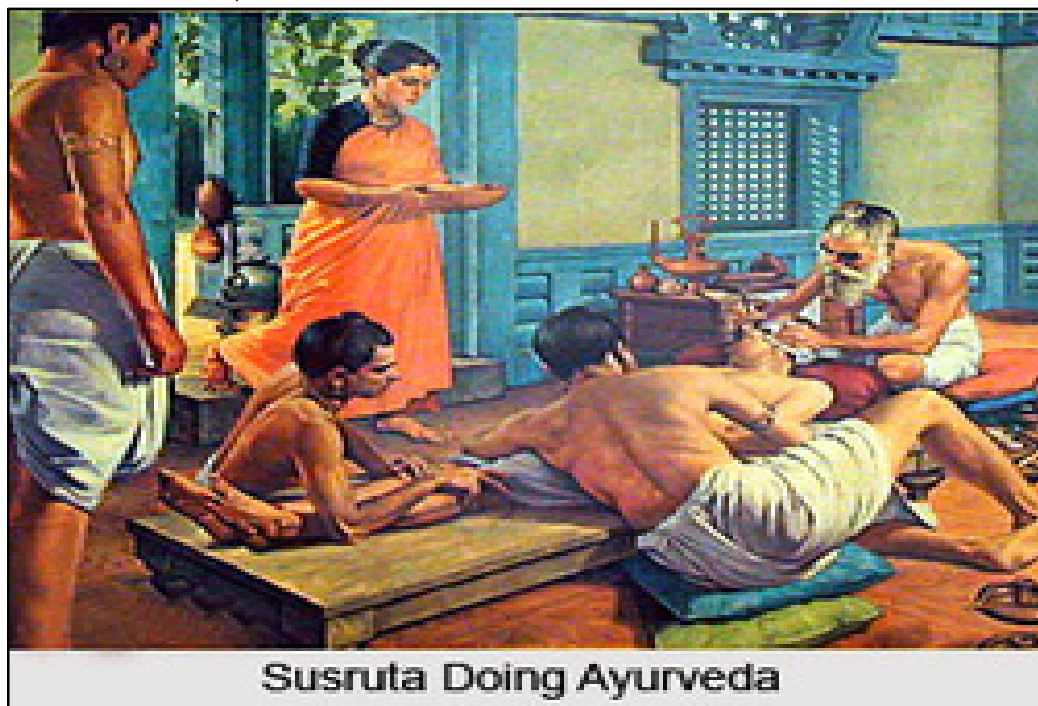
9.6 फिजियोथेरेपी एवं मानव शरीर

शरीर परिभाषा – “शरीर्यते इति शरीरम्” – विभिन्न ग्रन्थियों की पाक-क्रिया से तथा समयानुसार जिसका निरन्तर क्षरण होता रहे उसे शरीर कहते हैं।

शरीर्यते हिनस्ति आत्मानम् इति शरीरम् ।

जो निरन्तर गति करने के कारण अपने आप को नष्ट करता है, उसे शरीर कहते हैं।

शरीर के अंग अवयव :- महर्षि चरक ने शरीर के अवयवों का 6 भागों में विभाजन करते हुए षडंग शरीर की व्याख्या की है। दो हाथ, दो पाँव, शिरोग्रीवा एवं मध्य शरीर इस प्रकार 6 अंग बताये हैं। सुश्रुत-संहिता में भी षडंग शरीर का इसी तरह का वर्णन है।



Susruta Doing Ayurveda

भाव प्रकाश में विस्तार से 8 अंगों में निम्नानुसार विभाजन किया गया है।

1. शिर
2. ग्रीवा
3. दोनों हाथ
4. वक्ष

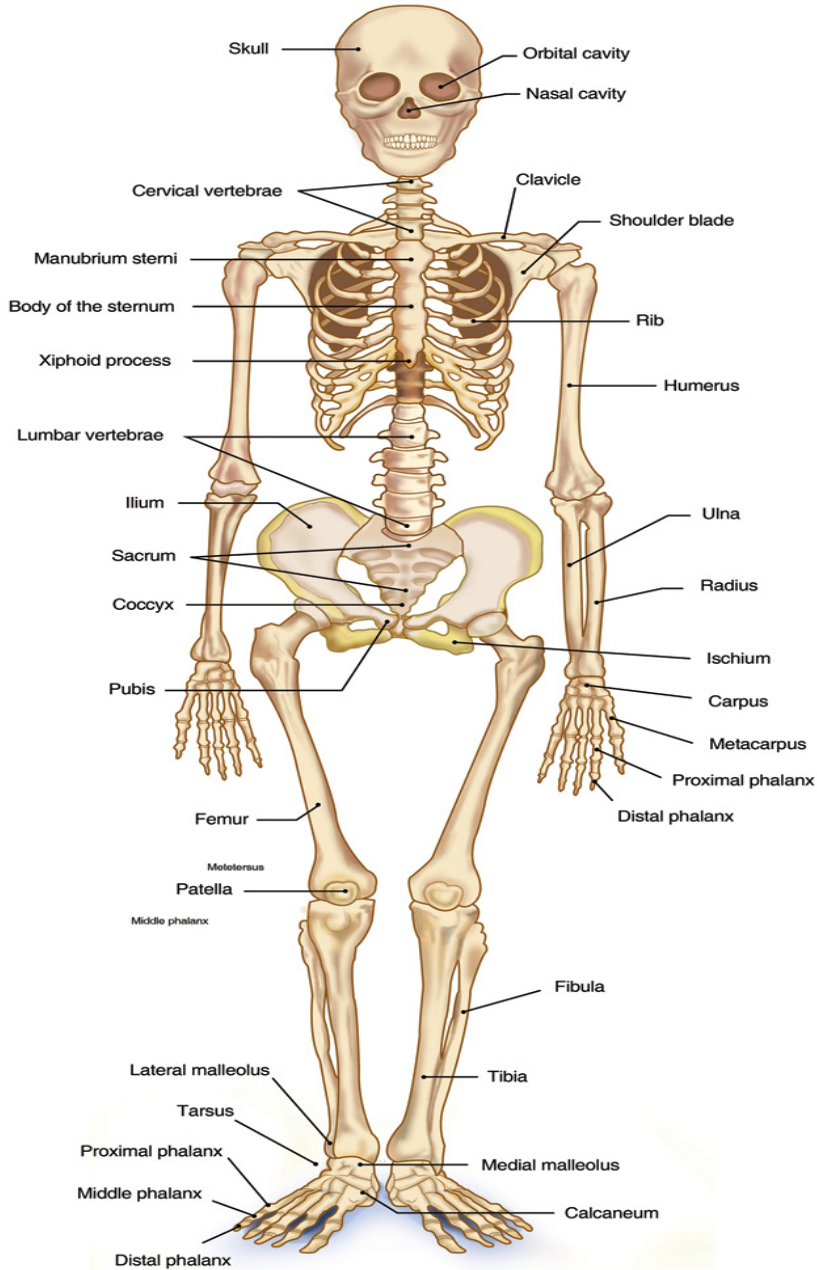
5. उदर
6. पार्श्व
7. पृष्ठवंश

8. सक्थि (दोनों पाँव)।

उपर्युक्त आठ अंगों के वर्णन के साथ उनके उपांगों का भी वर्णन किया गया है :-

1. शिर – शिर के साथ ज्ञानेन्द्रियों का वर्णन है।
 2. हाथ व पाँव के साथ अंगुलियों का।
 3. वक्ष के साथ हृदय, फुफुस एवं स्तनों का।
 4. उदर के साथ यकृत, प्लीहा, क्लोम (फुफुस), आन्त्र, बस्ति, मूत्राशय, वृक्क एवं गुदा का।
 5. पृष्ठवंश में कटि एवं नितम्बादि का वर्णन किया है।
- **शाखाओं के कार्य** – शरीर की अनेक चेष्टाएँ जैसे – उठाना, पकड़ना, चलना, दौड़ना, वस्तुओं का आदान-प्रदान करना आदि कार्य चारों शाखाओं द्वारा किये जाते हैं।
 - **मध्य शरीर के कार्य** – रक्त संचार, श्वास क्रिया, मूत्र निर्माण एवं पाचन आदि अनेक क्रियाओं का सम्पादन करने वाले सभी आशयों का आधार मध्य-शरीर है। जिस प्रकार किसी वृक्ष में पत्ते तथा उसकी टहनियों का आधार तना होता है, उसी प्रकार मध्य शरीर भी शिर एवं सभी शाखाओं का आधार है।
 - **शिर के कार्य** – यह सभी प्रकार की आभ्यन्तर एवं बाह्य क्रियाओं की आधार भूमि है। श्वास, अन्नद्वार, मुख मण्डल संज्ञावाहक और चेष्टावाहक सभी नाड़ियों और ज्ञानेन्द्रियों का अधिष्ठान शिर है। यह ज्ञान का स्थान होने से उसे सर्वोत्तम बताया गया है।
- (1) **अस्थि** – मनुष्य शरीर का आधार अस्थियाँ हैं। यदि इन अस्थियों को शरीर से बाहर निकाल दिया जाय तो शरीर एक मांस पिण्ड के समान रह जायेगा, जो किसी भी प्रकार की क्रिया करने में समर्थ नहीं होगा। शरीर के सभी अंग, प्रत्यंग, अवयव एवं अन्य सात धातुएँ इन्हीं अस्थियों पर आधारित होती हुई अपने-अपने कार्य करने में समर्थ होती हैं। मनुष्य की गति या चलने फिरने की क्रियाएँ भी इन अस्थियों के व्यवस्थित होने पर निर्भर करती हैं। इसी कारण शरीर की सप्त धातुओं में शरीर रचना की दृष्टि से अस्थियों का विशेष महत्त्व है। इन्हीं अस्थियों पर मांसपेशियाँ लगी हुई हैं, उन्हीं से ये अस्थियाँ ढकी रहती हैं।

The Human Skeleton



मानव अस्थि तंत्र

(I) अस्थि स्वरूप :- अस्थि कठिन और दृढ़ होती है किन्तु उसमें कुछ की स्थिति स्थापकता भी होती है। उसके भीतर में भरी रहती है और अस्थियों के पोषण के लिए रक्तनलिकायें भी होती हैं।

(II) अस्थि (**Bones**) के निम्नलिखित कार्य हैं :-

1. शरीर के अंगों को आश्रय देना
2. सन्धियों की गति का आधार
3. मांसपेशियों का आधार
4. शरीर की आकृति का धारक

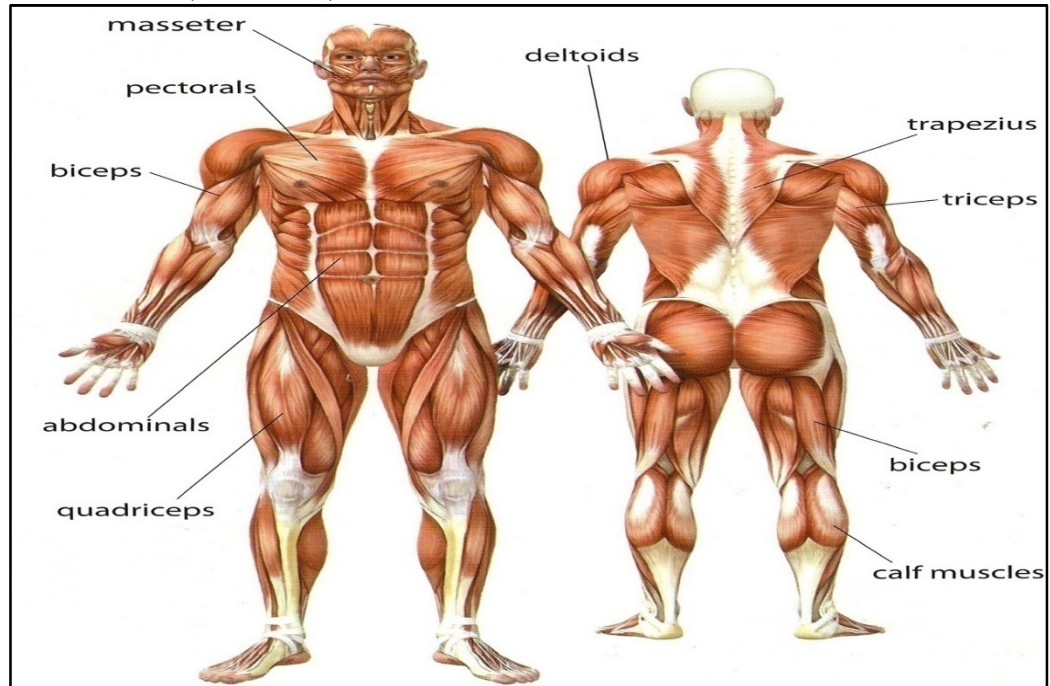
(2) मांस धातु (**Muscular tissue**) :- मांस धातु की शरीर धारक विशिष्ट रचना को पेशी कहते हैं। शरीर में त्वचा के नीचे वसर और प्रावरणी से आच्छादित मांसपेशियों का स्तर होता है। यह धातु लाल वर्ण के लम्बे सूत्रों के गुच्छों से बना होता है। जिनमें संकोच का गुण होता है तथा जो बाहर की ओर संयोजक धातु द्वारा परस्पर आबद्ध होते हैं।

(i) क्रिया विज्ञान की दृष्टि से पेशियाँ दो प्रकार की होती हैं :-

- A. स्वतन्त्र (**Involuntary**) → जिस पर हमारा नियंत्रण नहीं होता ।
- B. परतन्त्र (**Voluntary**) → जिस पर हमारा नियंत्रण होता है।

(ii) सूक्ष्म रचना की दृष्टि से पेशियाँ चार प्रकार की होती हैं :-

1. रेखांकित (**Striated**)
2. अरेखांकित (**Unstriated**)
3. स्वच्छ (**Plain**)
4. हृदयिक (**Cardiac**)



मांसपेशीय तंत्र

(iii) मांस धातु का कार्य :- मांस धातु का कार्य शरीर में गति उत्पन्न करना है। शरीर में जितनी चेष्टायें होती हैं, वे पेशियों के आधार पर ही क्रियान्वित होती हैं।

(iv) मांस पेशी

परिभाषा – शरीर में लाल रंग की रेशेदार आकुंचन प्रसरणशील जो धातु है, उसी मांस पिण्ड को मांसपेशी कहा जाता है।

उत्पत्ति – इसकी उत्पत्ति शरीर के मांस धातु से होती है।

अस्थियों के सन्धि-स्थान को दृढ़ करने एवं उनकी गति में सहायक होने से मांस पेशी का भी शरीर की दृष्टि से विशेष महत्त्व है। शरीर के प्रत्येक अंगों और प्रत्यंगों में आच्छादित होकर सम्पूर्ण शरीर के अवयवों की रक्षा करती है। ये पेशियाँ शरीर के सभी प्रकार की चेष्टाओं में सहायक हैं। चेष्टावह नाड़ियाँ मस्तिष्क तथा सुषुम्ना काण्ड की सभी नाड़ियों की अन्तिम शाखाएँ पेशियों के बीच में प्रविष्ट करती हैं। अतः इनको अनुप्रसारणी नाड़ी (मोटर नर्व) कहते हैं। आयुर्वेदीय दृष्टिकोण से पेशियों की शक्ति वायु है। इन सभी पेशियों की चेष्टाएँ शरीर के अंग विशेष के अनुसार होती हैं।

(v) पेशियों के कार्य –

“सिरास्नाय्वस्थिपर्वाणि सन्ध्या शरीरिणाम्।

पेशीभिः सवृतान्यत्र बलवन्ति भन्त्यतः।।”

(सुश्रुत -5/49)

शरीरधारियों को शिराएँ, स्नायु, अस्थि, पर्व और सन्धियाँ ये सभी पेशियों से ढके रहते हैं, अतः ये बलवान् एवं उपयोगी हैं।

सामान्तः पेशी के कार्य मुख्य निम्नानुसार हैं –

1. शरीर में स्थित सन्धि, शिरा और स्नायुओं को पेशियाँ ढकती हैं।
2. सन्धियों को बाँधने का कार्य करती हैं।
3. पेशियाँ ही शरीर के स्वरूप को दर्शाने का कार्य करती हैं।
4. पेशियाँ आकुंचन का कार्य करती हैं।
5. पेशियाँ प्रसार का कार्य करती हैं।
6. शरीर के भीतरी अंगों की रक्षा करती हैं।
7. अस्थि आदि को घेर कर उनके कार्यों में सहायक होती हैं।
8. शरीर को बल प्रदान करने का कार्य करती हैं।
9. शरीर निर्माण में पहला आधार पेशियाँ होती हैं, जो मांस पिण्ड के रूप में दिखाई देती हैं।
10. पेशियों में सिंग्रिग जैसा संकुचन शीलता का विशेष गुण होता है।
11. अपनी स्थिति स्थानकता के कारण शरीर की नियमित क्रियाओं में सहायक होती हैं।
12. अस्थि सन्धि आदि अंगों की अपेक्षा पेशियों में कई गुना अधिक शक्ति होती है।
13. शरीर का उठना-बैठना, चलना-फिरना आदि क्रियाएँ पेशियों द्वारा होती हैं।
14. पेशियाँ रक्त संचार के कार्य में सहायक होती हैं।
15. इन्हीं पेशियों में सिरा, स्नायु, धमनी और कोशिकाओं का जाल बिछा रहता है, जिसके द्वारा शरीर वृद्धि को प्राप्त होता है।
16. शरीर की स्वतंत्र और परतंत्र दोनों प्रकार की गतियों में सहायक होती हैं।
17. हृदय का स्पन्दन आदि पेशियों द्वारा सम्पन्न होता है।

(3) सन्धि

दो अस्थियाँ जब आपस में मिलकर जोड़ बनाती हैं, तो उन्हें सन्धि कहते हैं

गति के आधार पर प्रकार :-

- (1) **चेष्टावन्त** – ऐसी सन्धियाँ जिसमें चेष्टा हो सकती हैं, अर्थात्- अपने ही स्थान पर संकोच एवम प्रसार, अन्दर की तरफ झुकाव, बाहर की तरफ झुकाव, घूर्णन आदि चेष्टा या गति होती है। ये चेष्टावन्त सन्धियाँ हैं, यथा – शाखा हनु, कटि की सन्धि।
- (2) **स्थिर सन्धि** – दो अस्थियों के मेल की सन्धियाँ, जिसमें किसी प्रकार की गति नहीं होती वे स्थिर सन्धियाँ हैं।

(4) स्नायु (TENDON)

- (1) **परिभाषा** – स्नायु शरीरगत श्वेत सूत्रमय उपधातु है, जो सन्धि और मांसपेशी के बन्धन में काम आती है।
- (2) **स्नायु उत्पत्ति** :- जो सिरायें मेद के स्नेह भाग को ग्रहण कर लेती है, वे पककर स्नायु के रूप में प्राप्त होती हैं, क्योंकि सिरा तथा स्नायु में आयुर्वेद मतानुसार इतना ही अन्तर है कि सिराओं का पाक मृदु होता है तथा स्नायु पाक खर होता है।
- (3) **स्नायु का महत्त्व** :-

नह्यस्थीनि न वा पेश्यो न शिरा न च सन्धयः।

व्यापादितास्तथा हन्युर्यथा स्नायु शारीरिणम् ॥

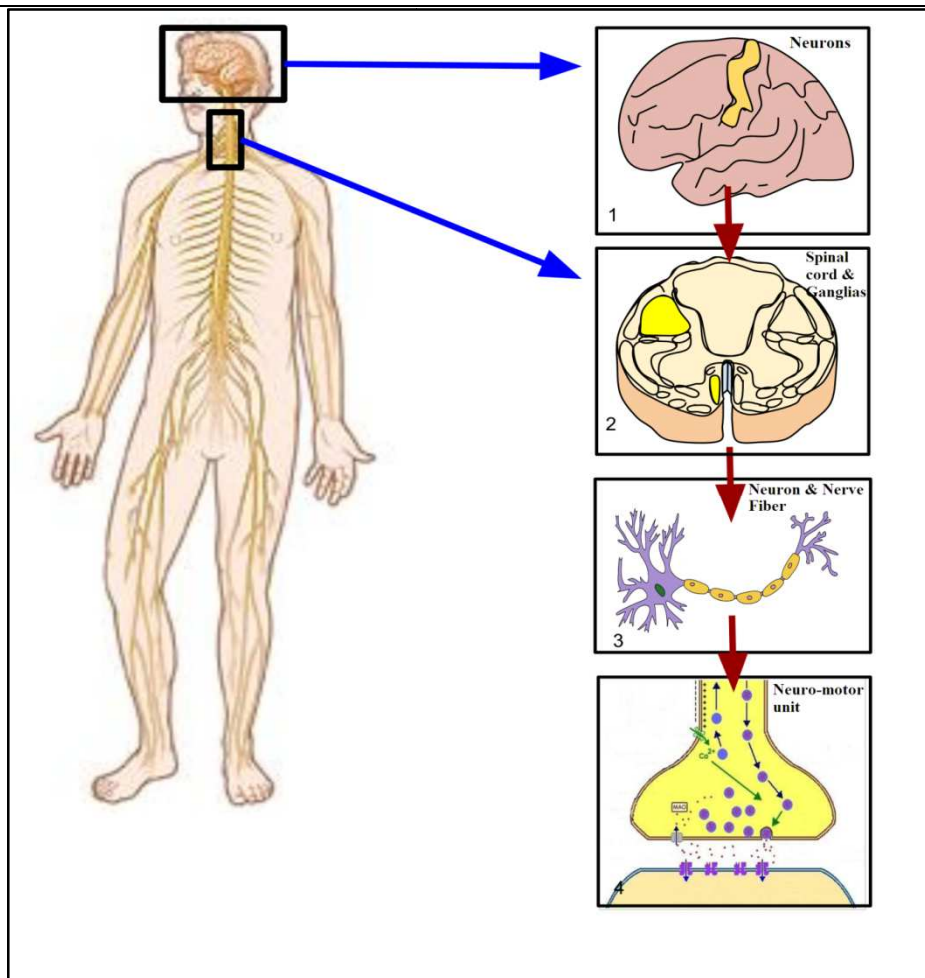
(सुश्रुत शारीर 5/45)

1. सभी स्नायु देह में मांस, अस्थि, मेद और सन्धियों के बन्धन हैं, अतः शिराओं की अपेक्षा ये सुदृढ़ कहे गये हैं अतः इनका विशेष महत्त्व है।
2. स्नायुओं के पीड़ित स्थान में बहुत पीड़ा होती है। मोच इतनी सरल, बीमारी होते हुए भी महीनों तक तंग करती है और कभी तो जिस अंग में मोच आ जाती है, वह काम करना ही कम कर देता है। अतः स्नायु का अस्थि, सन्धि पेशी की अपेक्षा विशेष महत्त्व है।

(5) नाड़ी संस्थान :-

नाड़ी संस्थान के प्रधान रूप से दो कार्य देखे जाते हैं –

- (i) शारीरिक सम्पूर्ण क्रियाओं का संचालन करना एवं
- (ii) बाह्य परिस्थिति के अनुसार शारीरिक विविध चेष्टाओं में परिवर्तन आदि करना है। इसी कारण सम्पूर्ण नाड़ी संस्थान को दो भेदों के रूप में देखा जाता है। इसमें प्रथम प्रकार की नाड़ियाँ बाह्य जगत् के सभी प्रकार के ज्ञान, वेदना आदि के ज्ञान को केन्द्र स्थान तक पहुँचाती हैं एवं द्वितीय प्रकार की नाड़ियाँ नाड़ी केन्द्र से मिलने वाले सन्देश को सम्बन्धित अवयवों तक पहुँचाती हैं। अतः प्रथम प्रकार की नाड़ियों को संज्ञा ग्रहण करने से “संज्ञावह” (Sensory) तथा दूसरे प्रकार की नाड़ियों को “चेष्टावह” (Motor) कहा जाता है।
- (iii) **नाड़ी संस्थान विभाग** – नाड़ी संस्थान को दो भागों में विभाजित किया गया है – पहला मस्तिष्क सोषुम्निक नाड़ी संस्थान (सेरेब्रोस्पाइनल नर्व सिस्टम) एवं दूसरा स्वतंत्र नाड़ी संस्थान (ऑटोनोमस नर्वस सिस्टम) है। दोनों संस्थान एक दूसरे के सहयोग से ही कार्य करते हैं।
- (iv) **नाड़ी धातु** :- सूक्ष्म दृष्टि से नाड़ी के मुख्यतः चार भाग होते हैं :-
 1. नाड़ी कोषाणु (Neurons)
 2. नाड़ी सूत्र (Nerve Fibers)
 3. नाडयाधार कोषाणु (Nerve ganglia)
 4. नाडयाधार कोषाणु (Neuro-motor unit)



नाड़ी धातु

नाड़ी कोषाणु नाड़ी धातु के विशिष्ट अवयव है, जो मस्तिष्क, सुषुम्नाकाण्ड के दूसरे भाग में एकत्र पाये जाते हैं। नाड़ियों पर जो गण्ड होते हैं, उनमें भी कुछ कोषाणु पाये जाते हैं। इन कोषाणुओं से निकलने वाले लम्बे-लम्बे प्रसर भागों को नाड़ीसूत्र कहते हैं। मस्तिष्क और सुषुम्ना का श्वेत भाग विशेषतः इन्हीं का बना हुआ है। नाड्याधार वस्तु केवल मस्तिष्क और सुषुम्ना शीर्ष में नाड़ी कोषाणुओं के बीच स्थित पाई जाती है।

(v) नाड़ियों की संख्या, नाम एवं कार्य –

1. घ्राण नाड़ियाँ = गंध ग्राही।
2. दृष्टि नाड़ियाँ = रूप दर्शन ग्राही।
3. नेत्र चेष्टनी नाड़ियाँ = नेत्र गोलकों में क्रिया कराना।
4. नेत्र चेष्टनी नाड़ियाँ = पुतलियों की चेष्टा कराना।
5. त्रिधारा नाड़ियाँ = इसमें प्रत्येक नाड़ी के तीन विभाग हैं, जिसके कारण मुख एवं शिर के स्पर्श की संज्ञा का ज्ञान कराना एवं चबाने की क्रिया कराना।
6. नेत्र चेष्टनी = नाड़ी फलकों की गति कराना।

7. मुख नाड़ियाँ = जिह्वा में रस का स्वाद कराना एवं मुखगत पेशियों में परिवर्तन लाना, साथ ही हृदय के भावों को चेहरे पर यही प्रकट करती है।
 8. कर्ण नाड़ियाँ = शब्द ज्ञान कराना, अन्तःकर्ण में होने वाले परिवर्तन का धामिलक तक सन्देश पहुँचाना।
 9. कण्ठ रासनीनाड़ी = जिह्वाके पृष्ठ भाग में स्वाद का ज्ञान कराना एवं गले की पेशियों को कार्य हेतु प्रेरित कराना।
 10. प्राणवहा नाड़ियाँ = इसे न्यूमौगैस्ट्रीक नर्व भी कहा जाता है। इनके द्वारा अन्न मार्ग, श्वास मार्ग एवं फुफ्फुस, हृदय, यकृत, प्लीहा आदि (पाचन सम्बन्धी अवयवों) की चेष्टाएँ मिलती हैं।
 11. ग्रीवा नाड़ियाँ = यह प्राणदा नाड़ी एवं मन्य तथा पृष्ठच्छदा पेशियों में उत्तेजना देती है।
 12. जिह्मामूलिनी नाड़ियाँ = यह प्राणदा नाड़ी एवं मन्य तथा पृष्ठच्छदा पेशियों में उत्तेजना देती है।
- (vi) **नाड़ी वर्णन** – शिव संहिता एवं गोरक्ष संहिता में शरीर की समस्त नाड़ी संख्या को चार भागों में विभक्त किया गया है। त्रिविध नाड़ियाँ, दशाविध नाड़ियाँ, चतुर्दश नाड़ियाँ और कुल संख्या बहत्तर हजार अथवा साढ़े तीन लाख बताई गयी है।
- (vii) **त्रिविध नाड़ियाँ** – यद्यपि दस नाड़ियाँ प्रमुख बताई गई हैं, उनमें भी इड़ा, पिंगला व सुषुम्ना तीन प्रमुख बताई गई हैं।

मेरुदण्ड के वाम भाग में इड़ा (AORTA) नाड़ी स्थित है, इसका देवता चन्द्रमा है। मेरुदण्ड के दक्षिण भाग में पिंगला (VENA-CAVA) नाम की नाड़ी स्थित है, इसका देवता सूर्य है। इन दोनों के मध्य सुषुम्ना नाड़ी (SPINAL CORD) है, जिसका देवता अग्नि है।

- (viii) **दशविध नाड़ी** – गोरक्ष संहिता में वर्णित सभी नाड़ियों में से दस नाड़ियों का विशेष उल्लेख किया है तथा साथ ही इनकी स्थिति का परिचय भी दिया है। नासिका के बायें भाग में इड़ा, दायें भाग में पिंगला और इन दोनों के मध्य में सुषुम्ना स्थित है। बायें नेत्र में गन्धारी, दक्षिण में हस्तजिता, दायें कान में पूषा, बायें कान में यशस्विनी रहती है। अवलम्बुषा का स्थान मुख बताया गया है। लिंग देश में कुहू और मूल स्थान में शंखिनी इस प्रकार ये दस नाड़ियाँ हैं।
- (ix) **चतुर्दश नाड़ी विवरण** – शिव संहिता में साढ़े तीन लाख नाड़ियों का नामोल्लेख किया है एवं इनमें भी चौदह नाड़ियों को प्रधान बताया है, जो इस प्रकार हैं –

- | | |
|-------------|---------------|
| 1. सुषुम्ना | 8. पूषा |
| 2. इड़ा | 9. शंखिनी |
| 3. पिंगला | 10. पयस्विली |
| 4. गन्धारी | 11. वारुणा |
| 5. हस्तजिता | 12. अलंबुषा |
| 6. कुहू | 13. विश्वोदरी |
| 7. सरस्वती | 14. यशस्विनी |

जैसे चौदह लोकों में मेरु मानदण्ड है, वैसे ही शरीर की प्रमुख चौदह नाड़ियाँ मेरुदण्ड (पृष्ठवंश) के आश्रय करके क्रियाकलाप करती हैं।

कुल नाड़ी संख्या –

ऊर्ध्व मेढ्रादधो नाभेः कन्दोयोनिः खगाण्डवत्।

तत्र नाड्यः समुत्पन्नाः सहस्राणां द्विसप्ततिः॥

लिंग मूल से ऊपर नाभि के कुछ नीचे कंद के सदृश समस्त नाड़ियों का मूल (उत्पत्ति स्थान) पक्षी के अण्डे के समान आकार वाला है। इससे 72,000 नाड़ी ऊपर नीचे तिरछी होकर सर्वांग शरीर में व्याप्त हैं। 72,000 नाड़ियों में मुख्य 72 ही हैं, इनमें भी प्राणवाहिनी दस नाड़ियों को प्रधान बताया है।

9.7 सारांश

चिकित्सा क्षेत्र के समय में फिजियोथेरेपी का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। इसकी शुरुआत 460 B.C. सन् से होकर वर्तमान में इसका बहुत विस्तार हुआ है।

आजकल हर मल्टी स्पेशलिटी अस्पतालों एवं हड्डी के अस्पतालों में फिजियोथेरेपी की आवश्यकता मरीजों को होती है।

कमजोर अंगों को पुनः सामान्य कार्य करने लायक बनाना, दर्द व सूजन कम करवाना, मांसपेशियों की ऐंठन कम करना आदि इसके मुख्य लक्ष्य होते हैं। बालकों, महिलाओं, वयस्कों से लेकर वृद्ध जनों तक को इसकी आवश्यकता होती है। प्रस्तुत इकाई में स्वास्थ्य की दृष्टि से फिजियोथेरेपी का इतिहास उपयोगिता एवं मानव शरीर में नाड़ी तंत्र की कार्य पद्धति का सम सामयिक वर्णन किया गया है।

इकाई 9.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

- WORLD CONFEDERATION OF PHYSICAL THERAPY
- AMERICAN PHYSICAL THERAPY ASSOCIATION – GUIDE TO PHYSICAL THERAPIST
- WWW.PHYSIOTHERAPY-TREATMENT.COM
- WWW.JBLEARNING.COM/SAMPLE/0763740691/40691_C H01_FINAL.PDF
- INTRODUCTION TO PHYSICAL THERAPY BY PAGLIARULO, MI CHAE
- HAND BOOK OF TEACHING FOR PHYSICAL THERAPIST BY SHEPARD, KATHERINE
- PHYSICAL REHABILITATION, BY SUSAN SULLIVAN, T SCHMITZ
- PRINCIPALS OF EXERCISE THERAPY, BY DENA GARDINER
- PRACTICAL EXERCISE THERAPY, BY MARGARET HOLLIS, PHYL COOK
- THERAPEUTIC EXERCISE: FOUNDATION & TECHNIQUES, BY CAROLYN KISNER, LYN ALLEN COLBY
- CLAYTON'S ELECTROTHERAPY, BY FORSTER & PALASTANGA
- TIDYS PHYSIOTHERAPY, BY STUART POTER

-
- CASH'S TEXTBOOK OF ORTHOPAEDICS & RHEUMATOLOGY OF CARDIOVASCULAR & RESPIRATORY CONDITIONS
- NEUROLOGY OF GENERAL MEDICAL & SURGICAL CONDITIONS FOR PHYSIOTHERAPISTS
- DR. ANIL SONI - MEDICAL COLLEGE, KOTA
- DR. HARSH, M.RAJDEEP - PHYSIOTHEPIST-KOTA
- DR. ANJANA SHARMA - OESTOPATH & PANCHKARMA-KOTA
- DR. NITYANAND SHARMA - YOGA & AYURVEDA-KOTA
- चरक संहिता — डॉ. ब्रह्मानंद त्रिपाठी
- सुश्रुत संहिता — डॉ. अम्बिकादत्त शास्त्री
- अष्टांग संग्रह — डॉ. रविदत्त त्रिपाठी
- स्वस्थवृत्त विज्ञान — डॉ. सर्वेश कुमार अग्रवाल
- पंचकर्म विज्ञान — वैद्या अंजना शर्मा
- पातन्जल योगदर्शन — वैद्य नित्यानन्द शर्मा
-

इकाई 9.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. फिजियोथेरेपी की परिभाषा बताइये ?
2. फिजियोथेरेपी चिकित्सक को किन बिन्दुओं में पारंगत होना चाहिये ?
3. फिजियोथेरेपी की प्रैक्टिस का विस्तार पर संक्षेप में लिखिये ?
4. फिजियोथेरेपी की आवश्यकता कहाँ-कहाँ होती है ?
5. फिजियोथेरेपी का इतिहास बताइये ?
6. फिजियोथेरेपी की वर्तमान समय में उपयोगिता पर लिखिये ?
7. फिजियोथेरेपी वृद्धावस्था में उपयोगी है, वर्णन कीजिये ?

इकाई-10 फिजियोथेरेपी के भाग-इलेक्ट्रोथेरेपी तथा एक्सरसाइज थेरेपी

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 इलेक्ट्रोथेरेपी एवं उसके भाग

10.3.1 (A) अल्ट्रासाउण्ड थेरेपी

10.3.2 (B) इन्टरफेरेंशियल थेरेपी

10.3.3 (C) शोर्ट वेव थेरेपी

10.3.4 (D) लेजर थेरेपी

10.4 एक्सरसाइज थेरेपी (व्यायाम)

10.5 इलेक्ट्रोथेरेपी एवं एक्सरसाइज थेरेपी के लाभ

10.6 सारांश

10.7 निबंधात्मक प्रश्न

10.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

10.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हम फिजियोथेरेपी में काम आने वाली दो मुख्य विधियों का अध्ययन करेंगे।

1. इलेक्ट्रोथेरेपी

2. एक्सरसाइज थेरेपी

फिजियोथेरेपी विभाग में किसी भी रोग का उपचार काम आने वाले विभिन्न उपकरणों, तकनीकों एवं अन्य सुविधाओं का अध्ययन इस इकाई में करेंगे। “इलेक्ट्रोथेरेपी में विद्युतधारा, ताप, अल्ट्रासाउण्ड तरंगों एवं लेजर द्वारा दर्द एवं सूजन कम करके उपचार करके शारीरिक जोड़ों एवं अंगों की कार्य क्षमता बढ़ाई जाती है।” “एक्सरसाइज थेरेपी में शरीर की मांसपेशियों के व्यायाम द्वारा अंग विशेष का दर्द/ सूजन कम करके उसे अधिक दक्ष बनाया जाता है।” इस प्रकार फिजियोथेरेपी इलेक्ट्रोथेरेपी एवं एक्सरसाइज थेरेपी का स्वास्थ्य प्राप्ति में पूर्ण महत्त्व है।

10.2 उद्देश्य

इलेक्ट्रोथेरेपी एवं उसके भाग

अल्ट्रासाउण्ड

इन्टरफेरेंशियल थेरेपी

शोर्ट वेव थेरेपी

लेजर थेरेपी

एक्सरसाइज थेरेपी (व्यायाम)

इलेक्ट्रोथेरेपी एवं एक्सरसाइज थेरेपी के लाभ

10.3 इलेक्ट्रोथेरेपी एवं उसके भाग

इलेक्ट्रोथेरेपी:-परिभाषा:-

- (1) विद्युत धारा का इस्तेमाल इलाज के रूप में करना इलेक्ट्रोथेरेपी कहलाता है।
- (2) चिकित्सा क्षेत्र में इलेक्ट्रोथेरेपी उसे कहते हैं जिसमें विद्युतधारा को शरीर में उपकरणों की सहायता से प्राप्ति कर रोगों का उपचार दर्द में कमी करके एवं तंत्रिका तंत्र को उद्दीप्त करके इलाज किया जाता है।

इतिहास:- प्रथमतया सन् 1767 लन्दन में मिडलसेक्स हॉस्पिटल में शारीरिक इलाज के रूप में विद्युत धारा का उपयोग लिया गया।

सन् 1855 में सर गुलॉम डूचेन ने विद्युत धारा का उपयोग मांसपेशीय संकुचन में बताया। सन् 1999 में यह ज्ञात हुआ कि शरीर में विद्युत धारा प्रवाह से शारीरिक घाव बहुत जल्दी भरते हैं।

सन् 2000 में "डच मेडिकल काउंसिल" ने इलेक्ट्रोथेरेपी का इस्तेमाल विस्तृत रूप से किया।

इलेक्ट्रोथेरेपी का वर्गीकरण:- मुख्यतया इलेक्ट्रोथेरेपी के कारकों के आधार पर इसे तीन तरह से बांटते हैं:-

इलेक्ट्रिक उद्दीपन कारक निम्नानुसार पाँच प्रकार के होते हैं।

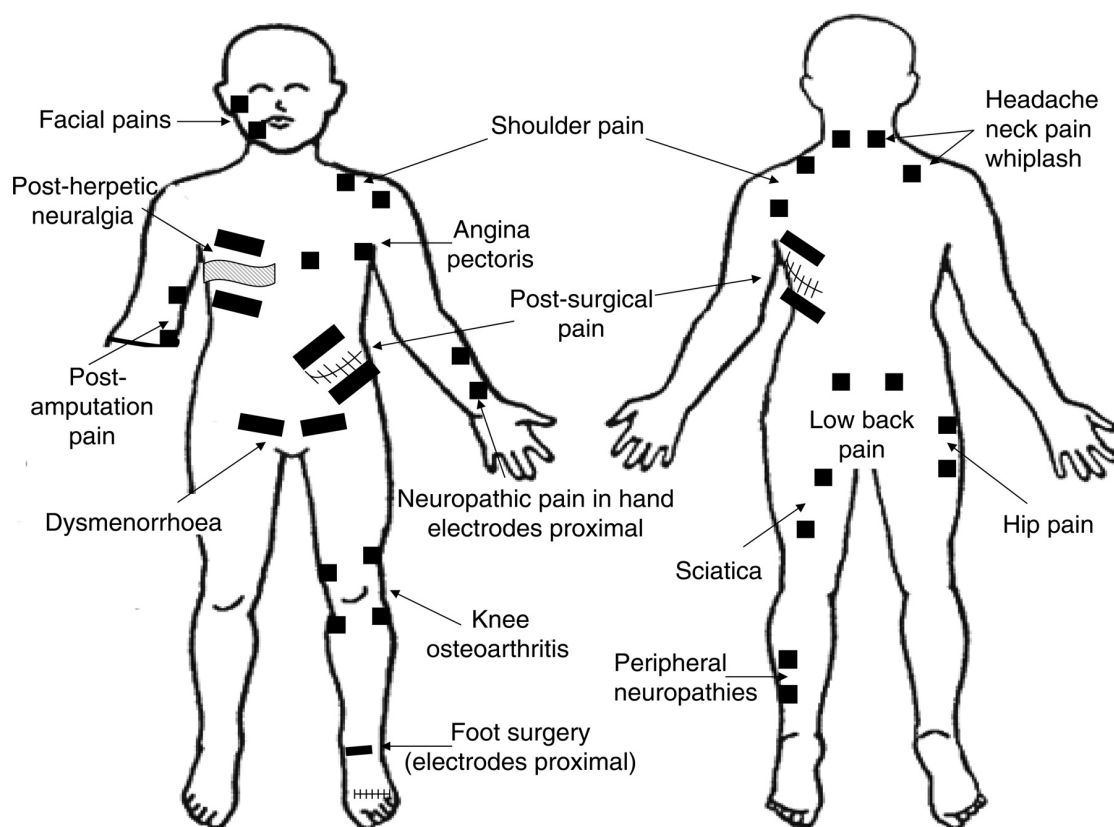
- (A) TENS - TRANSCUTANEOUS ELECTRICAL NERVE STIMULATION
- (B) IFT - INTERFERENTIAL THERAPY
- (C) NMES - NEURO MUSCULAR ELECTRIC STIMULATION
- (D) HVPGS- हाई वॉल्टेज पल्स गेलवेनिक स्टीमुलेशन
- (E) MCT - MICRO CURRENT THERAPY



Neuro-Muscular Electronic Stimulator



TENS Instrument



Trans cutaneous Nerve Stimuli – Machine & Uses

2. इलेक्ट्रोथेरेपी थर्मल कारक के निम्नानुसार पाँच प्रकार की होती हैं।

- A. IRR - इन्फ्रारेड इर्रडिएशन
- B. SWD - SHORT WAVE DIA THERAPY
- C. LASER ELECTRO THERAPY
- D. COLD & HOT THERAPY
- E. MWD - MICRO WAVE DIATHERAPY



IRR - इन्फ्रारेड इर्रडिएशन

3. Non-Thermal Agent:- ये निम्नानुसार दो प्रकार के होते हैं।

- (A) अल्ट्रासाउण्ड
- (B) चुम्बकीय थेरेपी



चुम्बकीय थेरेपी देते हुये

चार मुख्य इलेक्ट्रोथेरेपी देने की महत्वपूर्ण विधियाँ निम्नानुसार हैं:-

- (A) अल्ट्रासाउण्ड थेरेपी
- (B) इन्टर फेरेंशियल थेरेपी
- (C) शोर्ट वेव थेरेपी
- (D) लेजर थेरेपी

10.3.1 अल्ट्रासाउण्ड थेरेपी—सामान्य तथा मनुष्य का कान 20 हर्ट्स से 20 किलोहर्ट्स तक की आवृत्ति सुन सकता है। 20 किलोहर्ट्स से ज्यादा आवृत्ति तरंगों को अल्ट्रासाउण्ड कहते हैं। जब दर्द, सूजन एवं घाव वाली जगह पर अल्ट्रासाउण्ड मशीन द्वारा तरंगें डाली जाती है तो वहां के परमाणु उद्दीप्त होते हैं एवं थोड़ी उष्णता पैदा होती है। सोडियम एवं पोटेशियम आयनों का Threshold माप कम होता है तो वहां की मांसपेशियां एवं तंत्रिका तंत्र उद्दीप्त होकर अच्छा कार्य करने लगती है एवं अंग जल्दी ठीक होने लगता है। इस हेतु अल्ट्रासाउण्ड तरंग पैदा करने वाली मशीन एवं डिलिवरी हेतु ट्रांसड्यूसर की आवश्यकता पड़ती है।



अल्ट्रासाउण्ड थेरेपी की मशीन

अल्ट्रासाउण्ड थेरेपी के लाभ:-

- (1) इस तकनीक से घाव जल्दी भरते हैं।
- (2) दर्द कम होता है।
- (3) सूजन कम होती है।

10.3.2 इन्टरफेरेंशियल थेरेपी

इसमें 50 हर्ट्स फेराडे विद्युतधारा 100 cm^2 चमड़ी के क्षेत्रफल के हिसाब से दी जाती है एवं वोल्टेज कम दिया जाता है। इस तकनीक में दो जगह अलग-अलग आवृत्ति एक 4000 हर्ट्स एवं एक 3900 हर्ट्स की धाराएँ एक साथ शरीर में प्रवाहित करायी जाती है। इससे एक औसत AMF (Amplitude Modulation Frequency) उत्पन्न होता है जो कि अपने प्रभाव से दर्द एवं सूजन कम करता है।



इन्टरफेरेंशियल थेरेपी देते हुये

इन्टरफेरेंशियल थेरेपी के लाभ:-

1. रोगी के सम्बन्धित अंग का दर्द (Pain) दूर होता है।
2. रोगी के सम्बन्धित अंग की सूजन (शोथ) दूर होती है।
3. सुप्त तंत्रिका तंत्र सजग होता है।
4. मांसपेशियाँ उद्दीप्त होकर स्वस्थ होती है।



इन्टरफेरेंशियल थेरेपी मशीन एवं प्रयोग

10.3.3 शोर्ट वेव थेरेपी (Short Wave Therapy)

“सामान्यतः 2 से 100 मेगा हर्ट्ज की इलेक्ट्रोमैग्नेटिक रेडिएशन तरंगों को शोर्ट वेव थेरेपी कहते हैं।” यह तरंगें शरीर में प्रवाहित करने के बाद यह शरीर में ताप उत्पन्न करती हैं जिससे अंदरूनी सिकाई होती है।



शोर्ट वेव थेरेपी

शोर्ट वेव थेरेपी (Short Wave Therapy) के लाभ:-

- ◆ ताप के कारण घाव जल्दी भरते हैं।
- ◆ मांसपेशियों की अकड़न कम होती है, दर्द कम होता है।
- ◆ जोड़ों की कार्य क्षमता पुनः सामान्य होने लगती है। इस तकनीक से
- Deep Heating अर्थात् अन्दरूनी सिकाई होती है।

सावधानियाँ:- शोर्ट वेव थेरेपी निम्न लोगों को नहीं देना चाहिये:-

- * दुबले पतले मरीज को ।
- * अत्यधिक बीमार रोगी को ।
- * हृदय रोगियों को ।
- * जिनके शरीर में Pace-Maker या मेटल का कोई चीज डली हुई हो।
- * थेरेपी देने से पहले सोने चांदी के जेवर खुलवाने चाहिये ।
- * बुखार के रोगी इत्यादि को।

10.3.4 लेजर थेरेपी

LASER - LIGHT AMPLIFICATION STIMULATED EMISSION OF RADIATION

लेजर चार तरह की होती है:-

- (1) Class -I

- (2) Class –II
- (3) Class -III
- (4) Class –IV



लेजर मशीन



लेजर मशीन द्वारा थेरेपी देते हुये

सामान्यतया Laser Class-I ही उपयोग लिया जाता है। लेजर थेरेपी देते वक्त रोगी एवं चिकित्सक दोनों को आँखें एवं कान ढककर रखने चाहिये। Laser Class-Ist से भी तापमान उत्पन्न होता है एवं दर्द, सूजन कम होकर रोगी को आराम मिलता है।

10.4 एक्सरसाइज थेरेपी (व्यायाम थेरेपी)

विज्ञान की वह शाखा जिसमें मांसपेशीय एवं हड्डी तंत्र के कार्यों को पुनः सामान्य अवस्था में लाया जाने का एवं बीमारी या चोट की वजह से हुए दर्द का उपचार किया जाता है उसे एक्सरसाइज थेरेपी कहते हैं।

विशिष्ट उपचार उद्देश्य हेतु विशिष्ट कसरत द्वारा उपचार करवाना "एक्सरसाइज थेरेपी" कहलाता है।

इसके अन्य नाम निम्न है:-

- ◆ Activity based therapy
- ◆ Activity Based Recovery therapy
- ◆ न्यूरो थेरेपी
- ◆ पुनःस्थापन थेरेपी (Rehabilitation)
- ◆ व्यायाम पद्धति

इसमें विभिन्न जोड़ों एवं मांसपेशियों की कसरते करवाई जाती है ताकि वह जोड़ या मांसपेशी सामान्य कार्य करने की क्षमता प्राप्त कर सके। एक्सरसाइज थेरेपी से एक तरफ

मांसपेशी हष्टपुष्ट होती है और दूसरी तरफ उसके कार्य करने की शक्ति भी बढ़ती है अर्थात् मांसपेशी की शक्ति एवं वजन (Mass) भी बढ़ता है।



एक्सरसाइज थेरेपी

प्राचीन काल में यह कार्य पहलवान इत्यादि लोग करते थे उदाहरण के तौर पर :-
पैर की मोच निकालना

उतरे हुए कंधे के जोड़ को पुनः सामान्य अवस्था में लाना

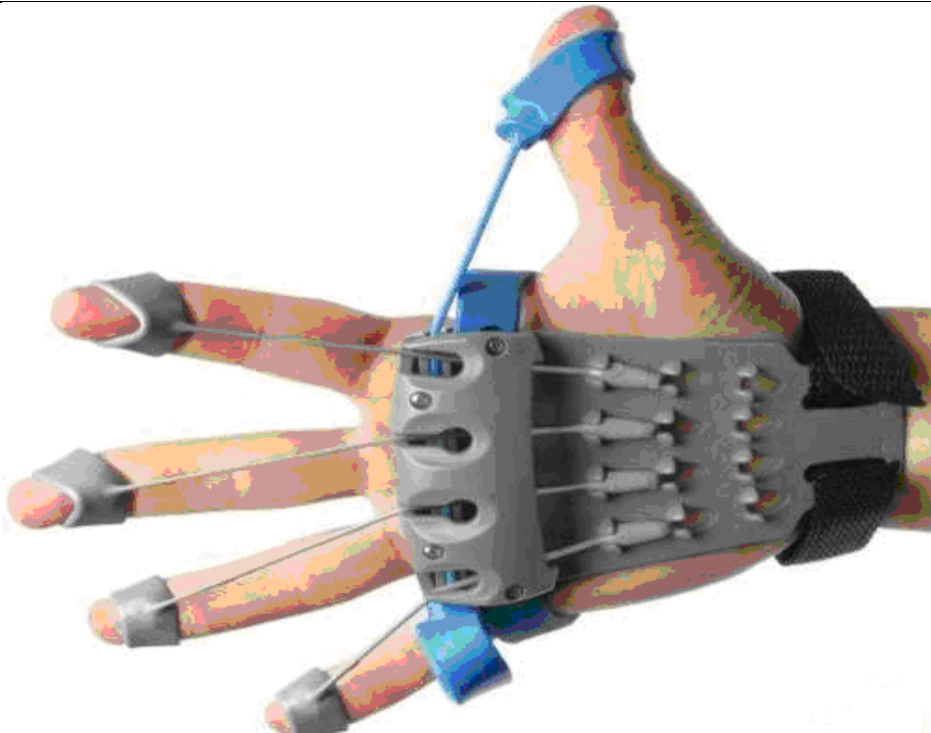
उतरे हुए कूल्हे के जोड़ (Dislocation) को पुनः सही करना

गर्दन एवं कमर की ऐंठन व दर्द की मालिश द्वारा इलाज करना

एक्सरसाइज थेरेपी मुख्यतया तीन प्रकार की होती है-

- * मांसपेशीय सुझौलता बढ़ाने हेतु।
- * मांसपेशीय अकड़न/जकड़न दूर करने हेतु
- * मांसपेशीय शरीर को लचीला बनाने हेतु।
- * मांसपेशियों की शक्ति बढ़ाने हेतु।

सामान्यतया एक्सरसाइज थेरेपी की निम्न व्यावहारिक विधियाँ –



हाथों की एक्सरसाईज थेरेपी कराते हुये

1. मेनुअल थेरेपी (Manual Therapy)
2. हाइड्रोथेरेपी (पानी में कसरत करवाना)
3. मालिश थेरेपी (Massage Therapy)
4. अन्य एक्सरसाईज थेरेपी

मेनुअल थेरेपी के विकसित रूप निम्नानुसार है :-

- एक्यूप्रेसर
- व्यायाम
- Craniosacral Therapy
- डोम तरीका
- जोइंट मेनिपुलेशन
- मेरुदण्ड मेनिपुलेशन
- मायो थेरेपी
- ओस्टियोपेथिक मेनिपुलेशन
- पेशाब एवं मल के अनियंत्रण को सही करने की व्यायाम थेरेपी
- लिम्फ नलिकाओं के रुकने से आई सूजन को कम करने की थेरेपी
- बर्फ / ठण्डे पानी से सिकाई इत्यादि
- गर्म पानी से सिकाई इत्यादि

मेनुअल थेरेपी के चार घटक:-

- * मालिश
- * मोबिलाइजेशन
- * मेनिपुलेशन
- * शिक्षा



कंधे की मेनिपुलेशन थेरेपी देते हुये

मालिश मे चिकित्सक अपने हाथों द्वारा विशेष तकनीक से रोगित जोड़ो या मांसपेशियों पर मालिश करते है। आजकल मालिश हेतु विभिन्न इलेक्ट्रोनिक उपकरण, वाइब्रेटर इत्यादि भी इस्तेमाल किये जा रहे है।

मोबिलाइजेशन में जोड़ो को या शरीर के मांसपेशीय-हड्डी सिस्टम को खींचना, धक्का देना, जोर डालना, मोड़ना, घुमाना आदि किया जाता है ताकि उनका लचीलापन सामान्य हो सके व कार्यक्षमता बढ़ सके एवं दर्द / सूजन भी कम हो सके।

मेनिपुलेशन मे शरीर के रोगित जोड़ों पर दबाव बनाया जाता है। यह दबाव हाथों द्वारा या विशिष्ट उपकरण की सहायता से बनाया जाता है ताकि जोड़ का दर्द/सूजन कम हो एवं वह सामान्य कार्य कर सके।

शिक्षा में रोगी को घर पर करने लायक कसरतें बताई जाती है एवं विशिष्ट उपकरणों की जानकारी एवं उनके इस्तेमाल की जानकारी दी जाती है।

हाइड्रोथेरेपी:- सन् 2004 मे राष्ट्रीय कम्प्लीमेन्ट्री एवं इन्टीग्रेटिव हेल्थ सेन्टर ने मेनुअल थेरेपी/एक्सरसाइज थेरेपी को Complementary & Alternative Medicine (CAM) के रूप में स्वीकार किया । पानी मे कसरत करने से जोर कम लगाना पड़ता है इसलिए जो रोगी थोड़ा सा भी शारीरिक तनाव (व्यायाम के समय) सहन नहीं कर सकते उनको पानी के अन्दर विशिष्ट व्यायाम आदि की सलाह दी जाती है ताकि उनका व्यायाम/कसरत करने का आत्मविश्वास बढ़ सकें। गुनगुने पानी में व्यायाम करने से रक्त संचरण सही होता है, जिससे अन्दरूनी सूजन एवं घाव भरने में शीघ्र सहायता मिलती है।

10.5 इलेक्ट्रोथेरेपी एवं एक्सरसाइज थेरेपी के लाभ निम्नानुसार हैं:-

1. दर्द निवारण – दर्द में आराम मिलता है।
2. जोड़ों की क्रियाशीलता (Activity) बढ़ती है।



घुटने के दर्द में इलेक्ट्रोथेरेपी देते हुये

3. लकवे, पक्षाघात एवं एट्रोफी के मरीजों की मांसपेशीय शक्ति बढ़ाने एवं रक्त संचरण सही करने में होता है।
4. बीमार जोड़ की कार्य करने की क्षमता एवं चालित क्षमता (Mobility) बढ़ती है।
5. रक्त संचरण बढ़ने से घाव जल्दी भरते हैं।
6. त्वचा एवं मांसपेशीय चोट सही होने में मदद मिलती है।
7. सूजन (Swelling) कम होती है।
8. रक्त की धमनियाँ, शिराएँ एवं अन्य नलिकाएँ स्वस्थ होती हैं एवं उनका लचीलापन सही होने से उच्च रक्तचाप आदि सही होने में सहायता मिलती है।
9. मूत्र एवं मल द्वारा अनियंत्रण रोगों में सहायता मिलती है।
10. तंत्रिका तंत्र (Lymphatic drainage) प्रवाह सही होने से सूजन कम होती है।
11. मांसपेशीय अकड़न, जकड़न दूर होती है।



कंधे के दर्द हेतु इलेक्ट्रोथेरेपी देते हुये

12. शारीरिक सुझौलता आती है।
13. जोड़ों के ढीले टेन्डन एवं लिगामेन्ट मजबूत होते हैं।
14. चलते फिरते समय शरीर का संतुलन सही बनता है।
15. शारीरिक कार्य करने की शक्ति बढ़ती है।
16. शरीर में स्फूर्ति आती है।



एडी के दर्द में इलेक्ट्रोथेरेपी देते हुये

इकाई 10.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई में फिजियोथेरेपी के दोनों भागों का वर्णन किया गया है। मुख्यतया— (1) इलेक्ट्रोथेरेपी (2) मेनुअल थेरेपी। इलेक्ट्रोथेरेपी में विद्युतधारा, अल्ट्रासाउन्ड, शोर्टवेव, लेजर आदि से उपचार किया जाता है। वहीं मेनुअल थेरेपी में चिकित्सक अपने हाथों से मालिश एवं उपकरणों की मदद से रोगी का उपचार करता है।

जोड़ों, एवं मांसपेशियों/हड्डियों के दर्द, सूजन, अकड़न आदि कम करने, मांसपेशियों एवं जोड़ों के कार्यों को सामान्य करने में बहुत सहायता मिलती है। विभिन्न फिजियोथेरेपी केन्द्रों पर इनके उपकरण एवं उपयोग के तरीके सिखाये जाते हैं। इस इकाई में स्वास्थ्य प्राप्ति हेतु इलेक्ट्रोथेरेपी एवं मैन्युअल थेरेपी की उपयोगिता के बारे में संक्षेपतः वर्णन किया गया है।

इकाई 10.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- ◆ WWW. ELECTRO THERAPY. ORG
- ◆ WWW. APTA. ORG
- ◆ ELECTRO THERAPY – PURE CARE INC.
- ◆ CRITICAL REVIEW OF USE OF ELECTRO THERAPY BY R. CARNIEL & R. SAGGINI
- ◆ ELECTRO THERAPY – REHP OPREMA
- ◆ BASIC ELECTRO THERAPY COURSE EBOOK PDF
- ◆ INTRODUCTION TO PHYSIC THERAPY BY PAGLIARULO, MICHAEL
- ◆ WORLD CONFEDERATION OF PHYSICAL THERAPY
- ◆ PHYSICAL REHABILITATION, BY SUSAN SULLIVAN, T SCHMITZ
- ◆ PRINCIPALS OF EXERCISE THERAPY, BY DENA GARDINER
- ◆ PRACTICAL EXERCISE THERAPY, BY MARGARET HOLLIS, PHYL COOK
- ◆ THERAPEUTIC EXERCISE: FOUNDATION & TECHNIQUES, BY CAROLYN KISNER, LYN ALLEN COLBY
- ◆ CLAYTON'S ELECTROTHERAPY, BY FORSTER & PALASTANGA
- ◆ TIDYS PHYSIOTHERAPY, BY STUART POTER
- ◆ CASH'S TEXTBOOK OF ORTHOPEDICS & RHEUMATOLOGY OF CARDIOVASCULAR & RESPIRATORY CONDITIONS
- ◆ NEUROLOGY OF GENERAL MEDICAL & SURGICAL CONDITIONS FOR PHYSIOTHERAPISTS

- ◆ DR. ANIL SONI- MEDICAL COLLEGE, KOTA
- ◆ DR. HARSH, M.RAJDEEP- PHYSIOTHEPIST-KOTA
- ◆ DR.ANJANA SHARMA-OESTOPATHY& PANCHKARMA-KOTA
- ◆ DR. NITYANAND SHARMA -YOGA & AYURVEDA-KOTA (RAJASTHAN)

इकाई 10.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. इलेक्ट्रोथेरेपी के कितने भाग होते हैं ?
2. इलेक्ट्रोथेरेपी के बारे में विस्तार से समझाइयें ?
3. फिजिकल थेरेपी को कितने भागों में बाँटा गया है ?
4. कारकों के आधार पर इलेक्ट्रोथेरेपी को कितने भागों में बाँटा है, मुख्य बिन्दु लिखिये ?
5. इलेक्ट्रोथेरेपी देने के मुख्य तरीकों पर विस्तार से समझाइये ?
6. अल्ट्रासाउण्ड थेरेपी के बारे में लिखियें ?
7. शोर्टवेव थेरेपी व लेजर थेरेपी के बारे में लिखिये ?
8. एक्सरसाईज थेरेपी क्या होती है व यह थेरेपी देने के तरीकों के नाम लिखिये?
9. मेनुअल थेरेपी पर प्रकाश डालिये ?
10. इलेक्ट्रोथेरेपी के लाभ एवं उपयोग लिखिये ?
11. मेनुअल थेरेपी के लाभ व उपयोग लिखिये ?
12. इलेक्ट्रोथेरेपी एवं मेनुअल थेरेपी में अन्तर स्पष्ट कीजिये ?

इकाई 11 रोगों में फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोग -1

- 11.1 प्रस्तावना
- 11.2 उद्देश्य
- 11.3 तंत्रिका तंत्र सामान्य परिचय
- 11.4 तंत्रिका तंत्र संबंधी रोगों में अनुप्रयोग
- 11.5 अस्थियों एवं मांसपेशीय रोगों में अनुप्रयोग
- 11.6 खेलकूद/स्पोर्ट्स में फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोग
- 11.7 वक्ष (छाती) के रोगों में फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोग
- 11.8 सारांश
- 11.9 निबंधात्मक प्रश्न
- 11.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

11.1 प्रस्तावना

आज की लाइफ स्टाइल में किचन में खड़े होकर काम करना, खड़े होकर बफर में भोजन करना, आरामदायक कुर्सियों पर बैठना, गद्देदार बिस्तरों पर सोना, गलत तरीके से उठना—बैठना एवं चलना आदि के कारण “पोश्चर रिलेटेड प्रोबलम्” होकर एड़ी, घुटना, कमर, कंधा, गर्दन आदि में दर्द—सूजन जैसे रोग हो जाते हैं। इन सर्वाइकिल रोगों में, स्लिपडिस्क आदि में फिजियोथेरेपी बहुत ही लाभदायक चिकित्सा पद्धति हैं।

फिजियोथेरेपी विद्या का हम दैनिक जीवन में बेहत अनुप्रयोग कर सकते हैं, जैसे कि तंत्रिका तंत्र रोगों में, अस्थि (हड्डी) रोगों में मांसपेशीय रोगों में, खेलकूद/स्पोर्ट्स ट्रेनिंग एवं रोगों/उपचार में, वक्ष (छाती) के कुछ विशिष्ट रोगों के उपचार आदि में।

“फिजियोथेरेपी तकनीक द्वारा दर्द कम करने एवं चोटिल अंग को जल्दी स्वस्थ करने में बहुत उपयोगी है।”

इकाई 11.2 उद्देश्य

इस इकाई में हम अध्ययन करेंगे कि तंत्रिका तंत्र संबंधी रोगों में अनुप्रयोग हड्डी एवं मांसपेशीय रोगों में अनुप्रयोग खेलकूद/स्पोर्ट्स में अनुप्रयोग वक्ष (छाती) के रोगों में अनुप्रयोग

11.3 तंत्रिका तंत्र (Nervous System) सामान्य परिचय

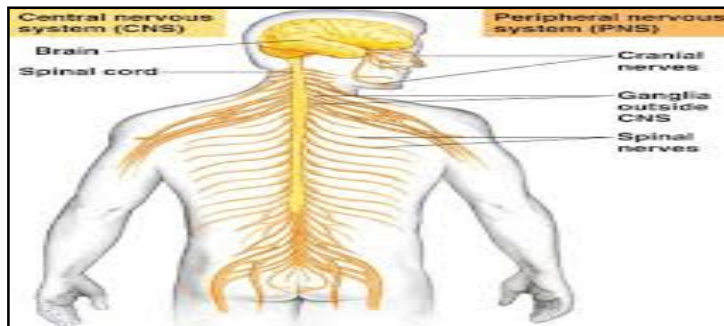
परिचय (Introduction)–

तंत्रिका तंत्र हमारे शरीर का सबसे महत्वपूर्ण Controlling तंत्र हैं। जो शरीर की सभी ऐच्छिक तथा अनैच्छिक क्रियाओं को नियंत्रित करता है।

तंत्रिका तंत्र का मुख्य कार्य संवेदनाओं (Impulses) को प्राप्त करना, उनका संचय (Store) करना तथा उन्हें मुक्त (Release) करना हैं। इसी—से सारे कार्य संपादित होते हैं।

तंत्रिका तंत्र बहुत सारी तंत्रिका कोशिकाओं से मिलकर बना होता है, ये कोशिकाएँ सामूहिक रूप से न्यूरोन (Neuron) कहलाती हैं।

चिकित्सा विज्ञान की वह शाखा जिसमें तंत्रिका सम्बन्धित अध्ययन किया जाता है, उसे न्यूरोलॉजी (Neurology) कहते हैं।



तंत्रिका तंत्र

(1) न्यूरोन (NEURON)-

न्यूरोन की संरचना (Structure of Neuron):- न्यूरोन में निम्नलिखित तीन संरचनाएँ पाई जाती है।

1. कोशिका काय (Cell body)
2. पार्श्व तन्तु (Dendrites)
3. अक्ष तन्तु (Axon)

1. कोशिका काय (Cell body):-

- 1 यह न्यूरोन का सबसे प्रथम भाग होता है। इसे सोमा (Soma) भी कहते हैं।
- 2 यह न्यूरोन का अनियमित आकार का बड़ा भाग होता है।
- 3 कोशिका काय के बीच में एक संरचना पाई जाती है। जिसे केन्द्रक (Nucleus) कहते हैं।

कार्य (Function):- कोशिका काय पार्श्वतन्तु तथा अक्ष तन्तु के लिए प्रोटीन का निर्माण करती है।

2. पार्श्व तन्तु (Dendrites) :-

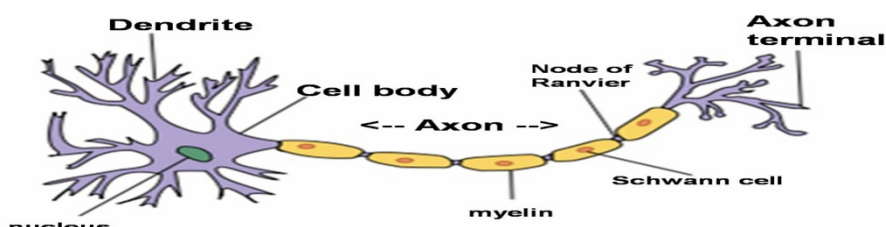
- 1 यह न्यूरोन का द्वितीय भाग होता है।
- 2 इसकी संरचना पेड़ से निकली शाखाओं जैसी होती है। (Branch Tree like)
- 3 इन शाखाओं को प्रवर्ध कहते हैं।

कार्य (Function):- पार्श्व तन्तु एक ऐन्टिना (Antennae) की तरह कार्य करते हैं जिनका मुख्य कार्य आने वाले आवेगों (Impulses) को प्राप्त करना है।

3. अक्ष तन्तु (Axon):-

- 1 यह न्यूरोन का सबसे महत्वपूर्ण भाग होता है।
- 2 यह कोशिका काय से निकलने वाली एक लम्बी संरचना है।
- 3 इसे तंत्रिकाक्ष भी कहते हैं। लम्बाई लगभग 0.1 m.m. से 2 m.m. (Millimeters) होती है।

- 4 अक्षतन्तु (Axon) के चारों तरफ एक पतली झिल्ली पायी जाती है, जिसे एक्सोलेमा (Axolemma) कहते हैं।
- 5 अक्षतन्तु में एक विशेष प्रकार की कोशिकाओं की श्रृंखला (Series of cells) पायी जाती है जिसे स्वान सैल (Schwann cell) कहते हैं।
- 6 स्वान सैल परिसरीय तंत्रिका तंत्र (Peripheral nervous system) की Supporting cells होती हैं।
- 7 अक्ष तन्तु एक माइलिन परत द्वारा ढका होता है, बीच-बीच में यह माइलिन परत विभक्त हो जाती है, जिसे नोड ऑफ रेनवियर (Node of ranveir) कहते हैं।



न्यूरोन एवं इसकी संरचना

कार्य (Function):- का मुख्य कार्य सूचनाओं (Information) को एक तंत्रिका कोशिका से अन्य तंत्रिका कोशिका तक पहुँचाना होता है।

(2) परिसरीय तंत्रिका तंत्र (PERIPHERAL NERVOUS SYSTEM)

परिचय (Introduction):-

परिसरीय तंत्रिका तंत्र में दो प्रकार की तंत्रिकाएँ सम्मिलित हैं जो कि मस्तिष्क तथा स्पाइनल कोर्ड से निकलती हैं। जो कि निम्न प्रकार से हैं।

1. कपालीय तंत्रिकाएँ (Cranial nerves) = 12 जोड़ी (Pairs)
2. स्पाइनल तंत्रिकाएँ (Spinal nerves) = 31 जोड़ी (Pairs)

(I) कपालकीय तंत्रिकाएँ (Cranial nerves):-

- 1 मस्तिष्क से 12 जोड़ी कपालकीय तंत्रिकाएँ निकलती हैं।
- 2 ये तंत्रिकाएं संवेदी (Sensory), प्रेरक (Motor) तथा मिश्रित प्रकार की होती हैं।
- 3 इन सभी तंत्रिकाओं का अपना-अपना विशिष्ट कार्य है।
1. **ऑलफैक्टरी नर्व (Olfactory nerve):-**
उद्भव – यह तंत्रिका नाक से निकलती है।
कार्य – यह सुगन्ध या दुर्गन्ध का ज्ञान कराती है।
2. **ऑप्टिक नर्व (Optic nerve):-**
उद्भव – यह आँख के रेटिना से निकलती है।
कार्य– यह देखने की क्रिया से सम्बन्धित है।
3. **ऑक्युलोमोटर नर्व (Coulometer nerve):-**
उद्भव – यह आइरिस (Iris), तिर्यक पेशी तथा नेत्र गोलक (Eyeball) को आपूर्ति करती है।

कार्य— यह नेत्र गोलक की पेशियों को उत्तेजित करने तथा नेत्र गोलक की गति से सम्बन्धित हैं।

4. ट्रॉक्लियर नर्व (Trochlear nerve):-

उद्भव— यह नेत्र गोलक की सुपीरियर तिर्यक पेशी को आपूर्ति करती है।

कार्य— नेत्र गोलक की गति से सम्बन्धित हैं।

5. ट्रॉइजेमिनल नर्व (Trigeminal nerve):-

उद्भव— यह त्वचा, चेहरे तथा जबड़े की पेशियों को आपूर्ति करती है। तीनों तंत्रिकाओं से मिलकर बनी होती हैं।

1 ऑपथैल्मिक नर्व (Ophthalmic nerve)

2 मेक्सिलरी नर्व (Maxillary nerve)

3 मेण्डीबुलर नर्व (Mandibular nerve)

कार्य— यह चेहरे के स्पर्श एवं चेहरे की मांसपेशियों एवं चबाने के कार्य से संबंध रखती है।

6. एब्ड्यूसेंट नर्व (Abducent nerve):-

उद्गम— नेत्र गोलक की लेटरल रेक्टस पेशी को आपूर्ति करती हैं।

कार्य— नेत्र गोलक की गति से संबंध रखती हैं।

7. फेशियल नर्व (Facial nerve):-

उद्गम— यह जीभ, लार, ग्रन्थियों, चेहरे की पेशियों को आपूर्ति करती है।

कार्य— स्वाद का ज्ञान, लार का स्रावण, चेहरे की मुद्रा से संबंध रखती है।

8. ऑडिटरी या वेस्टिब्यूलोकॉक्लियर नर्व (Auditory or Vestibulochelar nerve):-

उद्गम— यह आंतरिक कर्ण के वेस्टिब्यूल/कोकलीया को आपूर्ति करती है।

कार्य— श्रवण क्रिया से संबंध रखती हैं।

9. ग्लॉसोफेरिन्जियल नर्व (Glossopharyngeal nerve):-

उद्गम— यह ग्रसनी, जीभा का पश्च भाग, टॉन्सिल तथा लार ग्रन्थियों को आपूर्ति करती है।

कार्य— स्वाद का अनुभव, निगलने की क्रिया, लार के स्रावण से संबंध रखती है।

10. वेगस नर्व (Vagus nerve):-

उद्गम— ग्रसनी, स्वरयंत्र, ट्रेकिया, इसोफेगस, आमाशय, आंत्र, पित्ताशय आदि के आन्तरिक अस्तरों को आपूर्ति करती है।

कार्य— इन सभी अंगों से सम्बन्धित पेरिसिम्पेथेटिक प्रभाव डालती है।

11. एसेसरी नर्व (Accessory nerve):-

उद्गम— कोमल, तालु, ग्रसनी, फेफड़े, ट्रेपीजियस पेशी, स्टर्नोक्लीडोमेस्टाइड पेशियों को आपूर्ति करती हैं।

कार्य— सिर की, कन्धे की गति तथा वाणी से संबंध रखती है।

12. हाइपोग्लॉसल नर्व (Hypoglossal nerve):-

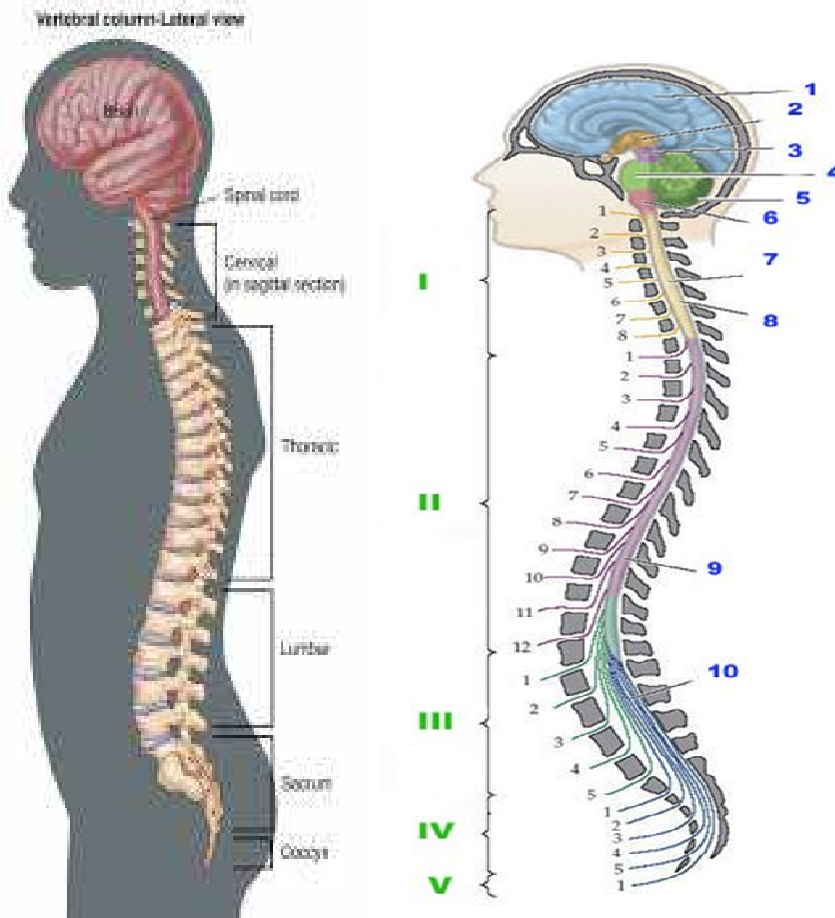
उद्गम— जीभ की आन्तरिक/बाह्य पेशियों तथा हॉयड अस्थि की पेशियों को आपूर्ति करती है।

कार्य- बोलने एवं निगलने से संबंधित है।

(II) स्पाइनल तंत्रिकाएँ (Spinal nerves)-

ये संख्या में 31 जोड़ी होती हैं, जो कि स्पाइनल कोर्ड से निकलती है , जो निम्नानुसार है-

सर्वाइकल तंत्रिकाएँ (Cervical Nerves)	=	08 जोड़ी
थॉरेसिक तंत्रिकाएँ (Thoracic Nerves)	=	12 जोड़ी
लम्बर तंत्रिकाएँ (Lumbar Nerves)	=	05 जोड़ी
सेक्रल तंत्रिकाएँ (Sacral Nerves)	=	05 जोड़ी
कॉक्सिजिअल तंत्रिकाएँ (Coccygeal Nerve)	=	01 जोड़ी



मेरु तंत्रिका तंत्र

ये तंत्रिकाएँ भी कपालकीय तंत्रिकाओं की भांति संवेदी, प्रेरक तथा मिश्रित प्रकार की होती हैं।

(III) क्लिनिकल नोट्स (CLINICAL NOTES) :-

1. मैनैन्जाइटिस (Meningitis):-

मस्तिष्क तथा मेरुरज्जु को आच्छादित करने वाली झिल्लियों में संक्रमण तथा शोध उत्पन्न हो जाना मैनैन्जाइटिस या मस्तिष्क आवरण शोध कहलाता है, यह जीवाणु, विषाणु या अन्य सूक्ष्मजीवों के संक्रमण से उत्पन्न होता है।

2. एन्सिफेलाइटिस (Encephalitis):-

मस्तिष्क ऊतक अथवा मस्तिष्क पेरेंकायमा में शोध उत्पन्न होना एन्सिफेलाइटिस सा मस्तिष्क शोध कहलाता है।

3. एपिलेप्सि (Epilepsy):-

मस्तिष्क कोशिकाओं में इलेक्ट्रिकल Activity बढ़ने से उत्पन्न आक्षेपकों के दौरें एपिलेप्सि या मिर्गी की अवस्था कहलाती हैं। इसमें भावनाएँ तथा व्यवहारिक स्थिति में असामान्य परिवर्तन होता है।

4. स्ट्रोक (Stroke):-

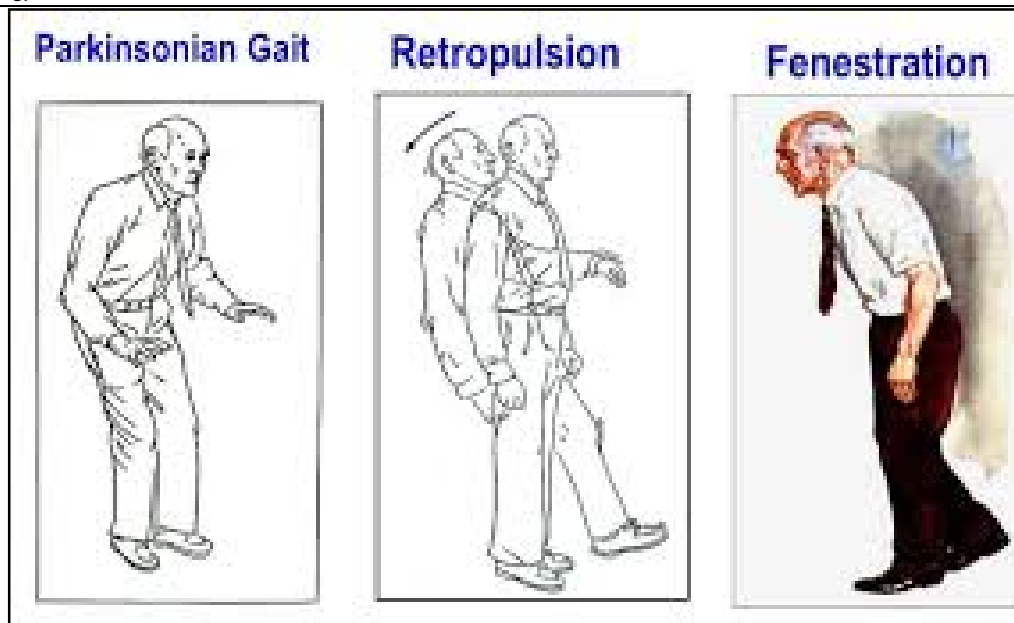
मस्तिष्क के किसी भाग में रक्त आपूर्ति में कमी आ जाना जिससे ऑक्सीजन नहीं मिलती और परिणामस्वरूप मस्तिष्क कोशिकाएँ नष्ट हो जाती हैं उस अवस्था को स्ट्रोक कहते हैं।

5. ब्रेन ट्यूमर (Brain tumor):-

मस्तिष्क के किसी भाग में कोशिकाओं की असामान्य वृद्धि ब्रेन ट्यूमर कहलाती है। यह दो प्रकार की होती है— Benign & Malignant

6. पार्किन्सन रोग (Parkinson's disease):-

यह तंत्रिका तंत्र की Progressive degenerative disease है जिसमें रोगी का मॉसपेशियों तथा शरीर संतुलन पर नियंत्रण नहीं रहता है। उसकी दैनिक क्रियाएँ धीरे-धीरे कम हो जाती हैं जिसको लगातार Physiotherapy तथा Medication द्वारा थोड़ा बहुत सुधारा जा सकता है।



पारकिन्सन रोग

7. डिमेन्शिया (Dementia):-

भूलने की बीमारी को डिमेन्शिया कहते हैं।

Loss of memory is dementia

तंत्रिका तंत्र सम्बन्धी महत्वपूर्ण संज्ञाये

शब्दावली (GLOSSARY)–

ओटोनोमिक नर्वस सिस्टम (Autonomic nervous system)	स्वायत्त तंत्रिका तन्त्र।
एक्सोन (Axon)	कोशिका काय से निकलने वाला प्रवर्ध जो आवेगों को दूर ले जाता है।
ब्रेन (Brain)	मस्तिष्क।
क्रेनियल नर्व (Cranial nerves)	कपालीय तंत्रिकाएँ जिनकी संख्या 12 जोड़ी होती है।
सेन्ट्रल नर्वस सिस्टम (Central nervous system)	केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र।
ड्यूरा मेटर (Dura matter)	मस्तिष्क एवं सुष्पुम्ना रज्जु को ढकने वाली बाहरी परत।
मेनिन्जीज (Meninges)	मस्तिष्क एवं सुष्पुम्ना रज्जु को ढकने वाली परत। (ड्यूरामेटर, एराक्नाइड मेटर, पाया मेटर)
माइलिन शीथ (Myelin sheath)	तंत्रिकाओं के अक्ष तंतुओं के चारों ओर की परत।

न्यूरोलेमा (Neurolemma)	तंत्रिका तंतुओं को चारों ओर बंद करने वाली एक पतली झिल्लीनुमा
न्यूरॉन (Neuron)	तंत्रिका कोशिका।
पेरीफरल नर्वस सिस्टम (Peripheral nervous system)	परिधीय/परिसरीय तंत्रिका तंत्र।
पाया मेटर (Pia mater)	मस्तिष्क एवं सुषुम्ना को चारों ओर से ढकने वाली भीतरी परत।
स्पाइनल कोर्ड (Spinal cord)	सुषुम्ना रज्जु/मेरुरज्जु।
स्पाइनल नर्वज (Spinal nerves)	मेरुरज्जु से निकलने वाली 31 जोड़ी तंत्रिकाएँ।
सिम्पैथेटिक नर्वस सिस्टम (Sympathetic nervous system)	अनुकम्पी तंत्रिका तंत्र

11.4 तंत्रिका तंत्र संबंधी रोगों में फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोग

(1) **Neurology Rehabilitation** न्यूरोलोजी पुनर्वास :-

रिहैबिलिटेशन (पुनर्वास) का अर्थ होता है कि क्षति (Injury) होने के पश्चात इस अंग का पुनः सामान्य कार्य क्षमता आंशिक/या पूरी तरह पूर्व स्थिति में लाने का प्रयास।

इसमें निम्न तथ्यों पर काम किया जाता है :-

पक्षाघात/ Brain Stroke के पश्चात्

अंगों के सामान्य कार्य करने का उपचार

Speech Therapy

तंत्रिका तंत्र की Injury (क्षति) होने उपरान्त देखभाल

न्यूरोलोजिकल रोग :-

- * Brain Hemorrhage
- * Brain injury
- * Cerebral पाल्सी
- * मल्टीपल स्क्लेरोसिस
- * पार्किंसन बीमारी
- * मेरुरज्जु Spinal cord क्षति
- * पक्षाघात
- * मोटर न्यूरॉन बीमारी
- * एट्रोफी
- * तंत्रिका क्षति (Cranial palsy)
- * Gait imbalance (चलने में परेशानी)
- * अर्ध पक्षाघात— Hemiplegia

- * साइटिका (Sciatica)
- * न्यूरोपेथी
- * चक्कर आना BPPV (Benign positional Vertigo)
- * कार्पल टनेल सिण्ड्रोम
- * पोलियो
- * जबड़े का दर्द Trigeminal Neuralgia
- * कॉडा इक्विना
- * कोनस मेड्यूलेरिस



Electrotherapy in Lumbar Spondylitis

निम्न लक्षण आने पर Neurological Rehabilitating की आवश्यकता पड़ती है।

- चक्कर आना
- चलने में सन्तुलन नहीं बनना
- चलने में कमजोरी महसूस होना
- हाथों में कम्पन्न एवं कमजोरी एवं सुन्नपन का आना
- 6 मिनट तक भी पैदल नहीं चल पाना
- बोलने में परेशानी होना
- चेहरे की असामान्यता (Asymmetry) होना
- शरीर का भारी लगना व सुन्न होना
- चलते समय पैरों से बार-बार चप्पल निकल जाना
- भोजन निगलने में परेशानी होना
- आवाज का बदल जाना
- मल-मूत्र की संवेदना का पता नहीं लग पाना।

मानव मस्तिष्क में मेरुरज्जू (Spinal Cord) के 31 जोड़े अग्र एवं पश्च तंत्रिका तंतु तंत्रिकाएं एवं मोटर न्यूरॉन यूनिट होती हैं। मानव मस्तिष्क में अरबों "न्यूरॉन" होते हैं जो समूह में विभिन्न काम करते हैं। यहाँ सारे तंत्रिका तंत्र के Centers (केन्द्र) होते हैं। इसमें रक्त की सूक्ष्म रक्तवाहिनी का फटना या थक्का जम जाने पर संबंधित Area को रक्त संचार नहीं मिलने पर Oxygen एवं ग्लूकोज नहीं मिलता तो वह हिस्सा काम करना बन्द कर देता है और उससे संबंधित अंग एवं मांसपेशियाँ भी कार्य करना बंद कर देती है। मस्तिष्क ही सारे शरीर की संवेदनाएं ग्रहण कर वापस सुचारु प्रतिक्रिया एवं कार्य करने का आदेश देता है।

मेरुरज्जू रीढ़ की कशेरुकाओं (Vertebra) के बीच के छिद्र में रहती है। यह सारे शरीर की तंत्रिकाओं के बारीक तन्तुओं के दाब, ताप, स्पर्श, दर्द एवं स्वचालित तंत्रिका तंत्र के तन्तुओं को मस्तिष्क तक Connect करने का माध्यम है। यहाँ तंत्रिका तन्तु संघनित रूप से होते हैं एवं थोड़ी सी चोट से संबंधित अंग प्रभावित हो कर काम करना बंद कर देते हैं। इसे Spinal cord injury कहते हैं।

अन्य तंत्रिकाएं Chord एवं सामान्य एकल तंत्रिका के रूप में पूरे शरीर में अंगों एवं मांसपेशियों को जाती है। इनमें क्षति होने पर उससे सम्बन्धित (Supplied Organ) मांसपेशियां काम करना बंद कर देती है।

केन्द्रीय तंत्रिकाएं (Cranial Nerves) – यह संख्या में 12 होती है जो आंख, नाक, कान, गला, चेहरा, जबड़े की Muscles, गले की मांसपेशियां, बोलने की मांसपेशियों को Supply देती है। इनमें विकृति आने पर संबंधित अंग निष्क्रिय हो जाता है। मांसपेशियाँ पाँचों ज्ञानेन्द्रियों की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

न्यूरो-रीहैबिलिटेशन – Phyrotherapy में निम्न प्रक्रियाएं अपनाई जाती हैं:-

- Gait Training – चलने के लिए कूल्हें एवं घूटने की कसरत चलने का तरीका बदलना
- Balance Training – हाथ पैर, कूल्हे एवं घुटने की कसरत प्रक्रिया जिसमें चलतेसमय

सम्पूर्ण संतुलन बनाए रखना सिखाया जाता है।

मल्टीपल स्क्लेरोसिस

पार्किंसन्स बीमारी

मस्तिष्काघात (Brain injury)

जोड़ों की क्षति (Joint injury)

चालित यंत्र की सहायता Mobility Aids :-

Walker



Walker

Crutches, Wheel Chair, लकड़ी का सहारा (Stick Support)



(Stick Support)

इन की सहायता से व्यक्ति को चलना सिखाया जाता है, ताकि वह अपनी दैनिक दिनचर्या के सामान्य कार्य कर सके।



पैरों की फिजियोथेरेपी कराते हुए

Hydrotherapy:- सूजन वाले हाथ पैर Stiff joint एवं ऐठन युक्त मांसपेशियों वाले अंगों को गर्म पानी में डूबों कर रखना।

आमवात (Osteoarthritis), पार्किंसन बीमारी, गठिया बाय।

लकवा ग्रस्त अंग हाथ, पैर, पंजा इत्यादि की कसरतें ताकि उनमें कुछ संवेदनाएं एवं मोटर-पॉवर कुछ हद तक आ सके।



लकवा ग्रस्त पैरों की फिजियोथेरेपी कराते हुए

लकवा ग्रस्त (Paralysis) अंग एवं मांसपेशियों में electrotherapy द्वारा विद्युत ऊर्जा का संचार कर कुछ लिमिट तक अंग के कार्य करने की क्षमता का पुनः विकास (पुनर्वास) करने की कोशिश की जाती हैं।

मालिश द्वारा भी कमजोर पड़े हाथों पैरों एवं अन्य मांसपेशियों की कार्यक्षमता पुनः लौटाने का प्रयास किया जाता है।



Facial palsy

जो जोड़ कड़क पड़ चुके हैं इनकी **Range of Motion** अर्थात् अस्थि जोड़ का लचीलापन वापस पुर्नवासित करने का प्रयास किया जाता है।

न्यूरोजनित दर्द में आराम के लिए अन्य कसरत मालिश, दबाव तकलीफ, **Traction** इत्यादि, एवं लेजर, अल्ट्रासाउण्ड की सहायता से दर्द कम करने का उपचार किया जाता है।

आवाज न निकलने पर **Speech Therapy** व गले की अन्य मांसपेशियों द्वारा आवाज निकलने की प्रक्रिया समझाई जाती है।

भोजन नहीं निगल सकने पर भोजन निगलने की विशेष प्रक्रिया समझाई जाती है।

11.5 अस्थियों (हड्डी) एवं मांसपेशीय रोगों में फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोग

Orthopedic Phygotherapy:- हड्डी एवं मांसपेशियों के युग्म से Musculo-Skeleton सिस्टम बनता है एवं इसमें Injury / क्षति / फ्रेक्चर / दर्द / जकड़न / ऐंठन इत्यादि होने पर दर्द एवं अन्य जोड़ कार्य क्षमता विकार हो जाते हैं। ये सामान्यतया निम्नानुसार है—

मोच

Sprain

Spasm (ऐंठन)

ऑपरेशन पश्चात् सूजन

फ्रेक्चर पश्चात् दर्द

गर्दन एवं पीठ के हिस्सों में दर्द

रिकेट्स (फक्क रोग)

Genu-Valgum- घुटने के पास आना

Genu-Varum- घुटने दूर हो जाना (bow legs) जैसे कि रिकेट्स में होता है

घूटना/कुल्हा प्रत्यारोपण पश्चात् विकार

कुबड़ निकालना

रीढ़ की हड्डी की अकड़न

Bamboo-Spine (Ankylosing Spondylitis)

Cervical Spondylosis

स्लिप डिस्क

Osteoporosis



धुटनों की फिजियोथेरेपी कराते हुए

Musculo-Cutaneous System में मांसपेशी, हड्डी, टेन्डन, उपास्थि, Ligament एवं साईनोवियम इत्यादि होती है। इनमें से किसी में भी विकार आने से दर्द, Joint Immobility, जकड़न इत्यादि हो जाती है। जिन्हें Orthopedic Physiotherapy से ठीक करते हैं। इनमें Physiotherapy चिकित्सक को समस्त मांसपेशियों एवं जोड़ों की गति एवं कार्य याद होने चाहियें एवं उनका परीक्षण करना भी आना भी जरूरी है।

निम्न बिन्दुओं का ध्यान का रखना जरूरी है :-

- कौनसा Joint प्रभावित है।
- कौनसी मांसपेशी कमजोर है।
- कौनसी जगह पर दर्द है।
- कौनसी तंत्रिका प्रभावित है।
- किस Movement पर दर्द होता है।
- सूजन इत्यादि है या नहीं।
- कौन-कौन से कार्य प्रभावित है।
- संबंधित Joint अंग का तापमान कितना है।
- विपरित साइड के सामान्य अंग से बीमार अंग की सापेक्षता

- परीक्षण, अवलोकन, हाथों से दबाकर/छूकर चैक करना।
- दर्द होने पर रोगी के चेहरे की तरफ ध्यान रखना जिससे कि चेहरे के हावभाव से दर्द का पता लग सके।
- कूबड़ आदि हड्डी विकास विकृति अवलोकन।
- रीढ़ की हड्डी की सामान्य/विकृत अवस्था कर परीक्षण।

अनुप्रयोग उदाहरण:-

(1) **गर्दन के रोग :-** गर्दन में स्थित रीढ़ की हड्डी का परीक्षण गर्दन को आगे (Flexion) पीछे (Extension Side) में (Lateral Rotation), धुरी पर घुमाकर (Rotation) इत्यादि से परीक्षण करना चाहिए।

किसी स्थिति में दर्द में बढ़ोतरी होने का ध्यान रखना चाहिये।

- फिर दर्द करने वाली वाली स्थिति **Position** एवं निदान के अनुसार दर्द कम करने वाली कसरत/ **Manovere** इत्यादि की जानकारी एवं परीक्षण देना चाहिये।
- **Cervical color** का प्रयोग करना।
 - Cervical Disc Prolapse
 - Cervical Spondylosis
 - Muscle Spasm

(2) **कंधे के रोग-**

कंधे की Flexion, Extension, Rotation, Adduction, Abduction इत्यादि कार्यों की जाँच करके रोग का निदान एवं आवश्यक कसरत का प्रशिक्षण।

- Frozen Shoulder
- Rotator Cuff Tear
- Deltoid Palsy
- Bursitis
- Dislocation

(3) **कोहनी, कलाई एवं हाथों के रोग :-**कोहनी Elbow का Extension Flexion एवं Rotation की जाँच, Supination, Pronation की जाँच, कोहनी की Flexion, Extension, Side में Deviation इत्यादि की जाँच, हाथों की अंगुलियों की Grif, Power, Flexion Extension इत्यादि की जाँच।

Tennis Elbow

Stiff Joint

कार्पल टनेल सिंड्रोम

Wrist Drop, Claw Hand, Palsy

Ulnar Nerve Palsy

Radial Nerve Palsy

Median Nerve Palsy



कोहनी, कलाई की फिजियोथेरेपी कराते हुए

(4) हाथों, भुजाओं की मांसपेशियों का परीक्षण:-

- ❖ Biceps
- ❖ Triceps
- ❖ Extension, Flexion of elbow & Wrist

(5) कमर का परीक्षण :- आगे झुकना (Flexion), पीछे झुकना (Extension), side to side rotation (घूर्णन) एवं दर्द की स्थिति एवं विस्तार (Radiation) का परीक्षण

- Slip Disc
- Ankylosing Spondylosis
- Osteoporosis
- Radiculopathy, Neuropathy
- अकड़न (stiffness)



Slip Disc की M.R.I.

(6) कूल्हे का परीक्षण :-

Abduction, adduction, flexion, extension, rotation, प्रशिक्षण एवं निदान
उपरान्त उसका उपचार

Gait :- चलते समय दोनों कूल्हों का Balance एवं सामान्य गति एवं इसमें आई विकृति का निदान

संबंधित विकृति के अनुसार कसरत की ट्रेनिंग

(7) घुटने का परीक्षण :-

Flexion, extension, Knee Jerk परीक्षण, घुटने की परिधि का नाप, तापमान का माप (Arthritis की स्थिति में), सूजन, पानी भरा होना – effusion, लिगामेंट एवं टेन्डन का परीक्षण आदि

- ◆ दोनो घुटनों के बीच की सामान्य /असमान्य दूरी का माप
- ◆ Dislocation का परीक्षण
- ◆ Cruciate Ligament का परीक्षण
- ◆ चंद्राकार उपस्थि (Menisci) का परीक्षण
 - Osteo arthritis
 - Rheumatic arthritis
 - Fracture
 - Effusion
 - Ligament injury
- ◆ संबंधित विकार का निदान एवं उपयोगी कसरत की ट्रेनिंग ।

(8) पैर के पंजे एवं पैर का परीक्षण :-

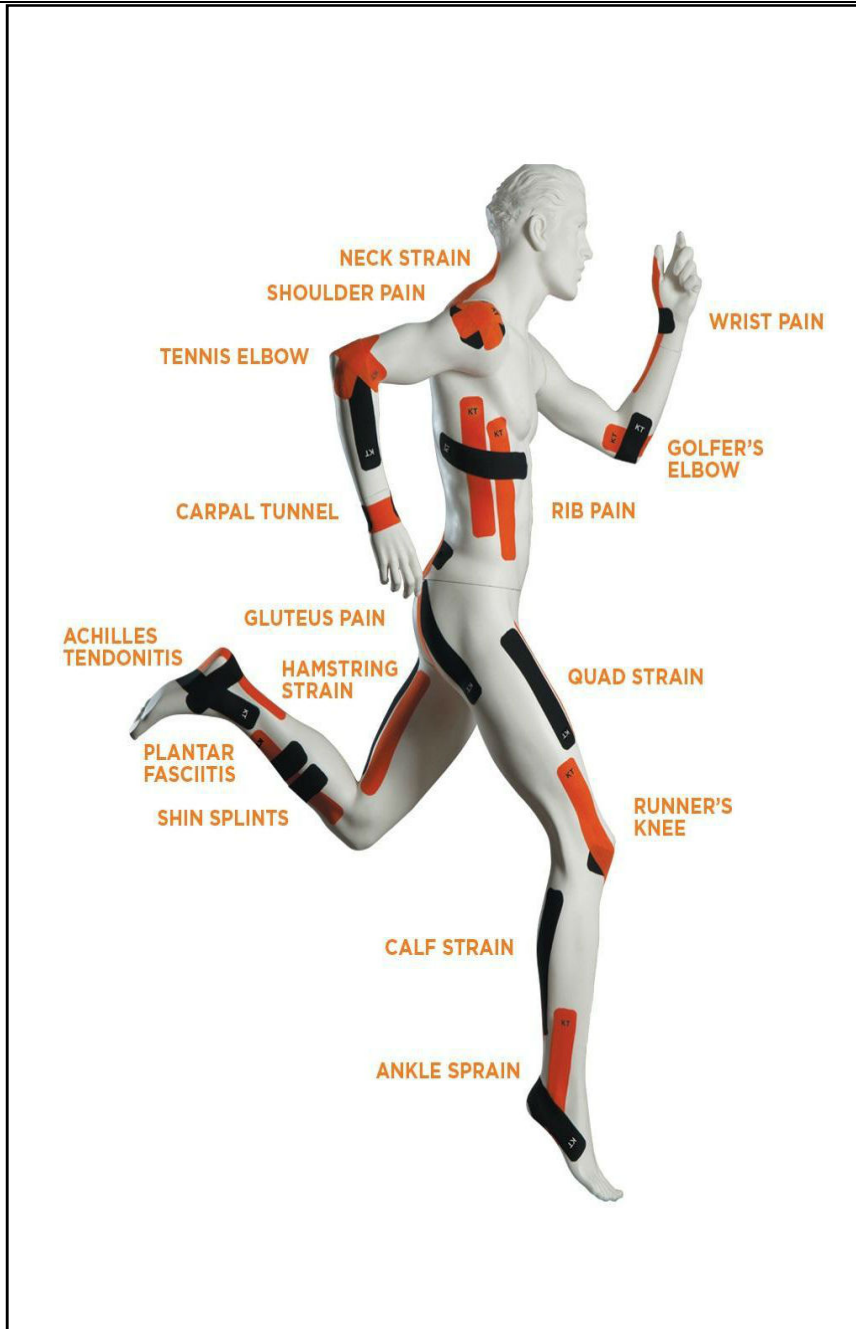
- पैर (पिण्डली) की मांसपेशियों की परीक्षण
- Foot drop
- टखने के जोड़ का flexion extension, rotation, Side to Side deviation का परीक्षण
- संबंधित विकार की कसरत की ट्रेनिंग



पैर के पंजे फिजियोथेरेपी कराते हुए

इकाई 11.6 खेलकूद/स्पोर्ट्स के रोगों में फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोग

(3) **Sports Physiotherapy:-** यह खेलकूद करने वाले एथलिटों के लिये होती है। इसमें प्राथमिक उपचार, चोट की रोकथाम, मालिश, व्यायाम ट्रेनिंग इत्यादि शामिल है।



स्पोर्ट फिजिकल थेरेपी में निम्न बिन्दुओं पर ध्यान दिया जाता है।

- ◆ लिगामेंट्स की सम्पूर्ण जानकारी
- ◆ शरीर की प्रत्येक मांसपेशी की जानकारी
- ◆ शरीर के समस्त टेण्डन (स्नायु) की जानकारी

- ◆ शरीर के प्रत्येक (स्पोर्ट्स से संबद्ध) मांसपेशी के कार्य की जानकारी एवं उनमें क्षति होने पर उत्पन्न हुए प्रभाव की जानकारी
 - ◆ समस्त मांसपेशियों के तंत्रिका तंत्र एवं रूधिर संचरण की जानकारी
 - ◆ शरीर को लचीला बनाए रखने की सम्पूर्ण जानकारी
 - ◆ मांसपेशी थकान (Fatigue) एवं उपचार की जानकारी
 - ◆ अत्यधिक परिश्रम या स्पोर्ट्स करने पर होने वाली क्षति की जानकारी
 - ◆ मांसपेशियों की सही तरीके से कसरत की जानकारी
 - ◆ एरोबिक्स व्यायामों एवं क्रिया कलाओं की जानकारी
 - ◆ हृदय एवं रक्त दाब एवं संचरण संबंधी जानकारी
 - ◆ एथलीट के भोजन पोषण (Nutrition) संबंधी जानकारी
 - ◆ प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट्स एवं वसा भोजन एवं इनसे मिलने वाली कैलोरी की जानकारी
- स्पोर्ट्स फिजियोथेरेपिस्ट के मुख्य कार्य एवं अनुप्रयोग**
- ◆ गर्दन के व्यायाम एवं रोग/चोट का निदान एवं उपचार में दक्षता
 - ◆ कंधों की समस्त मांसपेशियों एवं उनके कार्यों की जानकारी एवं चोट लगने पर प्राथमिक उपचार एवं पुनर्वास में दक्षता



कंधों की फिजियोथेरेपी कराते हुए

- ◆ कोहनी, कलाई एवं अंगुलियों के समस्त जोड़ों एवं मांसपेशियों का ज्ञान, एवं चोट लगने पर उचित निदान एवं कसरत की ट्रेनिंग इत्यादि
- ◆ पीठ एवं कमर में रीढ़ की हड्डियों एवं Spinal cord segment की जानकारी लगी चोट का उपचार एवं पुनर्वास कसरत ट्रेनिंग

- ◆ कूल्हो के जोड़ो, घूटने के जोड़ो की समस्त मांसपेशियों एवं उनके कार्यों, तंत्रिका सप्लाई एवं चोट लगने पर हुए कार्य अभाव की जानकारी, परीक्षण, प्राथमिक उपचार एवं पुनर्वास एक्सरसाइज की ट्रेनिंग



कूल्हो, घूटने के जोड़ो की फिजियोथेरेपी कराते हुए

- ◆ पैर के पंजे के जोड़ों एवं टेन्डन लिगामेंट्स की जानकारी, कार्य एवं क्षति होने पर हुए कार्य अभाव का प्राथमिक प्राथमिक उपचार एवं पुनर्वास एवं कसरत ट्रेनिंग
- ◆ आवश्यक दवाइयों की जानकारी
- ◆ एथलिट के शरीर में सबसे उपयोगी मांसपेशियों की एक्सरसाइज ट्रेनिंग एवं सही दिशा में उसका उपयोग की जानकारी
- ◆ स्पोर्ट्स थेरेपिस्ट की वर्तमान में बहुत माँग हैं एवं यह विभिन्न खिलाड़ियों एवं खेलों की टीमों के साथ कार्य करते हैं। चोटिल होने पर तुरन्त खिलाड़ियों को त्वरित चिकित्सा देते हैं।



स्पोर्ट्स थेरेपी

11.7 (वक्ष) छाती/फेफड़ों के रोगों में फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोग

(4) **Chest Physical Therapy**:-छाती की फिजियोथेरेपी यह छाती में जमे कफ, म्यूकस, बलगम, अन्य स्त्राव को निकालने में सहायक अस्थमा एवं (C.O.P.D) के मरीजों में सांस लेने की कसरत ट्रेनिंग इत्यादि की जानकारी दी जाती है। फेफड़ों में Infection एवं अन्य रोग होने पर कफ ज्यादा बनता है एवं अन्य स्त्राव भी फेफड़ों की एलवीओली एवं Bronchus नलियों में जमा हो जाते हैं परिणामस्वरूप मरीज को कफ, खांसी, सांस में दिक्कत छाती में दर्द इत्यादि तकलीफें शुरू हो जाती है।

Chest Physical Therapy- निम्न प्रकार के कार्य करके रोगियों की मदद करता है—
पीठ थप-थपाकर एवं वाईब्रेटर इत्यादि मशीनों से कफ /secretion/ जमाव को ढीला करना

फिर मरीज की पोजिशन बदल-बदल कर अलग-अलग तरीकों से उसे बाहर निकालने की कोशिश करना

छाती की मांसपेशियों का लचीलापन बनाए रखना

श्वसन लेने की विशेष तकनीक का इस्तेमाल करवाना

हृदय एवं फेफड़ों की कसरत हेतु कार्डियो पलमोनरी कसरत करवाना

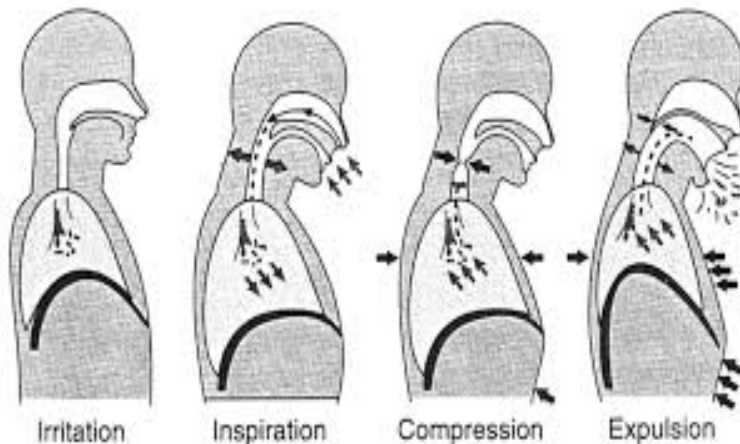
निम्न सावधानियाँ रखनी चाहिये—

1 यह सब खाली पेट करवाएं।

2 अस्थमा एवं टी. बी. के मरीजों में विशेष सावधानियाँ रखें।

3 कमजोर/भंगुर पसलियों वालों में यह काम ना करें।

- 4 कफ के साथ रक्त आवें तो ब्रोंकोस्कोपी की सलाह दे।
- 5 रीढ़ की हड्डी एवं छाती की हड्डियों में विकार वाले रोगियों में यह सावधानी पूर्वक करें।



चेस्ट फिजियोथेरेपी की विधियाँ

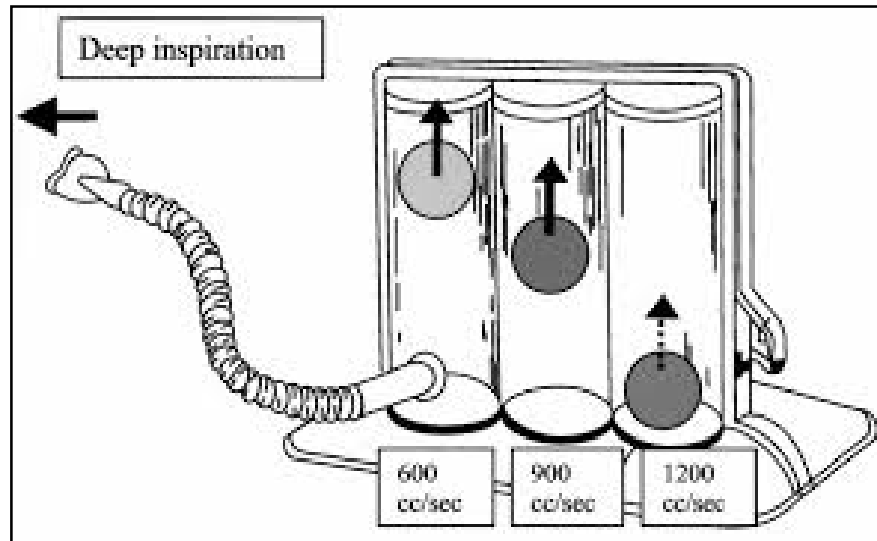
निम्न रोगों में चेस्ट फिजियोथेरेपी दी जाती है:—

- सिस्टिक फाइब्रोसिस
- गुलीन बार सिण्ड्रोम
- टीटनेस
- लकवा (पक्षाघात)
- न्यूमोनिया
- ब्रोंकाइटिस
- ब्रोन्काइक्टिसिस
- C.O.P.D. (Chronic obstructive pulmonary disease)

चेस्ट फिजियोथेरेपी में निम्न विधियाँ अपनाई जाती है :—

पोस्चुरल ड्रेनेज — अर्थात रोगी के शरीर की पोजिशन बदल-बदल कर कफ बाहर निकलवाना।

- सक्रिय सांसों की कसरत
- धनात्मक दबाव एवं सांसों की कसरतें
- पीठ और छाती पर हथेली से थपथपाना
- वाईब्रेटर थेरेपी
- Force Expiratory Exercise
- स्पाइरोमेट्री
- Respirometer exercise



Respirometer

11.8 सारांश

इस इकाई में हमने फिजिकलथेरेपी का अनुप्रयोग न्यूरोलोजिकल (तंत्रिका तंत्र) रोगों, अस्थियों एवं मांसपेशीय रोगों, स्पोर्ट्स खेलने वालों के चोटों/रोगों एवं छाती के रोगों (फेफड़ों के रोगों) में व्यायाम आदि सीखा।

लकवाग्रस्त रोगियों, कमजोर पड़े अंगों, चोट के बाद हड्डियों एवं मांसपेशियों सहित जोड़ों में दर्द/सूजन/अकड़न/जकड़न आदि रोगों के उपचार एवं रिहैबिलिटेशन (पुनर्वास)के बारे में जानकारी प्राप्त की। रिहैबिलिटेशन का अर्थ है पुनर्वास अर्थात जो अंग काम नहीं कर रहे उनको उपकरणों की सहायता से कार्य लेना ताकि दैनिक जीवन में व्यक्ति सामान्य कार्य कर सके।

स्पोर्ट्स करने वाले व्यक्तियों को प्रशिक्षण व विशिष्ट कसरतों की आवश्यकता होती है तथा खेलते समय चोट लगने पर उनका तुरन्त उपचार भी किया जाता है जिसमें कि फिजियोथेरेपिस्ट की अहम भूमिका होती है। इस प्रकार स्वास्थ्य प्राप्ति में फिजियोथेरेपी की महती भूमिका है।

इकाई 11.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

- CARDIO VASCULAR – PULMONARY ESSENTIALS BY MARILYN MOFFAT
- EXERCISE TESTING & PRESCRIPTION BY AMERICAN COLLEGE OF SPORTS MEDICINE STAFF
- WWW. APTA.ORG
- WORLD CONFEDERATION OF PHYSICAL THERAPY BY SHEPARD, KATHE RINE

- AMERICAN PHYSICAL THERAPY ASSOCIATION GUIDE TO PHYSICAL THERAPIST.
- PHYSICAL REHABILITATION, BY SUSAN SULLIVAN, T SCHMITZ
- PRINCIPALS OF EXERCISE THERAPY, BY DENA GARDINER
- PRACTICAL EXERCISE THERAPY, BY MARGARET HOLLIS, PHYL COOK
- THERAPEUTIC EXERCISE: FOUNDATION & TECHNIQUES, BY CAROLYN KISNER, LYN ALLEN COLBY
- CLAYTON'S ELECTROTHERAPY, BY FORSTER & PALASTANGA
- TIDY'S PHYSIOTHERAPY, BY STUART POTER
- CASH'S TEXTBOOK OF ORTHOPEDICS & RHEUMATOLOGY OF CARDIOVASCULAR & RESPIRATORY CONDITIONS
- NEUROLOGY OF GENERAL MEDICAL & SURGICAL CONDITIONS FOR PHYSIOTHERAPISTS
- DR. ANIL SONI- MEDICAL COLLEGE, KOTA
- DR. HARSH, M. RAJDEEP- PHYSIOTHERAPIST-KOTA
- DR. ANJANA SHARMA- OSTEOPATHY'S PANCHKARMA-KOTA
- DR. NITYANAND SHARMA-YOGA & AYURVEDA-KOTA

इकाई 11.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोगों के नाम लिखिए ?
2. न्यूरोलोजी पुनर्वास क्या होता है विस्तार से समझाइये एवं फिजियोथेरेपी की दूसरे उपयोगिता क्या है?
3. न्यूरोलोजिकल रोगों के नाम बताइये?
4. ओर्थोपेडिक (हड्डियों एवं मांसपेशियों) सिस्टम की फिजियोथेरेपी से किन रोगों का उपचार होता है एवं इनके अनुप्रयोगों के बारे में विस्तार से समझाइये?
5. घुटने गर्दन एवं कमर के दर्द हेतु फिजियोथेरेपी का महत्त्व समझाइये?
6. स्पोर्ट्स फिजिकल थेरेपी के बारे में लिखिये?
7. वक्ष (छाती) की फिजियोथेरेपी क्या है व यह किन रोगों में लाभदायी है?
8. चैस्ट फिजियोथेरेपी की विधियों के बारे में समझाइये?

इकाई-12 रोगों में फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोग -2

- 12.1 प्रस्तावना
- 12.2 उद्देश्य
- 12.3 बच्चों की फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोग
- 12.4 महिलाओं की फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोग
- 12.5 त्वचा (चमड़ी) के रोगों में फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोग
- 12.6 वजन कम करने हेतु फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोग
- 12.7 हाइड्रोथेरेपी के अनुप्रयोग
- 12.8 वृद्ध लोगों हेतु फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोग
- 12.9 सारांश
- 12.10 बोधात्मक प्रश्न
- 12.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

इकाई 12.1 प्रस्तावना

फिजियोथेरेपी का उपयोग हम बच्चों के शारीरिक विकास एवं रोगों के उपचार में, महिलाओं और वृद्ध मानवों के विभिन्न खास रोगों के उपचार में किया जाता है। वजन कम करने में फिजियोथेरेपी तकनीक को अहम भूमिका रहती है। इस तकनीक का उपयोग कुछ त्वचा (चमड़ी) के रोगों आदि में भी करते हैं। इस इकाई में हम बच्चों, महिलाओं, वृद्धों, त्वचा के रोगों में एवं पानी द्वारा फिजियोथेरेपी उपचार के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।

इकाई 12.2 उद्देश्य

इस इकाई में हम अध्ययन करेंगे कि

- ◆ बच्चों की फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोग
- ◆ महिलाओं की फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोग
- ◆ चमड़ी के रोगों में फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोग
- ◆ वजन घटाने/मोटापा कम करने हेतु फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोग
- ◆ हाइड्रोथेरेपी द्वारा रोग उपचार के अनुप्रयोग
- ◆ वृद्ध लोगो हेतु फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोग

इकाई 12.3 बच्चों में फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोग



बच्चे की फिजियोथेरेपी करते हुये

(1) **Pediatric physiotherapy** :- बच्चों में जन्म से लेकर 16 वर्ष तक शारीरिक, मानसिक, व्यावहारिक विकास होता है। नर्सरी, प्राथमिक स्कूल, सैकण्डरी एवं सीनियर सेकण्डरी स्कूल तक के बच्चों की विशेष देखभाल एवं दिशा निर्देशों की आवश्यकता रहती है।

बच्चों के फिजियोथेरेपिस्ट को बच्चों के शारीरिक विकास की जानकारी, बीमारियों एवं पुनर्वास विधियों की जानकारी होनी चाहियें।

Defect :- भौतिक शरीर में आघातज क्षति (Injury)

Disability:- क्षति के उपरान्त कार्य क्षमता का अभाव

Rehabilitation :- क्षति उपरान्त पुनर्वास

बच्चों से संबन्धित विभिन्न रोग निम्न है :-

डाउन सिड्रोम

सेरेब्रल पालसी

Muscular dystrophy

एनसीफेलाइटिस (दिमागी बुखार)

जुवेनाइल आर्थराइटिस (जोड़ों का दर्द)

कुपोषण

पोलियो

कैंसर

फ्रेक्चर

एक्सीडेंट

विकास अवरुद्धि

जीनू वेलगम (घुटनो का पास-पास आ जाना)

रिकेट्स (फक्क रोग)

Hyperflexia



जुवेनाइल आर्थराइटिस की फिजियोथेरेपी करते हुये
पीडियाट्रिक फिजियोथेरेपी तकनीकें :-

हाथ की कसरत या फिजियोथेरेपी आदि के लिए बॉल एवं खिलौनों का उपयोग।
पैरों की फिजियोथेरेपी के लिए आकर्षक खिलौनों चीजों आदि का उपयोग लेना।
बैठना, खड़े होना, चलना इत्यादि की फिजियोथेरेपी के लिये खिलौनों एवं अन्य उपकरणों की मदद लेना।



बच्चों की फिजियोथेरेपी में खिलौनों का प्रयोग

शरीर के समस्त मांसपेशियों एवं जोड़ों की कसरतें एवं GYM में काम आने वाले उपकरणों की मदद से फिजियोथेरेपी देना।

Baby chair, Baby seat इत्यादि से रोगग्रस्त बालकों का उपचार।

चोट लगने पर Brace, गर्म पट्टी इत्यादि की सहायता द्वारा उपचार।

बच्चों के व्यायाम आदि उपकरण की सहायता से रोग ग्रस्त अंग/जोड़/मांसपेशी की विशेष ट्रेनिंग।



खिलोनों की सहायता से बच्चे को व्यायाम हेतु प्रेरित करते हुए
स्पीच थेरेपी के उपकरण।
खेलकूदनुमा व्यायाम/फिजियोथेरेपी उपकरण।



बच्चों को खेल के साथ फिजियोथेरेपी देते हुए
बच्चों के वजन एवं शारीरिक माप (हाथ, पैर, छाती, पेर, कूल्हें, जांघें, पिण्डली) एवं
ऊँचाई की एवं वजन की मोनिटरिंग ।
कुपोषित बच्चों के लिये हल्के व्यायाम।
पीडियाट्रिक फिजियोथेरेपीय के सिस्टम :-
बोबाथ सिस्टम
पीटो सिस्टम
पोरटोज सिस्टम
डोमन डेलेकेटो सिस्टम

इकाई 12.4 महिलाओं हेतु फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोग



(2) Physiotherapy for women :- महिलाओं के लिए फिजियोथेरेपी में निम्न तथ्यों का ध्यान रखना जाता है। :-

शारीरिक (Posture)

मजबूती (Strength)

मोटापा (Obesity)

अन्यन्त दुर्बलता अन्य शारीरिक चोट आदि का ध्यान

गर्भावस्था के दौरान विशेष ध्यान

फिजियोथेरेपी की तकनीक महिलाओं में समान ही रहती है। परन्तु विशेष परिस्थितियों में विशेष ध्यान रखा जाता है। उदाहरणार्थ –

गर्भावस्था में

योनिशिथिलता में

गर्भाशय Prolapse में

सीजेरियन ऑपरेशन के बाद

मूत्राशय Incontinence

रजःस्राव के दिनों में (माहवारी)

Menopause (45 Years के बाद) Osteoporosis में



Osteoporosis के रोगी की फिजियोथेरेपी करते हुये

डिलीवरी के बाद कमर दर्द में

गर्भावस्था एवं अन्य अवस्थाओं (Menopause) आदि में विशिष्ट कसरत, व्यायाम, मालिश, एवं शरीर का लचीलापन बनाए रखने की कसरतें इत्यादि सिखाई जाती है।



गर्भावस्था के दौरान कमर दर्द एवं हाथों की फिजियोथेरेपी

गर्भावस्था के बाद बढ़े हुये मोटापे को कम करने के लिए विशिष्ट कैलोरी के उपयोगार्थ व्यायाम एवं शरीर की सुडोलता बनाए रखने के लिये विशेष व्यायाम की पद्धति इत्यादि इसमें सिखाई जाती है।



गर्भवती महिला की फिजियोथेरेपी

गर्भ प्रसव होने के बाद अन्दरूनी जननांगों में आए ढीलेपन को कम करने हेतु फिजियोथेरेपी सिखाई जाती है।

12.5 चर्म रोग हेतु फिजियोथेरेपी अनुप्रयोग

त्वचा रोग के लक्षण (Skin disease)

- ✦ त्वचा पर चकत्ते
- ✦ फोड़ा-फुंसी-उनमें पीव भरना
- ✦ खुजली
- ✦ दाद
- ✦ दाद से पानी बहना
- ✦ छाला-उसमें पानी भरना

✦ घुमोरियां।

ये लक्षण हाथ-पैर, कमर, सिर, मुंह आदि पर कहीं भी प्रकट हो सकते हैं।

त्वचा रोगों के कारण :-

1. शरीर के अन्दर विजातीय द्रव्य के संचित होने से, कब्ज बने रहने से शरीर से पसीना न निकल पाने से तथा गंदगी का जीवन बिताने से यह रोग पनपता है।
2. अधिक मीठा व खटाई खाना, ज्यादा आम खाना।
3. नाइलोन के वस्त्र व प्लास्टिक के जूते पहनना।
4. दवाइयों की अधिकता से एलर्जी के रूप में प्रतिक्रिया होने से।
5. संक्रामक रोग – जीवाणु, फफूंद से होते हैं जो उत्तेजक पदार्थों, रासायनिक पदार्थों, साबुन की फैक्ट्री में प्रयोग होने वाले रसायनों तथा क्रीम-पाउडर आदि प्रसाधन-सामग्री से त्वचा के रोग हो जाते हैं।



त्वचा नाखून इत्यादि का अन्य शरीरिक अंगों से क्रियात्मक जुड़ाव रहता है। इलेक्ट्रोथेरेपी की मदद से निम्न रोगों का इलाज त्वचा के रोगों में किया जाता है :-

वयस्कों में कील मुहांसे

बालों का झड़ना

वेरिकोज वेन्स (पांनों में)

किसी भी जगह का दर्द (Dermatome Tingling Semsation)

घाव अल्सर

चमड़ी पर सफेद दाग होना (Vitiligo)

त्वचा रोग चिकित्सा :- इन स्थानों पर Electric current/electrotherapy एवं मालिश, वाईब्रेटर कम्पन्न या लेजर एवं अल्ट्रासाउण्ड द्वारा उपचार किया जाता है। जिससे की चमड़ी में रक्त संचार एवं लिम्फनोड्स (लसिका तंत्र) में संचार बढ़ता है परिणामस्वरूप वह रोग ठीक होने लगता है।



त्वचा रोगों में इलेक्ट्रोथेरेपी उपकरण

सावधानियाँ एवं अन्य उपचार :-

- ✚ कब्ज बिलकुल न रहने दें।
- ✚ नाइलोन के वस्त्र, जुराबें व प्लास्टिक की चप्पल आदि न पहनें। सूती वस्त्र ही उपयुक्त है।
- ✚ शरीर की बाहरी स्वच्छता का ध्यान रखें। तौलिये से शरीर को स्नान के बाद खूब रगड़ें व पोंछें।
- ✚ उगते हुए सूर्य के समय सिर ढक कर नंगे बदन सूर्य-स्नान करें। उस समय ढीले व कम वस्त्र ही पहनें।
- ✚ आम के मौसम में आम खाने के बाद ठंडा दूध या पानी अवश्य पीना चाहिए।
- ✚ गुड़ आदि मिठाई व खटाई का परहेज अवश्य करें।
- ✚ कुछ दिन दूध और गाजर का सेवन करें तो पुराने दाद, खुजली व एक्जिमा से पीछा छुड़ाया जा सकता है। गाजर चर्म रोग की अचूक दवा है।

12.6 मोटापा :-

शरीर के वजन में अस्वाभाविक ढंग से बढ़ोत्तरी व चर्बी का बढ़ना मोटापा कहलाता है। मोटापे से शरीर कुरूप, बेडौल और भारी हो जाता है।

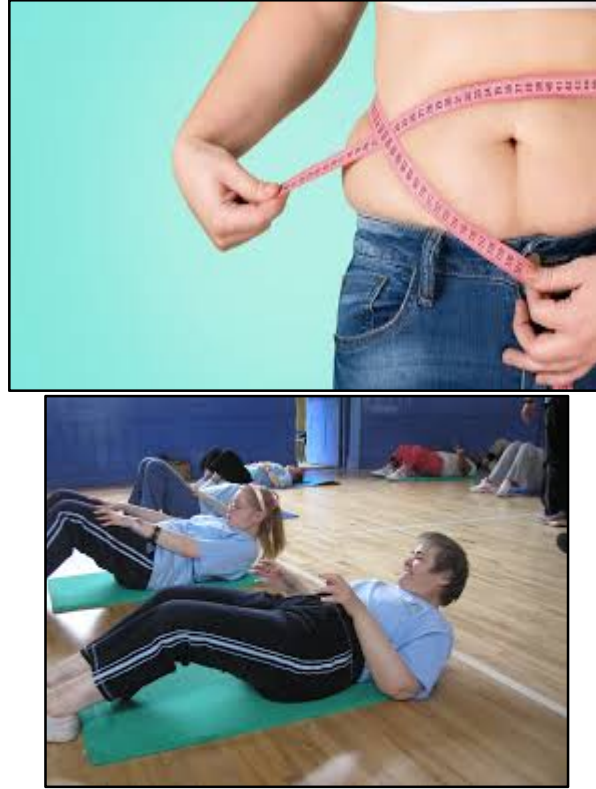
मोटापे के हानिकारक परिणाम :-

मोटापे के कारण हृदय पर दबाव सा बना रहता है। श्वास गति बढ़ जाती है। कार्यक्षमता घट जाती है। कॉलेस्ट्रॉल नाड़ियों में जम जाता है। मोटापे के परिणामस्वरूप गैस, कब्ज, मधुमेह, उच्च रक्तचाप, जोड़ों में दर्द, अपेंडिक्स, हृदय, रोग, दमा, गुर्दे व रीढ़ आदि के दर्दों से मनुष्य पीड़ित हो जाता है।

मोटापे के कारण :-

1. कार्बोहाइड्रेट (रोटी, चावल, आलू आदि) का अधिक मात्रा में खाना, तली-भुनी और चिकनी (पूड़ी, पकौड़ी, चाट, समोसे, परांठे आदि) चीजें अधिक खाना, पाचन शक्ति से अधिक भोजन करना, बिना भूख लगे और बार-बार भोजन करना आदि।
2. थायराइड ग्रंथि जिसका कार्य हमारे शरीर के चयापचय (मेटाबोलिज्म) में सहायता करना है, उसका ठीक तरह से कार्य न करना।

3. उचित व्यायाम न करना, थोड़ा चलने से भी कतराना, अधिक समय तक बैठे रहने से भोजन नहीं पचता तब चर्बी बढ़ने लगती है।
4. आवश्यकता से अधिक विश्राम करना या सोना भी मोटापे का एक कारण है।



मोटापे की अन्य चिकित्सा :-

- ✦ कुंजल, एनिमा, नौलि तथा कपालभाति की शुद्धि-क्रियाओं का नियमित अभ्यास।
- ✦ सभी प्रकार के आसन उपयोगी हैं।
- ✦ भस्त्रिका प्राणायाम व बाह्य कुंभक के अभ्यास से पेट शीघ्र ही अन्दर चला जाता है।
- ✦ आहार की दृष्टि से परिवर्तन होना बड़े महत्व का है। प्रातः नींबू-पानी, नाश्ते में अंकुरित अन्न (चना, मूंग, मोठ) ले सकते हैं या सब्जियों का सूप/गाजर या मूली का रस।

भोजन क्षारीय और तरल हो। क्षारीय आहार में हरी सब्जियां, खासकर पत्तेदार-पालक, चौलाई, बथुआ, तुरई, टिण्डा आदि। सभी प्रकार के रसदार फल संतरा, अनानास, अनार, तरबूज, खरबूजा आदि।

दिन में कॉफी, चाय आदि न लें। केवल दो बार भोजन करें। एक बार मौसम का फल लें। केला, चीकू, आलू, चावल, शकरकंद व कंदमूल में कार्बोहाइड्रेट अधिक होता है। अतः इनका सेवन न करें। गर्म मसाले, नमक व चीनी कम ही लें। चर्बीयुक्त पदार्थों को छोड़ दें। अतिशीतल व अति गर्म पदार्थों का सेवन न करें। शाम का भोजन सूर्यास्त से पहले करना। शाम के भोजन के बाद दो-तीन किलोमीटर तक घूमें यह बहुत उपयोगी हैं।

वजन कम करने हेतु फिजियोथेरेपी के अनुप्रयोग

Weight loss exercises :- मोटापा आजकल एक समस्या महिलाओं, पुरुषों, बालकों एवं बालिकाओं में बन चुका है। कम परिश्रम एवं अधिक खाने की जीवनशैली की वजह से मोटापे की समस्या घर-घर में हो रही है।

3500 कैलोरी = 450 ग्राम वजन

भोजन में 500 कैलोरी कम करके 7 दिन तक में 450 ग्राम वजन कम किया जा सकता है। फिजियोथेरेपिस्ट को व्यायाम के साथ मरीज की डाईट/भोजन की भी सामान्य जानकारी होना आवश्यक है। मोटापा कम करने की फिजियोथेरेपी में निम्न तथ्य आते हैं :-

एरोबिक व्यायाम :- संगीत की धुन पर सांस लेने की गति को नियंत्रित करते हुए नृत्य करने जैसा व्यायाम ताकि ज्यादा थकान भी नहीं हो एवं कैलोरी भी कम हो । इसके अलावा एरोबिक्स में निम्न व्यायाम आते हैं :-



एरोबिक व्यायाम

- साइकलिंग = 500 – 1000 CAL/प्रति घण्टा खपत ।
- तैरना = 800 CAL/प्रति घण्टा खपत ।
- Step Aerobics = GYM में 8000 CAL/प्रति घण्टा खपत ।
- रैकेट बॉल व्यायाम = 8000 CAL/प्रति घण्टा खपत ।
- Jumping - रस्सी कूदना = 700 CAL/प्रति घण्टा खपत ।
- Dancing = 600 CAL/प्रति घण्टा खपत ।
- JOGGING = 550 CAL/प्रति घण्टा खपत ।



JOGGING

→ Walking – 360 CAL/प्रति घण्टा खपत ।

इसके अलावा Strength (शरीर मजबूती करण) हेतु व्यायाम भी निम्नानुसार जरूरी है ।

- उठक-बैठक
- दण्ड बैठक
- अन्य सामान्य शारिरिक व्यायाम
- Mountain Climbing
- शरीर को मोड़ने के व्यायाम
- पैर उपर उठा कर रखना
- हलासन
- वज्रासन
- नाक को घुटने के स्पर्श करने के व्यायाम
- कमर एवं कूल्हें की चर्बी कम करने के व्यायाम



जांघो का मोटापा कम करने के लिए इलेक्ट्रो थेरेपी

इस तरह शरीर के विभिन्न अंगों एवं जोड़ों के व्यायाम करने वं भोजन नियंत्रित रखने से मोटापा कम होता है।

कुछ अन्य व्यायाम निम्नलिखित है:-

- सीधा खड़े होकर हाथों से पैरों के पंजों से छूना
- चक्रासननुमा व्यायाम
- गोल थाली (धुरी वाली) पर खड़े होकर कमर के हिस्सों को Clock Wise Anti Clock wise घूमने के व्यायाम
- पैर चौड़े करके बारी-बार से विपरीत हाथ पैर स्पर्श करना
- सीधा लेटकर दोनों पैर उपर उठाकर रखना
- कमर को Fix रखते हुये शरीर को आगे झुकाना , पीछे झुकाना, दाएं-बाएं झुकाना इत्यादि व्यायाम।

इकाई 12.7 हाइड्रोथेरेपी के अनुप्रयोग

Hydrotherapy Exercises :-

इसमें पानी के अन्दर तैरना, पानी की सतह पर तैरते हुए हाथ पैरों की कसरत, पानी में चलना (Walking) इत्यादि आते हैं।

पानी के अन्दर रह कर व्यायाम करके ज्यादा थकान और तनाव नहीं होता एवं दर्द भी कम होता है। साथ ही शरीर का लचीलापन मेंटेन रखने एवं रक्त संचरण सही रखने में मदद मिलती है।

यह स्पोर्ट में घायल (चोटिल) हुये रोगियों के लिए बहुत लाभदायक होती है।

पानी में रहने से पसीना भी निकलता है एवं अन्य उत्सर्जी विजातीय पदार्थ शरीर से बाहर निकलते हैं तो भी फायदा होता है।



हाइड्रोथेरेपी के व्यायाम

- लाभ :-**
- दर्द कम होना
 - Joint में Mobility ठीक होना
 - मांसपेशीय / एंठन जकडन कम होना
 - शरीर सन्तुलन की मांसपेशियाँ मजबूत होना
 - शरीर का Co-ordination सही होना
 - आत्मविश्वास बढ़ना
 - रक्त संचरण में लाभ होना

Hydrotherapy द्वारा पानी में रहकर Cardio work out भी किया जाता है। जिससे हृदय मजबूत बनता है।



कमर की हाइड्रोथेरेपी

Warm up Exercise :- भारी व्यायाम से पहलें 5—10 मिनट पानी में रहकर हल्का—हल्का व्यायाम करने से शरीर warm-up (व्यायाम हेतु तैयार) हो जाता है। गर्म एवं ठण्डे पानी से हाइड्रोथेरेपी की जा सकती है। गर्म पानी से — शरीर/जोड़ों की सूजन/जकडन/ऐंठन Sprain इत्यादि में आराम मिलता है।



कंधों की हाइड्रोथेरेपी

- दर्द में आराम मिलता है।
- शारीरिक थकान मिटती है।
- शरीर में सब जगह रक्त संचार सुचारु होता है।
- ठण्डे पानी से सूजन, इन्फेक्शन इत्यादि कम होते हैं।
- शरीर का तापमान ठीक रहता है।
- बुखार इत्यादि ठीक होते हैं।

इकाई 12.8 वृद्ध लोगों हेतु फिजियोथेरेपी अनुप्रयोग

वृद्ध लोगों हेतु फिजियोथेरेपी (Physiotherapy for old people) :-



जिरियाट्रिक्स उपकरणों द्वारा व्यायाम 1



जिरियाट्रिक्स उपकरणों द्वारा व्यायाम 2



जिरियाट्रिक्स उपकरणों द्वारा व्यायाम 3



जिरियाट्रिक्स उपकरणों द्वारा व्यायाम 4

जीरियाट्रिक्स :- 60 साल के बाद बुढ़ापे एवं बुढ़ापे में होने वाली सामान्य समस्याओं एवं शरीरिक परिवर्तनों एवं रोगों के अध्ययन को “जिरीयाट्रिक्स” विज्ञान कहते हैं। बुढ़ापे में निम्न बदलाव आते हैं। :-

- मांसपेशियाँ कमजोर हो जाती हैं।
- हड्डिया कमजोर हो जाती हैं।
- शरीर के चलतेँ फिरतेँ समय बेलेन्स कम बनता है।
- चलने में दिक्कत होती है।
- खाना पचाने में दिक्कत होती है।
- Joints कमजोर हो जाते हैं।
- थोड़ा सा हल्के से गिरने पर भी फैंक्चर हो जाता है।
- (Osteoporosis)
- कमर दर्द हो जाता है।
- हृदय रोग, उच्च रक्तचाप इत्यादि हो जाता है।
- पार्किंसन्स की बीमारी।
- अनिन्द्रा।
- शरीर में कम्पन।
- कान सेँ ऊँचा सुनना (बहरापन)।
- वाचाल होना, एक बात को बार—बार कहना आदि।
- एल्जाइमर (भूलने की बीमारी)।
- खून की कमी (एनीमिया)।
- विटामिन्स की कमी।
- आंख से कम दिखता है।

इसलिए बुढ़ापे में Physiotherapy को बहुत सावधानी से देनी चाहिए।

व्यायाम भी प्रोढ़ावस्थाजन्य रूची कर होनी चाहिये ।

Physiotherapy के साथ भोजन (Diet) का भी ध्यान रखना पड़ता है। हल्का सुपाच्य (सुपथ्य) भोजन लेना चाहिये ।

जो व्यायाम हृदय एवं बी.पी. पर गलत प्रभाव डालते हैं उन्हें नहीं करवाना चाहिए ।

हड्डियाँ एवं मांसपेशियाँ मजबूत रखने के सामान्य आराम दायक व्यायाम उपकरणों की सहायता से करवाने चाहिए ।

चलने फिरने में Walker, छड़ी एवं अन्य Brace की सहायता से शरीर का Balance बनाते हुए चलना सिखाना चाहिए ।

मूत्राशय एवं मलाशय को मजबूत करने की कसरत / तरीके की ट्रेनिंग देनी चाहियें ।

12.9 सारांश

इस इकाई में हमने बच्चों, महिलाओं, वृद्धजनों के विभिन्न रोगों एवं उनमें फिजियो थेरेपी की उपयोगिता के बारे में अध्ययन किया ।

वजन कम करने हेतु भी फिजिकल थेरेपी की अहम भूमिका होती है क्योंकि मोटापा आजकल आम समस्या होती जा रही है। हाइड्रोथेरेपी यानि पानी के अन्दर फिजिकल थेरेपी देने के बारे में तथ्यों का अवलोकन किया। दबच्चों व वृद्धजनों को फिजिकल थेरेपी देना बहुत मुश्किल होता है, फिर भी फिजिकल थेरेपी विज्ञान में आसानी से उनके रोगों का उपचार किया जा सकता है।

इकाई 12.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

- फिजिकल थेरेपी फोर चिल्ड्रन – सूजान के. केम्पबेल, रोबर्ट-जे. पेलिसानो
- नेशनल फिजिकल थेरेपी एक्जाम – KAPLAN
- EFFECTIVE DOCUMENTATION FOR PHYSICAL THERAPY-ERIC SHAMUS & DEBRA STERN
- GERIATRIC PHYSICAL THERAPY
- ANDREW A. GUCCIONE 3rd EDITION
- PEDIATRIC PHYSICAL THERAPY APTA
- PHYSICAL REHABILITATION BY SUSAN B., 'O' SULLIVAN
- PHYSIOTHERAPY IN OBSTETRICS & GYNAECOLOGY BY MANTLE, HASLAN, BARTON
- DIFFERENTIAL DIAGNOSIS IN PHYSICAL THERAPY
- PHYSIOTHERAPY EXERCISES BY CHANDRA SHEKHAR BELLUDI
- WWW.PHYSIOTHERAPY JOURNAL.COM
- PHYSIO THERAPY REFERENCE BOOK SCERT, KERALA-2016
- PHYSICAL REHABILITATION, BY SUSAN SULLIVAN, T SCHMITZ

- PRINCIPALS OF EXERCISE THERAPY, BY DENA GARDINER
- PRACTICAL EXERCISE THERAPY, BY MARGARET HOLLIS, PHYL COOK
- THERAPEUTIC EXERCISE: FOUNDATION & TECHNIQUES, BY CAROLYN KISNER, LYN ALLEN COLBY
- CLAYTON'S ELECTROTHERAPY, BY FORSTER & PALASTANGA
- TIDYS PHYSIOTHERAPY, BY STUART POTER
- CASH'S TEXTBOOK OF ORTHOPEDICS & RHEUMATOLOGY OF CARDIOVASCULAR & RESPIRATORY CONDITIONS
- NEUROLOGY OF GENERAL MEDICAL & SURGICAL CONDITIONS FOR PHYSIOTHERAPISTS
- DR. ANIL SONI - MEDICAL COLLEGE, KOTA
- DR. HARSH, M.RAJDEEP - PHYSIOTHEPIST-KOTA
- DR. ANJANA SHARMA - OESTOPATH & PANCHKARMA-KOTA
- DR. NITYANAND SHARMA - YOGA& AYURVEDA-KOTA (RAJ.)

इकाई 12.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. बच्चों की फिजिकल थेरेपी की क्या आवश्यकता है एवं बच्चों के सामान्य रोगों एवं उपचार में फिजिकल थेरेपी की भूमिका बताइये ?
2. पिडियाट्रिक फिजियोथेरेपी के सिस्टम के नाम लिखिये ?
3. महिलाओं में किन रोगों में फिजियोथेरेपी की जा सकती है एवं उपयोगिता समझाये ?
4. चर्म रोगों में फिजिकल थेरेपी कैसे दी जाती है ?
5. वजन कम करने हेतु फिजिकल थेरेपी के बारे में विस्तार से निबंध लिखिये ?
6. हाइड्रोथेरेपी के बारे में बताइये। इसकी क्या उपयोगिता है ?
7. पिडियाट्रिक्स/वृद्ध जनों की फिजियोथेरेपी की क्या आवश्यकता है व यह कैसे दी जाती है ?